CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust

॥ श्रीः॥

श्रीकेदारभट्टविरचितः

वृत्तरत्नाकरः

VRITTA-RATNĀKARAM

नारायणी-तारा'-संस्कृतहिन्दीव्याख्योपेतः

(छात्रोपयोगिसंस्कृत-हिन्दीभूमिकासमलङ्कृतः)

हिन्दीव्याख्याकारः

पं० सत्यनारायणशास्त्री खण्डूड़ी

भारतीय विद्या प्रकाशन

वाराणसी दिल्ली

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Dr. Ruvvukumar

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः॥

श्रीकेदारभट्टविरचितः

वृत्तरत्नाकरः

VRITTA-RATNĀKARAM

'नारायणी-तारा'-संस्कृतहिन्दीव्याख्योपेतः

(छात्रोपयोगिसंस्कृत-हिन्दीभूमिकासमलङ्कृतः)

आदर्श प्रति
B. V. P.

हिन्दीव्याख्याकारः

पं० सत्यनारायणशास्त्री खण्डूड़ी

भारतीय विद्या प्रकाशन

वाराणसी दिल्ली

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

प्रकाशक:

© भारतीय विद्या प्रकाशन

(1) 1, यू० बी० जवाहरनगर बंग्लोरोड, दिल्ली-110007
फोन : (011) 3971570

(2) पो० बा० नं० 1108 कचौड़ीगली, वाराणसी-221001
फोन : (0542) 392376

प्रथम संस्करण-2000

मूल्य : 50/-

अक्षर-संयोजक:-
शुभम् कम्प्यूटर
मीरघाट, वाराणसी
फोन : 321717

मुद्रक:
जैन अमर प्रिंटिंग एजेन्सी
दिल्ली

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भूमिका

शिक्षेत्यादि श्रुतेरङ्गं शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषम्।
छन्दः पादौ तु वेदस्य

प्राचीन काल में छन्दोविचिति नाम से अभिहित छन्दःशास्त्र का संस्कृत शास्त्रों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। जिस शास्त्र या ग्रन्थ में विशेषतया छन्दों का चयन या संग्रह किया गया हो, उसे छन्दोविचिति कहते हैं। छन्दोविचिति के अतिरिक्त छन्दोऽनुशासन, छन्दोविवृत्ति, छन्दोमान इत्यादि अभिधान भी इस शास्त्र के प्राप्त होते हैं। इस शास्त्र के प्रणेता आचार्य पिङ्गल के नाम पर इसे पिङ्गलशास्त्र भी कहा जाता है।

वैदिक तथा लौकिक दोनों शास्त्रों के सम्यक् उच्चारण एवं अर्थज्ञान की दृष्टि से छन्दःशास्त्र का ज्ञान नितान्त आवश्यक है। आर्षेय ब्राह्मण तथा तदनुसारी सर्वानुक्रमणी के अनुसार जो व्यक्ति मन्त्रों के छन्द, ऋषि, देवता तथा ब्राह्मणं का ज्ञान किये बिना उन मन्त्रों से यज्ञ कराता है अथवा पढ़ाता है वह गर्त में पतित होता है, उसका या उसके द्वारा कराया गया सम्पूर्ण अनुष्ठान व्यर्थ होता है। दुर्ग की निरुक्त टीका तथा सर्वानुक्रमणी के आरम्भ में कहा भी गया है कि–

यो ह वा अविदितार्षेयच्छन्दोदैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति वाध्यापयति वा स्थाणुं वर्च्छति, गर्तं वा प्रपद्यते, प्र वा मीयते, पापीयान् भवति। यातया मान्यस्य च्छन्दांसि भवन्ति।

वेदों के अर्थज्ञान के लिए छन्दःशास्त्र की सर्वाधिक उपयोगिता है। वेदपुरुष का पादस्थानीय छन्द को माना गया है। जिस प्रकार मानव-जीवन में पैरों के बिना पुरुष की गति और स्थिति सर्वथा असम्भव है, उसी प्रकार छन्दःशास्त्र-ज्ञान के बिना वेदों के ज्ञान की कल्पना ही असम्भव है। यतः समस्त वेदवाङ्मय छन्दमय ही हैं, अतः वेदों के ज्ञान के लिए उसके अङ्गभूत छन्द का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है। इसीलिए पाणिनीय शिक्षा में कहा भी गया है:–छन्दः पादौ तु वेदस्य।

छन्दः शास्त्र का उद्भव

यह स्पष्ट है कि छन्दों का अस्तित्व सर्वप्राचीन वैदिक युग से ही विद्यमान था। वैदिक संहिताओं में मुख्य छन्दों का नाम, उनके देवता, तन्निष्पादक वर्णसंख्या स्पष्टतः उल्लिखित हैं। वैदिक छन्दों में गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप् तथा जगती–ये सात मुख्य हैं। इसीलिए इन्हें सप्तच्छन्दांसि कहा जाता है। इस सन्दर्भ में छन्दों की अक्षर-संख्या को निर्दिष्ट करने वाला अथर्ववेद का निम्न कथन द्रष्टव्य है–

सप्तच्छन्दांसि चतुरुत्तराण्यन्योन्यस्मिन्नध्यर्पितानि॥ ८-१-१६॥

छन्दःशास्त्र के उद्भव तथा इसकी परम्परा के सम्बन्ध में कोई समय-सीमा निर्धारण करना तो नितान्त असम्भव है; किन्तु इस शास्त्र का अवगाहन करने पर अनेक प्राचीन आचार्यों के नाम हमें उपलब्ध होते हैं। युधिष्ठिर मीमांसककृत वैदिक-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

छन्दोमीमांसा में उल्लिखित आचार्य यादवप्रकाशकृत पिङ्गलसूत्र-भाष्य के अन्तिम श्लोक से छन्दःशास्त्र की परम्परा का ज्ञान प्राप्त होता है, उसके अनुसार छन्दःशास्त्र के प्रथम प्रवर्तक स्वयं भगवान् शंकर थे, तत्पश्चात् क्रमशः उनसे वृहस्पति, वृहस्पति से दुश्च्यवन (इन्द्र), दुश्च्यवन से शुक्राचार्य, उनसे माण्डव्य, उनसे सैतव, उनसे यास्क और यास्क से आचार्य पिङ्गल ने छन्दःशास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया।

छन्दोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे गुरूणां गुरु-
स्तस्माद् दुश्च्यवनस्ततोऽसुरगुरुमण्डव्यनामा ततः।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिङ्गल-
स्तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मादाद्यैः क्रमात्॥

छन्दःशास्त्र में मान्य इस परम्परा के आधार पर हम पिङ्गलसूत्र में निर्दिष्ट आचार्यों के पौर्वापर्य क्रम का निर्धारण कर सकते हैं।

छन्द के प्रकार

छन्द दो प्रकार के होते हैं–१. वैदिक तथा २. लौकिक। वेदमन्त्रों में प्रयुक्त छन्दों को वैदिक छन्द कहा जाता है तथा रामायण, महाभारत आदि लौकिक महाकाव्यों, काव्यों में प्रयुक्त छन्दों को लौकिक छन्द के नाम से जाना जाता है। यद्यपि लौकिक छन्दों का उद्भव तथा विकास वैदिक छन्दों से ही हुआ है, तथापि दोनों की पद्धति में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है। वैदिक छन्द पूर्णतः स्वरसङ्गीत पर आधारित होते हैं; उनमें अक्षरगणना ही प्रधान होती है। अक्षरों के स्वरूप–लघु या गुरु–से उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता; लेकिन लौकिक छन्द वर्णसङ्गीत पर आधारित हैं। इनमें वर्णों के उच्चारण–प्रकार का सर्वाधिक महत्त्व है। लौकिक छन्दों में प्रयुक्त वर्णों को लघु–गुरु के आधार पर ही व्यवस्थित किया जाता है और इसी व्यवस्था के कारण ही इसमें सुश्राव्यता उत्पन्न होती है और इसी सुश्राव्यता को प्रधान तत्त्व निर्धारित कर लौकिक छन्दों की रचना की गई है। इनमें लघु–गुरु का प्रयोग इतना सुव्यवस्थित, सुसंयत और सुसंगत होता है कि उसके श्रवण मात्र से ही अलौकिक माधुर्य की अनुभूति होती है। जबकि वैदिक छन्दों में इसका सर्वथा अभाव रहता है, उसमें वर्णों के संख्या की ही प्रधानता मानी गयी है।

यद्यपि लौकिक छन्दों के सन्दर्भ में वर्तमान में प्रामाणिक सर्वप्राचीन शास्त्र आचार्य पिङ्गल का छन्द अष्टाध्यायी ही है, तथापि उनके द्वारा अपने शास्त्र में विभिन्न पूर्ववर्ती आचार्यों का उल्लेख किये जाने से कथमपि यह नहीं कहा जा सकता कि आचार्य पिङ्गल ही लौकिक छन्दःशास्त्र के प्रवर्तक हैं। स्पष्ट है कि आचार्य पिङ्गल के बहुत पूर्व से ही लौकिक छन्दों की स्थिति विद्यमान थी, परन्तु उसका स्वरूप सुव्यवस्थित नहीं था। आचार्य पिङ्गल ने ही इस शास्त्र को नितान्त सुव्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया। अतः यह कहा जा सकता है कि वर्तमान में उपलब्ध लौकिक छन्द के ग्रन्थों में आचार्य पिङ्गलप्रणीत ग्रन्थ छन्द अष्टाध्यायी ही सर्वप्राचीन है, जो सर्वमान्य एवं नितान्त प्रामाणिक लौकिक छन्दःशास्त्र है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

पिङ्गल-परवर्ती प्रमुख आचार्य और उनके ग्रन्थ

पिङ्गलप्रणीत सूत्रों के सर्वाधिक लोकप्रिय वृत्तिकार भट्ट हलायुध हैं। इनकी वृत्ति का नाम मृतसञ्जीवनी है। हलायुध राष्ट्रकूट वंश के प्रख्यात नरेश कृष्णराज और खुडिगदेव के समकालीन थे, जिनका समय ९४५ से ९७१ ई. के मध्य का माना जाता है। इसके पश्चात् हलायुध ने मुञ्जराज का आश्रय ग्रहण किया, जो कि विद्वानों का आश्रयदाता था। इसका समय १०वीं शताब्दी का अन्तिम चरण माना जाता है।

आचार्य भट्ट हलायुधकृत मृतसञ्जीवनी वृत्ति पिङ्गल-सूत्रों पर अत्यन्त लोकप्रिय एवं सर्वप्राचीन व्याख्या है, जो पिङ्गल-सूत्रों को स्पष्ट करने के लिए परमोपयोगी है। भट्ट हलायुध के पश्चात् छन्दःशास्त्र के आचार्यों में सर्वप्रथम नाम आचार्य यादवप्रकाश का आता है। ये विशिष्टाद्वैत वेदान्त के स्वनामधन्य आचार्य रामानुजाचार्य के गुरु थे। रामानुजाचार्य का काल १०१७ ई. से ११३७ ई. तक माना जाता है। अतः आचार्य यादवप्रकाश का काल दशवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर ग्यारहवीं शती के पूर्वार्ध तक का मानना ही समीचीन प्रतीत होता है। इन्होंने पिङ्गलसूत्रों पर सर्वाधिक प्रामाणिक एवं पाण्डित्यपूर्ण भाष्य की रचना की थी; जिसका नाम है–**पिङ्गलनागछन्दोविचितिभाष्य**।

यादवप्रकाशकृत भाष्य में वैदिक छन्दों का भी सांगोपांग विवेचन किया गया है। इस भाष्य का उपयोग उनके पश्चाद्वर्ती भास्करराय ने अपने छन्दोविषयक ग्रन्थों में किया है। लौकिक छन्दों के वर्णन-क्रम में ये आचार्य पिङ्गल के पूरक सिद्ध होते हैं। लौकिक छन्दों के उदाहरणार्थ इन्होंने स्वरचित श्लोकों को ही प्रयुक्त किया है।

यादवप्रकाश के पश्चात् पिङ्गलसूत्रों के तृतीय व्याख्याकार के रूप में भास्करराय का नाम आता है। ये अलौकिक प्रतिभा के धनी थे और आगम के साथ-साथ छन्दःशास्त्र पर भी इनका पूर्ण अधिकार था। महाराष्ट्रीय ब्राह्मण भास्करराय काशी में निवास करते थे। इनका समय १६८० ई. से १७४५ ई. के मध्य का माना जाता है। छन्दःशास्त्रविषयक इनके चार ग्रन्थ प्राप्त होते हैं, जो क्रमशः **छन्दःकौस्तुभ, मृतसञ्जीवनी** (वृत्तरत्नाकर की व्याख्या), **वृत्तचन्द्रोदय** और **भाष्यराज** (पिङ्गलसूत्र की व्याख्या) हैं।

नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरत ने भी नाट्यशास्त्र के १५वें एवं १६वें अध्याय में छन्दःशास्त्र का पर्याप्त वर्णन किया है। १५वें अध्याय में छन्दों का सामान्यतया विवेचन किया गया है और १६वें अध्याय में उनके लक्षण तथा उदाहरण दिये गये हैं। भरत छन्दःशास्त्र में पिङ्गल द्वारा प्रतिष्ठापित अष्टगणों से पूर्णतया परिचित थे तथा उनके नाम भी उन्होंने पिङ्गल-सम्मत ही माना है, परन्तु छन्दों का लक्षण बताते समय भरत ने लघु-गुरु पद्धति का ही आश्रय ग्रहण किया है। इन्होंने अपने नाट्यशास्त्र में यद्यपि पिङ्गल का नाम निर्दिष्ट नहीं किया है, तथापि १६वें अध्याय के अन्त में इस शास्त्र को **छन्दोविचिति** नाम से अभिहित अवश्य किया है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

वराहमिहिर ने अपनी बृहत्संहिता नामक ग्रन्थ के १०३रे अध्याय में अनेक छन्दों को निर्दिष्ट किया है। वराहमिहिर का काल छठी शती माना जाता है। इस अध्याय में संकेतित छन्दों का विस्तार से विवेचन इस ग्रन्थ के वृत्तिकार **भट्टोत्पल** ने किया है। भट्टोत्पल की व्याख्या में मात्रिक तथा वर्णवृत्तों को मिलाकर लगभग साठ छन्दों के लक्षण संगृहीत हैं। भट्टोत्पल का समय नवीं शताब्दी है।

जानाश्रयी छन्दोविचिति–जनाश्रयकृत आचार्य पिङ्गल की परम्परा का सूत्ररूप में निबद्ध यह एक अनुपम छन्दोग्रन्थ है, जो छः अध्यायों में विभक्त है। इस ग्रन्थ का निर्माणकाल ५८० से ६२० ई. के मध्य का माना जाता है। इसके वृत्तिकार ने कालिदास, भारवि, अश्वघोष आदि के श्लोकों को उदाहरण के रूप में उद्धृत किया है। यद्यपि यह ग्रन्थ पिङ्गल की ही परम्परा में आता है तथापि पिङ्गल की मान्यता से इसमें पर्याप्त भेद भी दृष्टिगोचर होता है। पिङ्गल ने जहाँ आठ गणों को मान्यता प्रदान की है, वहीं जनाश्रय ने १८ गणों को मान्य किया है। वैदिक छन्दों का इसमें कोई निर्देश नहीं है।

जनाश्रय के ही समकालीन अथवा किञ्चित् पश्चाद्वर्ती छन्दःशास्त्र के प्रख्यात आचार्य **जयदेव** का नाम आता है, जिनका **जयदेवच्छन्दः** नामक ग्रन्थ है। इनका समय छठी या सातवीं शताब्दी मानना इसलिए भी उचित जान पड़ता है क्योंकि नौवीं शती के बाद के हलायुध, अभिनवगुप्त आदि ने इनके मत का अपने-अपने शास्त्रों में खण्डन और उल्लेख किया है। १२वीं शताब्दी के वृत्तरत्नाकर के टीकाकार सुल्हण ने भी श्वेतपट के नाम से जयदेव के मतों का खण्डन किया है। भट्ट हलायुध तथा सुल्हण के द्वारा **श्वेतपट** शब्द से इनका निर्देश किये जाने के कारण यह प्रतीत होता है कि ये जैनधर्मावलम्बी थे।

जयदेवकृत ग्रन्थ आठ अध्यायों में विभक्त है। इसके प्रथम तीन अध्यायों में सूत्ररूप में वैदिक छन्दों का विवरण है और बाद के पाँच अध्यायों में वृत्तिशैली में लौकिक छन्दों का विवेचन किया गया है। जयदेव की यह वृत्तिशैली हीं बाद में छन्दोग्रन्थों के लिए अनुकरणीय बनी और छन्दों के लक्षण-उदाहरण एक ही श्लोक में दिये जाने लगे। इनके पश्चात् ही पृथक् उदाहरण देने की परम्परा का त्याग कर दिया गया।

जयदेव के बाद छन्दःशास्त्र के प्रख्यात आचार्य के रूप में **जयकीर्ति** का नाम सामने आता है, जो कि जैनधर्मावलम्बी कन्नड़वासी थे। इनके ग्रन्थ का नाम **छन्दोऽनुशासन** है, जो आठ अध्यायों में विभक्त है। इसके सप्तम अध्याय में कन्नड़ भाषा के छन्दों का भी वर्णन है। इनका समय १०००ई. के आस-पास का माना जाना समीचीन प्रतीत होता है।

जयकीर्तिकृत छन्दोऽनुशासन में मात्र लौकिक छन्दों का ही विवेचन किया गया है, वैदिक छन्दों का नहीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनके समय तक आते-आते

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सामान्यतया पण्डितों में वैदिक छन्दों के प्रति उपेक्षा-भाव आ गया था। जयकीर्ति का यह ग्रन्थ संस्कृत-छन्दों के अतिरिक्त कन्नड़-छन्दों के ज्ञान के लिए भी उपयोगी है।

११वीं शताब्दी के क्षेमेन्द्रकृत सुवृत्ततिलक भी छन्दःशास्त्र का एक अनुपम ग्रन्थ है। अपने छोटे कलेवर में निबद्ध होते हुए भी यह एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में कुल तीन विन्यास (अध्याय) हैं, जिनमें प्रथम विन्यास में छन्दों के लक्षण तथा उदाहरण हैं, द्वितीय में अन्य कवियों का अवतरण है, जिनमें छन्दःशास्त्र के नियमों का पूर्णरूपेण पालन नहीं किया गया है और अन्तिम-तृतीय विन्यास में रस तथा वर्ण्य-विषयों के साथ छन्दों का उपयुक्त सम्बन्ध स्थापित किया गया है। आचार्य क्षेमेन्द्र की स्पष्ट मान्यता है कि रस तथा वर्णन के अनुसार ही काव्य में छन्दों का विनियोग करना अपेक्षित है-

काव्ये रसानुसारेण वर्णनानुगुणेन च।
कुर्वन्ति सर्ववृत्तानां विनियोगं विभागवित्॥ ३-६

लौकिक छन्दों के ज्ञान के लिए महाकवि कालिदास विरचित श्रुतबोध एक अनुपम ग्रन्थ है। संस्कृत काव्यों में प्रयुक्त प्रचलित छन्दों का वर्णन ही इसका वैशिष्ट्य है। यद्यपि इसमें गणों के नाम तथा स्वरूप का उल्लेख किया गया है तथापि लक्षण-विन्यास के लिए गणपद्धति का उपयोग नहीं किया गया है। इसकी पद्धति लघु-गुरु वाली ही है और लक्षण तथा उदाहरण दोनों एक ही श्लोक में समाहित हैं। इसी विशेषता के कारण यह पुस्तक छन्दःज्ञान के अभीप्सु बालकों के लिए नितान्त उपयोगी है। इसमें न तो वैदिक छन्दों का वर्णन है, न ही दण्डक और षट्प्रत्ययों का। सम्पूर्ण पुस्तक ४४ श्लोकों में निबद्ध है; जिनमें से तीन में आर्या, गीति तथा उपगीति नामक मात्राच्छन्द वर्णित हैं और शेष ३७ श्लोकों में ३७ वर्णवृत्तों का वर्णन है।

हेमचन्द्र का छन्दोऽनुशासन सूत्रों में निबद्ध अष्टाध्यायी ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ छन्दःशास्त्र के इतिहास में अनेक दृष्टियों से उपयोगी है। यह ग्रन्थ प्राकृत तथा अपभ्रंश छन्दों के ज्ञान के लिए विश्वकोष की समानता रखता है। इस ग्रन्थ पर हेमचन्द्र द्वारा विरचित ही वृत्ति भी है, जो छन्दश्चूडामणि के नाम से जानी जाती है। सम्पूर्ण मूल ग्रन्थ सूत्रों में निबद्ध है, जिनमें कुल मिलाकर सात-आठ सौ छन्दों का वर्णन है। मूल सूत्र संस्कृत भाषा में है, जबकि उदाहरण छन्द के सम्बन्धित भाषाओं में दिये गये हैं।

अपनी कोमल दृष्टान्तावली तथा सुबोध लक्षणावली के कारण गङ्गादास की छन्दोमञ्जरी नितान्त लोकप्रिय एवं महत्त्वपूर्ण है। गङ्गादास उत्कल के रहनेवाले थे। अपने ग्रन्थ में इन्होंने वृत्तरत्नाकर को भी उद्धृत किया है। इसमें छः स्तबक हैं। इसके अन्तिम स्तबक में गद्यकाव्य तथा उसके विविध भेदों का भी वर्णन किया गया है। गोडे हिस्ट्री के अनुसार इसका रचना-काल १३०० से १५००ई. के मध्य स्वीकार किया गया है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

केदारभट्ट और उनका वृत्तरत्नाकर

मध्यकालीन छन्दःशास्त्रकारों में सर्वाधिक लोकप्रिय श्री केदारभट्ट ने छन्दःशास्त्र के इतिहास में सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थ वृत्तरत्नाकर का प्रणयन किया है। इस अनुपम ग्रन्थ में छन्दःवर्णन में सम्बन्धित विषय का न तो ज्यादा विस्तार किया गया है और न ही ज्यादा संक्षेप किया गया है, बल्कि उनका सम्यक् विवेचन ही किया गया है। इस ग्रन्थ की सर्वातिशायी विशेषता है–संस्कृत काव्यकारों द्वारा बहुशः प्रयुक्त छन्दों का विवेचन। एक सौ छत्तीस श्लोकों में निबद्ध इस ग्रन्थ में कुल छः अध्याय है; जिसमें प्रथम अध्याय संज्ञाभिधानात्मक है। इसमें शास्त्रीय संज्ञाओं का निर्देश किया गया है। द्वितीय अध्याय में आर्या, गीति, वैतालीय, वक्त्र और मात्रासमक प्रकरणों के अन्तर्गत तत्तत्प्रकरणगत मात्रिक छन्दों का क्रमशः निरूपण है। तृतीय अध्याय में सम वर्णवृत्तों के विवेचन के साथ-साथ उक्ता से उत्कृति जाति तक का तथा दण्डक का विधिवत् निरूपण किया गया है। इसके चतुर्थ अध्याय में अर्धसम वृत्तों का तथा पञ्चम अध्याय में विषम वृत्तों का स्पष्टतः विवेचन उपलब्ध है। ग्रन्थ के अन्तिम छठे अध्याय में प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट आदि प्रत्ययों का विधिवत् प्रतिपादन किया गया है।

वृत्तरत्नाकर में छन्दों का लक्षण गणों के द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। छन्दःशास्त्र का पूर्ण सर्वमान्य ग्रन्थ होते हुए भी इसके संक्षिप्त होने का मुख्य कारण है–लक्षण और उदाहरण का एकीकरण। समस्त ग्रन्थ श्लोकबद्ध है, न कि पिङ्गल की भाँति सूत्रबद्ध। संक्षिप्त तथा सुव्यवस्थित विवेचनापरक होने के कारण ही यह ग्रन्थ अद्यावधि प्राप्त ग्रन्थों में सर्वाधिक लोकप्रिय है। इस ग्रन्थ की लोकप्रियता का ज्वलन्त प्रमाण है–संस्कृत काव्य शास्त्रों के उद्भट टीकाकार मल्लिनाथ द्वारा अपनी व्याख्या में छन्दनिर्देश के लिए इसमें निर्धारित लक्षणों को ही उद्धृत करना।

यह सर्वमान्य तथ्य है कि संस्कृत पाठकों को छन्दोज्ञान कराने के लिए वर्तमान में वृत्तरत्नाकर और कालिदासकृत श्रुतबोध–ये दो ही मान्य ग्रन्थ हैं। इनमें से श्रुतबोध में छन्दःलक्षण का निर्देश लघु-गुरु पद्धति से बतलाया गया है, जबकि वृत्तरत्नाकर में गणों द्वारा लक्षण-निर्देश किया गया है। गणों द्वारा लक्षण-निर्देश किये जाने के कारण ही छन्दःज्ञान करने के लिए यह सरल है और इसीलिए ज्यादा लोकप्रिय भी है। जैसे वसन्ततिलका छन्द के लक्षण के लिए श्रुतबोध लघु-गुरु पद्धति का प्रयोग करता है, जबकि वृत्तरत्नाकर इसके लिए गण-पद्धति का उपयोग करता है, जो ज्यादा सरल है–

त० भ० ज० ज० गु०
ऽ ऽ ।ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि वसन्ततिलका १४ वर्णों का छन्द है, जिसमें क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण और अन्तिम दो गुरु वर्ण होते हैं। जिस पाद में यह लक्षण निर्दिष्ट किया गया है, वह वसन्ततिलका ही है। अपनी इसी शैली को केदारभट्ट ने लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं छन्दः कहा है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

केदारभट्ट का स्थितिकाल

वृत्तरत्नाकर के रचयिता केदारभट्ट के देश-काल के बारे में हमें निश्चित रूप से कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती। अपने बारे में स्वयं इन्होंने भी वृत्तरत्नाकर के अन्तिम श्लोक-

वंशेऽभूत्कश्यपस्य प्रकटगुणगणः शैवसिद्धान्तवेत्ता
पित्रः पव्येकनामा विमलतरमतिर्वेदतत्त्वार्थबोधे।
केदारस्तस्य सूनुः शिवचरणयुगाराधनैकाग्रचित्त-
श्छन्दस्तेनाभिरामं प्रविचरितमिदं वृत्तरत्नाकराख्यम्॥

के द्वारा इतना ही ज्ञात होता है कि इनके पिता का नाम पव्येक था, जो कश्यपगोत्रीय शैवधर्मानुयायी विद्वान् ब्राह्मण थे। इससे यह तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये दक्षिण-भारतीय थे; परन्तु अपने समय के बारे में न तो ग्रन्थकार ने स्वयं कोई निर्देश किया है और न ही संस्कृत साहित्य के इतिहासकारों ने इसका कोई निर्धारण किया है। जैसलमेर के पुस्तकालय में सुरक्षित वृत्तरत्नाकर की सर्वाधिक प्राचीन हस्तलिखित प्रति का लेखन-काल संवत् ११९२ अर्थात् ११३५ ई. है और इस ग्रन्थ के सर्वप्राचीन टीकाकार त्रिविकम का काल ११वीं शती का उत्तरार्ध है; अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि केदारभट्ट का काल १०वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर ११वीं शती के पूर्वार्ध के मध्य रहा होगा। यह वह काल है, जिसमें शैव धर्म का प्राबल्य था और शैव तथा वैष्णवों के मध्य सर्वोच्चता सिद्ध करने के लिए संघर्ष चरम पर था। चूँकि केदारभट्ट ने विशेषतया जोर देकर अपने को शैव घोषित किया है, इसलिए उपर्युक्त अनुमान ही समुचित प्रतीत होता है।

उपर्युक्त समय में केदारभट्ट की स्थिति इसलिए भी मानी जा सकती है कि वृत्तरत्नाकर के एक टीकाकार सोमचन्द्र ने अपनी व्याख्या में कहा है कि हेमचन्द्र ने वृत्तरत्नाकर की दो पंक्तियों-श्रुतिसुखकृदियमपि जगति तथा निजशिर उपगतवति सति भवति खजा पर विचार किया है। सोमचन्द्र का यह निर्देश केदारभट्ट की स्थिति-काल के विषय में अतिशय महत्त्व रखता है। चूँकि हेमचन्द्र का काल १०८८ से ११७२ ई. के मध्य माना जाता है और उपर्युक्त उक्ति से केदारभट्ट हेमचन्द्र से पूर्ववर्ती सिद्ध होते हैं, अतः यह निश्चित है कि उपर्युक्त अवधि के मध्य ही केदारभट्ट की स्थिति रही होगी।

वृत्तरत्नाकर की टीकायें

श्रीकेदारभट्टकृत लोकप्रिय ग्रन्थ वृत्तरत्नाकर के ऊपर अबतक अनेकों टीकायें लिखी जा चुकी हैं। इसके सर्वप्राचीन टीकाकार त्रिविक्रम हैं। इनकी टीका का रचनाकाल सम्भवतः ११वीं शताब्दी का उत्तरार्ध है। इसके दूसरे टीकाकार सुल्हण हैं, जिनकी टीका का नाम सुकविहृदयानन्दिनी है। इसका निर्माणकाल ११८९ ई. है। इसके तृतीय टीकाकार सोमचन्द्रगणि हैं, जिन्होंने १२७२ ई. में वृत्तरत्नाकर पर टीका की रचना की। इसमें उदाहरण के रूप में हेमचन्द्र और सुल्हण के श्लोकों को उद्धृत किया है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

उपर्युक्त के अतिरिक्त १६वीं शताब्दी से वृत्तरत्नाकर के ऊपर बहुतायत में टीकायें लिखीं गईं, जिनमें बौद्धभिक्षुक रामचन्द्र विबुधकृत टीका, समयसुन्दरगणिकृत सुगमा वृत्ति, नारायणभट्टकृत नारायणी, भास्कररायकृत सेतु, जनार्दनकृत भावार्थदीपिका, सदाशिवकृत टीका, श्रीकण्ठकृत टीका, विश्वनाथकृत प्रभा, कृष्णसारकृत वृत्तप्रकाशिका, करुणाकरदासकृत कविचिन्तामणि, दिवाकरकृत वृत्तरत्ना-करादर्श प्रमुख हैं।

वृत्तरत्नाकर पर लिखी गई उपर्युक्त सभी टीकाओं में से काशी-निवासी रामेश्वर भट्ट के पुत्र नारायणभट्टकृत नारायणी टीका, जिसकी रचना १६८० ई. में की गई, वृत्तरत्नाकर के अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी, सरल तथा सुबोध है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण यह टीका आज भी सर्वाधिक लोकप्रिय है। वृत्तरत्नाकर के प्रणयन के बाद अद्यावधि यद्यपि बहुत टीकायें इस ग्रन्थ पर लिखी गई हैं और आज भी लिखी जा रही हैं, परन्तु नारायणी का स्थान ग्रहण करने में सभी असमर्थ हैं।

प्रकृत संस्करण

नारायणी टीका की उपर्युक्त विशेषताओं के कारण ही प्रस्तुत संस्करण में भारतीय विद्या प्रकाशन द्वारा अन्य कोई प्राचीन या नवीन संस्कृत व्याख्या न देकर नारायणी को ही स्थान दिया गया है।

छन्दःशास्त्र के अतिशय दुरूह होने के कारण सुकुमार-मति छात्रों के सौकर्यार्थ विभिन्न विद्वानों द्वारा यद्यपि विभिन्न हिन्दी व्याख्यायें भी अबतक लिखी जा चुकी हैं, परन्तु वे व्याख्यायें या तो अतिसंक्षिप्त हैं, या क्लिष्ट हैं, या अस्पष्ट; जिससे हिन्दी व्याख्या सामने होते हुए भी सुकुमार-मति छात्र छन्दःशास्त्र की दुरूहता को पार नहीं कर पाते। छात्रों को होनेवाली इन्हीं कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए पं० श्री सत्यनारायण शास्त्री खण्डूरी द्वारा तारा नामक प्रकृत हिन्दी व्याख्या प्रस्तुत की गई है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें सामान्य भाषा में छन्दलक्षणों को स्पष्ट करते हुए उदाहरणों में उनका पूर्ण समन्वय भी दर्शाया गया है; जिससे छात्रों को किसी प्रकार की असुविधा न हो। मेरा ऐसा विश्वास है कि नारायणी संस्कृत व्याख्या एवं तारा हिन्दी व्याख्या से समलंकृत यह संस्करण छन्दःशास्त्र के जिज्ञासुओं के लिए नितान्त उपयोगी सिद्ध होगा। वैसे इस संस्करण की उपयोगिता का आकलन स्वयं पाठक ही कर सकेंगे।

अन्त में भारतीय विद्या प्रकाशन के सञ्चालक स्वनामधन्य श्री किशोरचन्द्र जैन के सुयोग्य पुत्र श्री राकेश जैन जी कोटिशः धन्यवाद के पात्र हैं; जिन्होंने एक सर्वथा नवीन हिन्दी व्याख्या के साथ वृत्तरत्नाकर के प्रकृत संस्करण को प्रकाशित कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। श्री राकेश जैन विगत वर्षों से संस्कृत साहित्य के अमूल्य ग्रन्थों, जो कि या तो अबतक अप्रकाशित हैं या पूर्व में प्रकाशित होते हुए भी वर्तमान में लुप्तप्राय होते जा रहे हैं, के प्रकाशन में निरन्तर प्रयत्नशील हैं। उनका यह कार्य संस्कृत साहित्य के लिए अमूल्य है और आशा है कि वे अपने कार्य में इसी प्रकार सतत रत रहकर संस्कृत-साहित्य की सेवा करते रहेंगे एवं संस्कृतानुरागियों को लाभान्वित कराते रहेंगे।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भूमिका

शिक्षेत्यादि श्रुतेरङ्गं शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषम्।

प्राक्काले छन्दोविचितिनाम्नाऽभिहितछन्दःशास्त्रस्य संस्कृतसाहित्ये महत्त्वपूर्णं स्थानं वरीवर्ति। यस्मिन् शास्त्रे ग्रन्थे वा विशेषतया वृत्तानां संग्रहो भवति, स एव छन्दोविचिति इति नाम्ना ज्ञायते। शास्त्रमिदं छन्दोऽनुशासन-छन्दोविवृत्ति-छन्दोमान-इत्यादि नाम्नाऽपि ज्ञायते संस्कृतसाहित्ये। अस्यापरं नाम पिङ्गलशास्त्रमपि; यतो हि मन्यते यत् आचार्यपिङ्गल एवास्य शास्त्रस्य प्रणेता।

वैदिक-लौकिकशास्त्राणां सम्यगुच्चारणार्थं तेषामर्थज्ञानार्थञ्च छन्दःशास्त्रस्य ज्ञानं नितान्तमावश्यकम्। यो जनः छन्द-ऋषि-देवता-ब्राह्मणज्ञानं बिना वैदिकमन्त्रेण यज्ञं सम्पादयति, अध्यापयति वा; स पापभाक् भवति। उक्तञ्च आर्षेयब्राह्मणे सर्वाणुक्रमण्याम्-

यो ह वा अविदितार्षेयच्छन्दोदैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति
वाध्यापयति वा स्थाणुं वर्च्छति, गर्तं वा प्रपद्यते, प्र वा मीयते,
पापीयान् भवति। यातया मान्यस्य च्छन्दांसि भवन्ति।

वेदानामर्थज्ञानार्थं छन्दःशास्त्रस्य महती आवश्यकता। यतोहि वेदपुरुषस्य पादस्थानीयो छन्दः। मानवजीवने यथा पादहीनपुरुषस्य गतिर्नास्ति तथैव छन्दःशास्त्रज्ञानविहीनस्य पुरुषस्य वेदेऽपि गतिर्नास्ति। यतः समस्तवेदवाङ्मय एव छन्दोमयः, अतः तज्ज्ञानार्थं तदङ्गभूतछन्दःशास्त्रज्ञानं नितान्तमावश्यकम्। अत एवोक्तं पाणिनीयशिक्षायाम्-

छन्दः पादौ तु वेदस्य।

छन्दःशास्त्रस्योत्पत्तिः

स्पष्टमिदं यत् छन्दःशास्त्रं प्राचीनतमं शास्त्रम्। वैदिकयुगेऽपि अस्य शास्त्रस्य सत्ता दरीदृश्यते। वेदे खलु वार्णिकच्छन्दांस्येव प्रयुक्तानि सन्ति। तेषां हि प्रतिपादस्य निर्धारित-वर्णसंख्या। वेदेषु हि गायत्री-उष्णिक्-अनुष्टुप्-बृहती-पंक्ति-त्रिष्टुप्-जगतीप्रभृतीनि छन्दांसि मुख्यरूपेण प्रयुक्तानि दृश्यन्ते। उक्तमप्यथर्ववेदे-

सप्त च्छन्दांसि चतुरुत्तराण्यन्योन्यस्मिन्नध्यर्पितानि-८।१।१६

यजुर्वेदोऽपि प्रतिपादयति यत्-

गायत्रीत्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह।
बृहत्युष्णिहा ककुप्सुचीभिः शम्यन्तु त्वा॥२३।३३

छन्दसां स्वरूपमपि यथा तत्रैव-

द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षट्पदा।
विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥२३।३४

एवमेव ब्राह्मणग्रन्थेष्वपि छन्दसां विषये बहूक्तमस्ति। ग्रन्थाकारत्वेन ऋक्प्रातिशाख्यं प्रथमा कृतिर्यत्र वैदिकच्छन्दसां विवेचना कृतास्ति। तत्र हि षोडश-सप्तदश-अष्टादश-पटलेषु वैदिकच्छन्दोविषय एव बहुशो निर्दिष्टं वर्तते। एवमेव शाङ्खायनश्रौतसूत्रे, सामवेदस्य निदानसूत्रे, पिङ्गलकृतछन्दःसूत्रे च छन्दोविषयः सोपपत्तिकं प्रतिपादितः।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

आचार्यपिङ्गलप्रणीतछन्दःसूत्रं तु वस्तुतः वैदिकलौकिकच्छन्दसोः सन्धिस्थलम्। तत्र हि पूर्वार्धे वेदप्रयुक्तच्छन्दसां विवेचनं वर्तते, उत्तरार्धे तु लौकिकछन्दसाम्। वैदिकच्छन्दसां संख्या स्थूलतया षड्विंशतिनिर्दिष्टाऽस्ति। कात्यायनस्य सर्वानुक्रमण्यां छन्दांसि तद्ग्रथितमन्त्राणां संख्या च निर्दिष्टा वर्तते।

छन्दःशास्त्रस्योत्पत्तिविषये समयसीमानिर्धारणं तु सर्वथाऽसम्भवपूर्णकार्यम्। तथापि युधिष्ठिरमीमांसककृत-वैदिकच्छन्दोमीमांसायामुल्लिखितेन आचार्य-यादवप्रकाशकृतपिङ्गलसूत्रभाष्यस्यान्तिमेन श्लोकेनेदं ज्ञायते यदस्य शास्त्रस्य प्रवर्तकः स्वयं भगवान् शङ्कर एव। तस्मात् क्रमशः अस्य शास्त्रस्य बृहस्पति-दुश्च्यवन-शुक्राचार्य-माण्डव्य-सैतव-यास्क-पिङ्गलाचार्येण ज्ञानं प्राप्तम्। उक्तञ्च यादवप्रकाशकृतपिङ्गलसूत्रभाष्ये-

छन्दोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे गुरूणां गुरुः
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततोऽसुरगुरुमण्डव्यनामा ततः।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिङ्गल-
स्तस्येदं यशसा गुरोर्भुविधृतं प्राप्यास्मादाद्यैः क्रमात्॥

एवम्प्रकारेणोक्तक्रमरीत्या पिङ्गलशास्त्रे निर्दिष्टाचार्याणां पौर्वापर्यक्रमनिर्धारणं सुगमम्। श्लोकेनानेन च्छन्दोज्ञानस्य प्राचीनत्वमपि सिद्धम्भवति।

च्छन्दसां द्वैविध्यम्

छन्दो द्विधा-वैदिकं लौकिकञ्च। वेदमन्त्रे प्रयुक्तश्च्छन्दः वैदिकच्छन्देति नाम्ना ज्ञायते, अपि च रामायण-महाभारतादौ प्रयुक्ताः च्छन्दांसि तु लौकिकच्छन्देति नाम्नाऽभिहितानि भवन्ति। यद्यपि लौकिकच्छन्दसामुद्भवो विकासश्च वैदिकच्छन्दसामेव, तथापि उभावेव पर्यासमन्तरं दृग्गोचरीभवति। वैदिकच्छन्दस्तु पूर्णतया स्वरसङ्गीतोपर्याधारितः, तत्राक्षरगणनाया एव प्राधान्यम्। लौकिकच्छन्दसां प्रयुक्तवर्णास्तु लघु-गुरुक्रमेण व्यवस्थिता भवन्ति। अत एव लौकिकच्छन्दे सुश्राव्यता भवति। अत्र लघु-गुरुवर्णानां सुव्यवस्थित-सुसंयत-सुसंगतरूपेण प्रयोगात् तस्य श्रवणमात्रेणैव अलौकिकमाधुर्यस्योत्पत्तिर्भवति।

यद्यपि लौकिकच्छन्दःसन्दर्भे पिङ्गलकृत छन्द अष्टाध्यायी एव प्राचीनतमं प्रामाणिकं शास्त्रम्, तथापि पिङ्गलकृतशास्त्रे विभिन्नपूर्ववर्त्याचार्याणामुल्लेख-दर्शनात्कथमपि वक्तुमिदं न शक्यते यत् आचार्यपिङ्गल एव लौकिकच्छन्दःशास्त्रस्य प्रवर्तकः। स्पष्टमिदं यत् पिङ्गलात्पूर्वमपि लौकिकच्छन्दसां सत्ता आसीत्। आचार्यपिङ्गलेन च्छन्दःशास्त्रं सुव्यवस्थितमात्रमेव कृतम्। तथापि अस्मिन् समये साहित्यशास्त्रे पिङ्गलकृत-छन्द अष्टाध्यायी एव सर्वथा प्रामाणिकं लौकिकच्छन्दःशास्त्रं वर्तते।

छन्दःशास्त्रस्य प्रमुखाचार्याः तत्कृतयश्च

पिङ्गलशास्त्रोपरि सर्वाधिकलोकप्रियवृत्तिकारः भट्टहलायुधः। तेन पिङ्गलशास्त्रोपरि मृतसञ्जीवनी नाम्ना वृत्ति प्रणीता। अस्य समयस्तु दशम शताब्दी। हलायुधकृत मृतसञ्जीवनी वृत्ति तु पिङ्गलसूत्रोपरि सर्वप्राचीना व्याख्या, या तु पिङ्गलसूत्राणां स्पष्टार्थमतीवोपयोगिनी वर्तते।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तत्पश्चात् च्छन्दःशास्त्रस्य प्रमुखाचार्यरूपेण यादवप्रकाशः आयाति। अयन्तु विशिष्टाद्वैतमतप्रवर्तकरामानुजाचार्यस्य गुरुः। यतो हि रामानुजाचार्यस्य समयः १०१७ ई. तः ११३७ ई. यावत् स्वीक्रियते, अतो यादवप्रकाशस्य समयः दशमशताब्द्या उत्तरार्धतः एकादशशताब्देः पूर्वार्धं यावत् स्वीकरणमेवोचितम्। पिङ्गलसूत्रोपरि यादवप्रकाशकृत-पिङ्गलनागच्छन्दोविचितिभाष्यनामकं भाष्यमतीव प्रामाणिकं पाण्डित्यपूर्णञ्च।

तत्पश्चात् पिङ्गलसूत्रोपरि तृतीयव्याख्याकाररूपेण भास्कररायः प्रतिष्ठितो भवति। अयन्तु काशीनिवासी महाराष्ट्रीयब्राह्मणः। छन्दःशास्त्रोपरि अस्य चत्वारो ग्रन्थाः- छन्दःकौस्तुभः, मृतसञ्जीवनी (वृत्तरत्नाकरस्य व्याख्या), वृत्तचन्द्रोदयः, भाष्यराजश्च (पिङ्गल-सूत्रव्याख्या)।

नाट्यशास्त्रस्य प्रणेता भरतेनापि स्वकीये नाट्यशास्त्रे पञ्चदश-षोडशाध्याये च्छन्दःशास्त्रस्य वर्णनं कृतम्। अत्र पञ्चदशेऽध्याये सामान्यतया छन्दोविवेचनम्, षोडशेऽध्याये तु तेषां लक्षणोदाहरणानि प्रदत्तानि सन्ति।

वराहमिहिरकृतबृहत्संहितायामपि १०३ अध्याये विभिन्नानि च्छन्दांसि निर्दिष्टानि सन्ति। अस्य ग्रन्थस्य भट्टोत्पली व्याख्यायां षष्टिछन्दसां लक्षणानि संगृहीतानि सन्ति। वराहमिहिरस्य समयः षष्ठशताब्दी वर्तते, भट्टोत्पलस्य तु नवमशताब्दीति मन्यते।

जनाश्रयाचार्यकृत जानाश्रयीच्छन्दोविचिति सूत्ररूपेण निबद्धो च्छन्दःशास्त्र-स्याभूतपूर्वो ग्रन्थः। अत्र षडध्यायाः सन्ति। अस्य निर्माणसमयन्तु ५८० ईतः ६२० ई. यावत् स्वीक्रियते। ग्रन्थस्त्वयं यद्यपि पिङ्गलपरम्परायामेव वर्तते, तथापि अनयोः पर्यासं भेदमपि दृश्यते। पिङ्गलेन अष्टावेव गणाः स्वीकृताः, परन्त्वत्र अष्टादश गणाः मान्याः सन्ति। वैदिकवृत्तानां निर्देशोऽत्र नास्ति।

जनाश्रयसमकालीन एव जयदेवः। अनेन जयदेवच्छन्द नाम्ना प्रसिद्धो ग्रन्थः प्रणीतः। अयं तु जैनधर्मावलम्बी, यतो हि वृत्तरत्नाकरटीकाकारसुल्हणेन श्वेतपटशब्देनास्य निर्देशं कृत्त्वा तन्मतस्य खण्डनमकरोत्। जयदेवप्रणीते ग्रन्थे सन्त्यष्टाध्यायाः। प्रथमं तावत् त्रिषु अध्यायेषु सूत्ररूपेण वैदिकच्छन्दसां विवरणम्, पश्चात् पञ्चसु अध्यायेषु वृत्तिशैल्या लौकिकच्छन्दसां निरूपणं कृतं वर्तते। जयदेवकृतेयमेव वृत्तिशैली पश्चाद्वर्तिग्रन्थकाराणां कृते आदर्शस्वरूपा। यतो हि तत्पश्चादेव लक्षणोदाहरणा-नामेकीकरणं दृश्यते छन्दःशास्त्रग्रन्थे।

जयदेवस्य पश्चाद्वर्तिजयकीर्तिरपि कन्नडभाषाभाषी जैनमतावलम्बी आसीत्। छन्दोऽनुशासनमस्य ग्रन्थः। अस्य ग्रन्थस्य सप्तमेध्याये कन्नड़भाषान्तर्गतप्रयुक्तच्छन्दसां विवेचनं वरीवर्ति। जयकीर्तिकृतछन्दोऽनुशासने लौकिकच्छन्दसामेव विवेचनमस्ति, न तु वैदिकच्छन्दसाम्। अत एतज्ज्ञायते यज्जयकीर्तिकालं यावत् वैदिकच्छन्दसां प्रति विद्वत्सु उपेक्षाभाव आयातः।

एकादशशताब्द्यामाविर्भूतक्षेमेन्द्रकृतः सुवृत्ततिलकः च्छन्दःशास्त्रस्या अपूर्वो ग्रन्थः। यद्यपि ग्रन्थोऽयमत्यन्तसंक्षिप्तः, तथापि सर्वोत्कृष्टः। अत्र त्रयो विन्यासाः। तत्र प्रथमे विन्यासे छन्दसां लक्षणोदाहरणानि, द्वितीये विन्यासे कवीनामवतरणम्, अन्तिमे

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तृतीये च विन्यासे रसानां वर्ण्यविषयाणाञ्च सह छन्दसामुपयुक्तत्वं प्रतिपादितम्। क्षेमेन्द्रस्येयं मान्यता यद्रसवर्णनानुसारेणैव काव्ये छन्दसां विनियोगो कर्तव्यः। अत एवोक्तं तेन–

काव्ये रसानुसारेण वर्णनानुगुणेन च।
कुर्वन्ति सर्ववृत्तानां विनियोगं विभागवित्॥

छन्दोज्ञानार्थं कालिदासकृतश्रुतबोधः महान् ग्रन्थरत्नः। संस्कृतकाव्येषु प्रयुक्तानां च्छन्दसामेवात्र वर्णनम्, अयमेवास्य वैशिष्ट्यम्। अस्मिन् ग्रन्थरत्ने छन्दसां लक्षणोदाहरणानि एकीकृतानि सन्ति। अत्र वैदिकच्छन्दांसि तु नैव वर्णितानि, न हि दण्डकः षट्प्रत्यया एव वर्णिताः। सम्पूर्णमेव पुस्तकमिदं ४४ श्लोके एव निबद्धाः, यत्र प्रथमतः त्रिषु श्लोकेषु आर्या–गीति–उपगीतिनामकानि मात्राच्छन्दांसि वर्णितानि सन्ति, ततः सप्तत्रिंशच्छ्लोकेषु वार्णिकछन्दांसि निरूपितानि दृश्यन्ते।

हेमचन्द्रकृतछन्दोऽनुशासनोऽपि अष्टाध्यायेषु निबद्धः सूत्रात्मकः च्छन्दो-विषयकग्रन्थः। ग्रन्थोऽयं प्राकृत–अपभ्रंशभाषागतप्रयुक्तच्छन्दज्ञानार्थं विश्वकोशरूपः। अस्य ग्रन्थस्य वृत्तिरपि हेमचन्द्रेणैव छन्दश्चूडामणिनाम्ना निर्मिता। ग्रन्थेऽस्मिन् मूलसूत्रन्तु संस्कृतभाषायां निबद्धम्, किन्तु उदाहरणानि तु तत्तद्भाषायामेव। अयमेवास्य वैशिष्ट्यम्।

गङ्गादासकृतछन्दोमञ्जर्यपि नितान्तलोकप्रियग्रन्थः छन्दःशास्त्रे। गङ्गादास-स्तूत्कलनिवासी आसीत्। स्वीये ग्रन्थेऽनेन वृत्तरत्नाकरोऽप्युद्धृतः। गङ्गादासकृत-छन्दोमञ्जरीग्रन्थे षट्स्तबकाः सन्ति। तत्रान्तिमे स्तबके गद्यकाव्य–तद्भेदानाञ्च वर्णनं वर्णितम्।

वृत्तरत्नाकररचयिता केदारभट्टः

मध्यकालीनछन्दःशास्त्रकाराणां मध्ये सर्वाधिकप्रतिष्ठितश्रीकेदारभट्टेन छन्दःशास्त्रेतिहासे सर्वाधिक–ख्यातिप्राप्तग्रन्थस्य वृत्तरत्नाकरस्य प्रणयनं कृतम्। यद्यपि छन्दःशास्त्रे पिङ्गलसूत्रमेव प्रथममार्षग्रन्थम्, तथापि वृत्तरत्नाकरस्य शास्त्रेऽस्मिन् सर्वातिशायी वैशिष्ट्यं वर्तते। अत्र च्छन्दनिरूपणक्रमे तत्तच्छन्दसम्बन्धिविषयाः नातिविस्तृताः, नातिसंक्षिप्ताः, अपितु सम्यगेव विवेचिताः दृश्यन्ते। संस्कृतकाव्येषु प्रयुक्तच्छन्दसामेव विवेचनमस्य ग्रन्थस्य परमं वैशिष्ट्यम्। वृत्तरत्नाकरस्तु षडध्यायेषु निबद्धः। तत्र प्रथमोऽध्यायः संज्ञाभिधानात्मकः, द्वितीयोऽध्यायः मात्रावृत्ताधिकारात्मकः, तृतीयस्तु समवृत्तविवेचनात्मकः। अर्धसमविवेचनात्मकश्चतुर्थोऽध्यायः, पञ्चमः विषमवृत्तविवेचनात्मकः, षष्ठस्तु प्रस्तारादिप्रत्ययनिरूपणात्मकः। छन्दःशास्त्रे प्रचलितेषु ग्रन्थेषु वृत्तरत्नाकर एव सर्वानतिशेते। प्राचीनैर्महामनीषिभिष्टीकाकारैर्मल्लिनाथादिभिरपि स्व–स्वटीकायां छन्दोनिर्देशकरणार्थमयमेव समादृतः। अपि चास्य ग्रन्थस्य प्रमाणमपि स्वल्पम्।

वृत्तरत्नाकरे तु च्छन्दसां लक्षणानि गणपद्धत्या एव निर्दिष्टानि सन्ति। अत्र लक्षणोदाहरणानामेकीकरणम्। यस्मिन् श्लोके यो वृत्तः लक्षणरूपेण निरूपितः, स श्लोक एव तस्य वृत्तस्योदाहरणम्। उक्तमपि केदारभट्टेन–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं छन्दः

च्छन्दसां सुव्यवस्थितनिरूपणादेव ग्रन्थोऽयमभूतपूर्वः। अस्य ग्रन्थस्योपरि पञ्चविंशतितोऽभ्यधिकाष्टीकाः टीकिताः सन्ति। गणपद्धत्या लक्षणनिर्देशादेवायं ग्रन्थः छन्दोज्ञानार्थमतीव सुखकरः।

केदारभट्टस्य स्थितिकालः

वृत्तरत्नाकरप्रणेताकेदारभट्टस्य स्थितिकालविषये निश्चिद्रूपेण किमपि वक्तुं नैव शक्यते, यतो हि स्वयं तेनापि अस्मिन्विषये न किमपि निर्दिष्टम्। तस्य विषये–

वंशेऽभूत्कश्यपस्य प्रकटगुणगणः शैवसिद्धान्तवेत्ता
पित्रः पव्येकनामा विमलतरमतिर्वेदतत्त्वार्थबोधे।
केदारस्तस्य सूनुः शिवचरणयुगाराधनैकाग्रचित्त-
श्छन्दस्तेनाभिरामं प्रविचरितमिदं वृत्तरत्नाकराख्यम्॥

इति तदुक्तं श्लोकमेव परिचयात्मकः। वृत्तरत्नाकरस्यान्तिमश्लोकेनानेन ज्ञायते यदस्य पिता पव्येकनामा काश्यपगोत्रीयः शैवधर्मावलम्बी विद्वान् ब्राह्मणः। परन्तु स्वस्थितिकालविषये स्वयं ग्रन्थकारेणापि न किमपि लिखितम्, न हि संस्कृतसाहित्येतिहासलेखकैरेव किमपि निर्धारितम्। जैसलमेरपुस्तकालये संरक्षितवृत्तरत्नाकरस्य सर्वप्राचीनपाण्डुलिपिना इदमेव ज्ञायते यत् तस्य रचनाकालः ११३५ ई. अस्ति। अस्य ग्रन्थस्य सर्वप्राचीन–टीकाकारत्रिविक्रमस्यापि समय एकादश शताब्दी एव। अतः वक्तुं शक्यते यत् दशमशताब्द्याः उत्तरार्धतः एकादशशताब्देः पूर्वार्धं यावत् केदारभट्टस्य स्थितिकालः।

इदमपि महत्त्वपूर्णं यत् हेमचन्द्रेण स्वोपज्ञे ग्रन्थे वृत्तरत्नाकरस्य उद्धरणं दत्तम्। हेमचन्द्रस्य कालस्तु १०८८ ई. तः ११७२ ई. यावत् स्वीक्रियते विद्वद्भिः, अतः केदारभट्टस्य हेमचन्द्रतः पूर्ववर्तित्वात् तस्य स्थितिकालविषये पूर्वोक्तानुमानमेव समीचीनं प्रतिभाति।

वृत्तरत्नाकरस्य टीका

केदारभट्टविरचितवृत्तरत्नाकरोपरि अद्यावधि बहुभिर्विद्वद्भिः बहुशो टीकाः कृताः। तेषां मध्ये सर्वप्राचीनः त्रिविक्रमः। तत्पश्चात् अस्योपरि सुल्हणकृत-सुकविहृदयानन्दिनी, सोमचन्द्रगणिकृतटीका, बौद्धभिक्षुकरामचन्द्रविबुधकृतटीका, समयसुन्दरगणिकृतसुगमावृत्ति, नारायणभट्टकृतनारायणी, भास्कररायकृत–सेतु, जनार्दनकृत–भावार्थदीपिका, सदाशिवकृतटीका, श्रीकण्ठकृत–टीका, विश्नाथकृत–प्रभा, कृष्णसारकृत–वृत्तप्रकाशिका, करुणाकरदासकृत–कविचिन्तामणि, दिवाकरकृत–वृत्तरत्नाकरादर्शः महत्त्वपूर्णम्।

तेषु नारायणभट्टकृत–नारायणी अतिविस्तृता, सुस्पष्टा बहुपदार्थघटितेति सुप्रथिता।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

प्रकृतं संस्करणम्

वृत्तरत्नाकरोपरि पञ्चविंशतितोऽभ्यधिकासु टीकासु मध्ये सर्वातिशायित्वादत्र नारायणी टीका एव समादृता। यतो हि सुकुमारमतिच्छात्राणां कृते नारायणी टीका एव सुबोध्या वर्तते। छन्दःशास्त्रस्यातिशयदुरूहत्वात् छन्दोज्ञानविरहितबालकानां कृते यद्यपि हिन्दीभाषायामपि बहवः व्याख्या व्याख्यायिता बहुभिर्विद्वद्भिः, तथापि तासां अतिसंक्षिप्तत्वात्, क्लिष्टत्वात् अथवा दुरूहत्वात् छन्दःशास्त्रस्य ज्ञानार्जने मन्दमतिच्छात्राः नैव समर्थाः। अत एव छात्राणां सौकर्यार्थं पं० श्री सत्यनारायणशास्त्रीखण्डूरीमहाभागेन 'तारा'-नाम्नी हिन्दी व्याख्यया समलंकृतः वृत्तरत्नाकरग्रन्थः। अस्यां व्याख्यायां सर्वजनसुखदभाषायां छन्दोलक्षणानि स्पष्टीकृतानि सन्ति। अपि चोदाहरणेषु तल्लक्षणस्य पूर्णसमन्वयमपि दर्शितम्। इदमेवास्या व्याख्याया सर्वातिशायी वैशिष्ट्यम्। आशास्महे यद् नारायणी-संस्कृतटीकया तारा-हिन्दीव्याख्यया च समलंकृतोऽयं संस्करणं छात्रायां कृते उपयोगि भवतीति।

भारतीयविद्याप्रकाशनस्य सञ्चालक श्री किशोरचन्द्र जैन महाभागस्य स्वनामधन्यपुत्रः श्रीराकेशजैनमहाभागोऽपि कोटिशः धन्यवादार्हः; यतो हि तेन सर्वथा नूतनव्याख्यया विभूषितोऽयं वृत्तरत्नाकरग्रन्थः प्रकाशितः। श्रीराकेशजैनमहाभागस्तु विगतवर्षेभ्यः संस्कृतसाहित्यस्य पुनरुद्धारे अग्रसरः, अत अस्मिन् युगे संस्कृतसाहित्यस्य कृते तस्य प्रयासः सर्वथा स्तुत्य एव।

अन्ते च इदमेव वक्तुं शक्यते यत् निरीक्षते केलिवनं प्रविश्य क्रमेलकः कण्टकजालमेव इतिवन्न व्यवहर्तव्यं विद्वद्भिः सहृदयैः। अपि तु इदमेव ध्यातव्यं यत्-

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

इति शम्॥

विजयादशमी-२०५६ वि.

श्रीनिवासशर्मा
वाराणसी

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ॐ वृत्तरत्नाकरस्थविषयानुक्रमणिका ॐ

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
प्रथमोऽध्यायः	
(संज्ञाभिधानात्मकः)	
मङ्गलाचरणम्	१
ग्रन्थकर्तुः परिचयः	१
ग्रन्थस्यानुबन्धयजष्टयम्	१
ग्रन्थस्य प्रयोजनम्	२
ग्रन्थपरिमाणम्	३
मगणादिगणनिरूपम्	४
गणलक्षणम्	४
मात्राच्छन्दोगणनिरुपणम्	७
गुरुलघुस्वरूपकथनम्	८
संयोगपरस्य गुरोरपवादकथनम्	६
गुरोर्लघुतायामुदाहरणम्	६
छन्दःशास्त्रपरिभाषाकथनम्	१२
छन्दःशास्त्रपरिभाषान्तरकथनम्	१६
समवृत्तलक्षणम्	१६
अर्धसमवृत्तलक्षणम्	१७
विषमवृत्तलक्षणम्	१७
समवृत्तभेदनिरूपणम्	१७
दण्डक-गाथादिनिरूपणम्	१७
उक्तादिजातिसंज्ञापरिगणनम्	१८
अध्यायस्योपसंहारः	१८
द्वितीयोऽध्यायः	
(मात्रावृत्ताधिकारात्मकः)	
आर्याप्रकरणम्-	
आर्यालक्षणम्	२०
पथ्यालक्षणम्	२५
विपुलालक्षणम्	२५
चपलालक्षणम्	२६
मुखचपलालक्षणम्	२७
जघनचपलालक्षणम्	२८
गीतिप्रकरणम्-	
गीतिलक्षणम्	३०
उपगीतिलक्षणम्	३१
उद्गीतिलक्षणम्	३१

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आर्यागीतिलक्षणम्	३२
वैतालीयप्रकरणम्-	
वैतालीयलक्षणम्	३५
औपच्छन्दसिकलक्षणम्	३७
आपातलिकालक्षणम्	३७
उदीच्यवृत्तिलक्षणम्	३८
प्राच्यवृत्तिलक्षणम्	३६
प्रवृत्तकलक्षणम्	४०
अपरान्तिकालक्षणम्	४१
चारुहासिनीलक्षणम्	४३
वक्त्रप्रकरणे-	
वक्त्रलक्षणम्	४५
पथ्यावक्त्रलक्षणम्	४६
विपरीतपथ्यावक्त्रलक्षणम्	४७
चपलावक्त्रलक्षणम्	४७
युग्मविपुलालक्षणम्	४८
सैतवमते युग्मविपुलालक्षणम्	४६
भविपुलालक्षणम्	५०
रविपुलालक्षणम्	५१
नविपुलालक्षणम्	५१
तविपुलालक्षणम्	५२
मात्रासमप्रकरणम्-	
अचलधृतिलक्षणम्	५५
मात्रासमकलक्षणम्	५५
विश्लोकलक्षणम्	५६
वानवासिकालक्षणम्	५७
चित्रालक्षणम्	५८
उपचित्रालक्षणम्	५६
मतान्तरेणोपचित्रालक्षणम्	५६
पादाकुलकलक्षणम्	६०
लघुगुरुसंख्याबोधोपायाः	६२
शिखालक्षणम्	६४
खञ्जा (खजा) लक्षणम्	६४
अनङ्गक्रीडानिरुपणम्	६५
रुचिरानिरुपणम्	६६

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
तृतीयोऽध्यायः (समवृत्तात्मकः)	
उक्तप्रकरणम्-	
(१) उक्ता-	
श्रीलक्षणम्	६८
(२) अत्युक्ता-	
स्त्रीलक्षणम्	६९
(३) मध्या-	
नारीलक्षणम्	६९
मृगीलक्षणम्	६९
(४) प्रतिष्ठा-	
कन्यालक्षणम्	६९
(५) सुप्रतिष्ठा-	
पङ्क्तिलक्षणम्	७०
(६) गायत्री-	
तनुमध्यालक्षणम्	७०
शशिवदनालक्षणम्	७१
विद्युल्लेखालक्षणम्	७१
वसुमतीलक्षणम्	७२
(७) उष्णिक्-	
मदलेखालक्षणम्	७२
कुमारललितालक्षणम्	७३
(८) अनुष्टुप्-	
चित्रपदालक्षणम्	७३
विद्युन्मालालक्षणम्	७४
माणवकलक्षणम्	७४
हंसरुतलक्षणम्	७५
समानिकालक्षणम्	७५
प्रमाणिकालक्षणम्	७५
वितानलक्षणम्	७६
(९) बृहती-	
हलमुखीलक्षणम्	७७
भुजशिशुभृतालक्षणम्	७७
(१०) पङ्क्तिः-	
शुद्धविराड्लक्षणम्	७८
पणवनामलक्षणम्	७८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
मयूरसारिणीलक्षणम्	७९
रुक्मवतीलक्षणम्	७९
मत्तालक्षणम्	७९
मनोरमालक्षणम्	८०
उपस्थितालक्षणम्	८०
(११) त्रिष्टुप्-	
इन्द्रवज्रालक्षणम्	८१
उपेन्द्रवज्रालक्षणम्	८१
उपजातिलक्षणम्	८२
मतान्तरेणोपजातिलक्षणम्	८३
सुमुखीलक्षणम्	८४
दोधकलक्षणम्	८५
शालिनीलक्षणम्	८५
वातोर्मीलक्षणम्	८६
श्रीलक्षणम्	८६
भ्रमरविलासितलक्षणम्	८७
रथोद्धतालक्षणम्	८७
स्वागतालक्षणम्	८८
वृत्तालक्षणम्	८९
भद्रिकालक्षणम्	८९
श्येनिकालक्षणम्	८९
मौक्तिकमालालक्षणम्	९०
उपस्थितलक्षणम्	९०
(१२) जगती-	
चन्द्रवर्त्मलक्षणम्	९०
वंशस्थलक्षणम्	९१
इन्द्रवंशालक्षणम्	९१
तोटकलक्षणम्	९२
द्रुतविलम्बितलक्षणम्	९२
पुटलक्षणम्	९३
प्रमुदितवदनालक्षणम्	९३
कुसुमविचित्रालक्षणम्	९४
जलोद्धतगतिलक्षणम्	९४
मौक्तिकदामलक्षणम्	९५
भुजङ्गप्रयातलक्षणम्	९६
स्रग्विणीलक्षणम्	९६

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
प्रियम्वदालक्षणम्	९७
मणिमालालक्षणम्	९७
ललितालक्षणम्	९८
प्रमिताक्षरालक्षणम्	९८
महितोज्ज्वलालक्षणम्	९९
वैश्वदेवीलक्षणम्	९९
जलधरमालालक्षणम्	१००
नवमालिकालक्षणम्	१०१
प्रभालक्षणम्	१०१
मालतीलक्षणम्	१०२
पञ्चचामरलक्षणम्	१०३
अभिनवतामरसनिरूपणम्	१०३
(१३) अतिजगति-	
क्षमालक्षणम्	१०४
प्रहर्षिणीलक्षणम्	१०४
अतिरुचिरालक्षणम्	१०५
मत्तमयूरलक्षणम्	१०६
उपस्थितलक्षणम्	१०६
मञ्जुभाषिणीलक्षणम्	१०७
चन्द्रिकालक्षणम्	१०७
(१४) शक्वरी-	
असम्बाधालक्षणम्	१०८
अपराजितालक्षणम्	१०९
प्रहरणकलिकालक्षणम्	१०९
वसन्ततिलकालक्षणम्	११०
सिंहोन्नतालक्षणम्	१११
इन्दुवदनालक्षणम्	१११
अलोलालक्षणम्	११२
(१५) अतिशक्वरी-	
शशिकलालक्षणम्	११२
स्रग्लक्षणम्	११३
मणिगुणनिकरलक्षणम्	११४
मालिनीलक्षणम्	११४
प्रभद्रकलक्षणम्	११५
एलालक्षणम्	११५
चन्द्रलेखालक्षणम्	११६

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
(१६) अष्टिः-	
ऋषभगजविलसितलक्षणम्	११७
वाणिनीलक्षणम्	११७
(१७) अत्यष्टिः-	
शिखरिणीलक्षणम्	११८
पृथ्वीलक्षणम्	११९
वंशपत्रपतितलक्षणम्	११९
हरिणीलक्षणम्	१२०
मन्दाक्रान्तालक्षणम्	१२१
नर्कुटकलक्षणम्	१२२
कोकिलकलक्षणम्	१२२
(१८) धृति-	
कुसुमितलतावेल्लितालक्षणम्	१२३
(१९) अतिधृति-	
शार्दूलविक्रीडितलक्षणम्	१२४
मेघाविस्फूर्जितालक्षणम्	१२५
(२०) कृति-	
सुवदनालक्षणम्	१२६
वृत्तलक्षणम्	१२७
(२१) प्रकृति-	
स्रग्धरालक्षणम्	१२७
(२२) आकृति-	
भद्रकलक्षणम्	१२८
(२३) विकृति-	
अश्वललितलक्षणम्	१२९
मत्ताक्रीडालक्षणम्	१३०
(२४) संकृति-	
तन्वीलक्षणम्	१३०
(२५) अतिकृति-	
क्रौञ्चपदालक्षणम्	१३१
(२६) उत्कृति-	
भुजङ्गविजृम्भितलक्षणम्	१३२
अपवाहलक्षणम्	१३३
दण्डकप्रकरणम्-	
चण्डवृष्टिप्रपातलक्षणम्	१३४
उद्दाशङ्कादिनिरुपणम्	१३५
प्रचितकलक्षणम्	१३६

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
चतुर्थोऽध्यायः	
(अर्धसमवृत्तात्मकः)	
उपचित्रलक्षणम्	१३८
द्रुतमध्यालक्षणम्	१३९
वेगवतीलक्षणम्	१३९
भद्रविराड्लक्षणम्	१४०
केतुमतिलक्षणम्	१४१
आख्यानकीलक्षणम्	१४२
विपरीताख्यानकीलक्षणम्	१४२
हरिणप्लुतालक्षणम्	१४३
अपरवक्त्रलक्षणम्	१४४
पुष्पिताग्रालक्षणम्	१४४
अपरवक्त्रपुष्पिताग्रयोरभेदकथनम्	१४५
यवमतीलक्षणम्	१४५
पञ्चमोऽध्यायः	
(विषमवृत्तात्मकः)	
पदचतुरूर्ध्वप्रकरणम्-	
पदचतुरूर्ध्वविवेचनम्	१४७
आपीडविवेचनम्	१४९
कलिकाविवेचनम्	१५०
लवलीविवेचनम्	१५१
अमृतधाराविवेचनम्	१५१
उद्गताप्रकरणम्-	
उद्गतानिरूपणम्	१५३
सौरभकनिरूपणम्	१५४
ललितनिरूपणम्	१५५
उपस्थितप्रचुपितप्रकरणम्-	
उपस्थितप्रचुपितनिरूपणम्	१५७
वर्धमाननिरूपणम्	१५८
शुद्धविराड्पभनिरूपणम्	१५९
गाथानिरूपणम्	१६०
दोहानिरूपणम्	१६७

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
उत्कटानिरूपणम्	१६७
रोलानिरूपणम्	१६८
गन्धानिरूपणम्	१६८
चतुष्पदानिरूपणम्	१६८
घत्तानिरूपणम्	१६९
षट्पदनिरूपणम्	१६९
पञ्झटिकानिरूपणम्	१७२
नवपदनिरूपणम्	१७२
पद्मावतीनिरूपणम्	१७३
कुण्डलिकानिरूपणम्	१७४
मदनान्तकनिरूपणम्	१७४
द्विपदीनिरूपणम्	१७५
शिखानिरूपणम्	१७५
मालानिरूपणम्	१७६
चूलिकानिरूपणम्	१७६
सौराष्ट्रनिरूपणम्	१७६
काहलिनिरूपणम्	१७६
मधुभारतनिरूपणम्	१७७
आभीरनिरूपणम्	१७७
दण्डकाहलनिरूपणम्	१७७
दीपकनिरूपणम्	१७७
सिंहावलोकनिरूपणम्	१७८
षष्ठोऽध्यायः	
(प्रस्तारात्मकः)	
प्रत्ययविवेचनम्	१७९
प्रस्ताररचनाविधिकथनम्	१७९
नष्टप्रत्ययकथनम्	१८२
उद्दिष्टप्रत्ययकथनम्	१८५
एकद्व्यादिलगक्रियाविवेचनम्	१८८
संख्याप्रत्ययकथनम्	१९८
ग्रन्थस्योपसंहारः	२०३

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥श्रीः॥

केदारभट्टविरचितम्

वृत्तरत्नाकरम्

'नारायणी'-'तारा' संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतम्

अथ प्रथमोऽध्यायः

सुखसन्तानसिद्ध्यर्थं नत्वा ब्रह्माच्युतार्चितम्।
गौरीविनायकोपेतं शङ्करं लोकशङ्करम्॥ १॥
वेदार्थशैवशास्त्रज्ञः पव्येकोऽभूद् द्विजोत्तमः।
तस्य पुत्रोऽस्ति केदारः शिवपादार्चने रतः॥ २॥
तेनेदं क्रियते छन्दो लक्ष्यलक्षणसंयुतम्।
वृत्तरत्नाकरं नाम बालानां सुखबुद्धये॥ ३॥

नारायणी

नत्वा गणेशं वाग्देवीं पिङ्गलं मातरं गुरुम्।
अन्यानपि च भाष्यादिकर्तॄंश्छन्दोविशारदान्॥ १॥
श्रीभट्टरामेश्वरसूरिसूनुर्नारायणः स्वामनुरुध्य बुद्धिम्।
सङ्क्षेपवृत्त्या विवृतिं सुवृत्तरत्नाकरे व्यक्ततया तनोति॥ २॥

विशिष्टशिष्टाचारमूलभूत 'स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः' इत्यादिवैदिक-लिङ्गकल्पितश्रुतिप्रमाणकविशिष्टेष्टदेवतानमस्कारजनितनिर्विघ्नतादिस्वनाम-कीर्त्तनपूर्वकं स्वग्रन्थस्य ग्रन्थान्तरैरगतार्थतां च सूचयन् सप्रयोजनकर्तव्यं सामान्यज्ञानपूर्वकविशेषजिज्ञासुप्रवृत्तिसिद्ध्यर्थं सामान्यतः प्रतिजानीते-सुखेत्यादिश्लोकत्रयेण।

सुखेति—ब्रह्माऽच्युताभ्यां=विधातृविष्णुभ्याम्। अर्चितं=पूजितम्। गौर्या=पार्वत्या, विनायकेन=गणाधिपेन चोपेतम्। लोकानां=चतुर्दशभुवनानाम्, भूरादीनां सप्तानां वा। शङ्करं=सुखकर्तारम्। एवंविधं शङ्करं महादेवम्। सुखसन्तानसिद्ध्यर्थं=प्रणामजनिताऽविघ्नतादिसम्भूताऽव्याकुलीभावबुद्धि-वैभवादिजनितसुखपरम्पराप्राप्त्यर्थम्। नत्वा, तेन=केदारेणेदं छन्दः क्रियते इति तृतीयश्लोकेनाऽन्वयः। वेदानामृगादीनाम्। अर्थम्, शैवशास्त्राणि च रुद्रयामलादीनि जानातीत्येवंविधः पव्येकसंज्ञो द्विजोत्तमो ब्राह्मणोत्तमोऽभूत्। तस्य पुत्रः केदारनामा शिवचरणारविन्दपूजनतत्परोऽस्ति। लक्ष्येणोदाहरणेन मात्रावर्णाऽन्यतरनियतात्मकेन छन्दसा, लक्षणेन च तन्नियमकथनात्मकेन छन्दसा तदभिन्नेन संयुतं युक्तम्। लक्ष्यमेव लक्षणमिति विग्रहः। वृत्तरत्नानामाकरः खनिर्यत्र तत्। यद्वा तेषामाकरः समूहो यत्र।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

'आकरो निवहोत्पत्तिस्थानश्रेष्ठेषु कथ्यते।'

इति विश्वप्रकाशोक्तेः। एतयैवाऽन्वर्थसंज्ञया नाम प्रसिद्धम्। छन्दः =तत्प्रतिपादकत्वाल्लक्षितं तच्छास्त्रम्। बालानां=छन्दःशास्त्राऽज्ञानाम्, सुखेनाऽल्पोपायेन सिद्धये छन्दोज्ञानार्थं क्रियते इत्यर्थः। सुखपदस्य प्रथमप्रयोगादेतच्छ्रावयितृणां श्रोतृणां च सुखाऽतिशयः सूचितः। यद्वा बालप्रतिपत्तेः प्रयोजनत्वेऽपि स्वप्रयोजनत्वाऽभावादेतद्ग्रन्थजनितबालव्युत्पत्तिजनितोपकाराऽदृष्टेन जनिष्यमाणस्वर्गादिसुखपरम्परैव स्वेष्टा स्वग्रन्थप्रयोजनत्वेनाऽनेन निर्दिश्यते। ब्रह्मविष्णुगौरीविनायककीर्तनेन च मङ्गलाऽनन्तरं तदनु स्मृतिरूपं सूचितम्। शङ्करमित्यत्र शंशब्दस्याऽव्ययत्वाद्विभक्तेरन्तत्वाऽभावात्। 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' (पा० सू० २-४-७१) इति न भवति। द्विजोत्तमग्रहणेन च ब्राह्मणकर्तृत्वादस्य ग्रन्थस्य श्रवणे दोषाऽभावः सूचितः। लक्ष्येत्यादिना लक्ष्येभ्यः काव्यादिभ्यः केवललक्षणेभ्यश्च सूत्रादिभ्यो भिन्नलक्ष्यलक्षणेभ्यश्च वृत्त्यादिभ्योऽतिशयः सूचितः ॥ १-३ ॥

तारा

प्रज्ञावाङ्मनसातीतां स्वाभीष्टसकलप्रदाम्।
प्रणम्य शिरसा शक्तिं राजराजेश्वरीं पराम् ॥ १ ॥
~~स्मरदां~~ मातरं तातं गुरुमेवञ्च प्रेरकम्।
वृत्तरत्नाकरव्याख्यां ताराख्यां ख्यापिताम्यहम् ॥ २ ॥

वेद (ऋगादि चारों वेद-"मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्"-मन्त्र और ब्राह्मण) के ज्ञाता एवं शिवसम्बन्धी शैवशास्त्रों (रुद्रयामलादि) के ज्ञाता पव्येक नामक एक उत्तम ब्राह्मण हुए। उन्हीं के पुत्र केदार हैं। जो सदा भगवान् शङ्कर के चरणों की अर्चना में रत रहते हैं। वही मैं केदार बुद्धि-वैभवादिजनित सुख-परम्परा की सिद्धि के लिए ब्रह्मा एवं विष्णु से अर्चित तथा गौरी-गणेश से संयुत सम्पूर्ण लोकों के मङ्गलकर्ता भगवान् शङ्कर को प्रणाम करके लक्ष्य एवं लक्षणों से युक्त (सोदाहरण परिभाषास्वरूप) वृत्तरत्नाकर नामक छन्दोग्रन्थ बालकों को सुखपूर्वक छन्दों के ज्ञानार्थ निर्माण करता हूँ ॥ १-३ ॥

पिङ्गलादिभिराचार्यैर्यदुक्तं लौकिकं द्विधा।
मात्रावर्णविभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते ॥ ४ ॥

नारायणी-एवं सामान्यतो ग्रन्थकरणं प्रतिज्ञाय पूर्वाऽऽचार्योक्तिमूलकतया स्वकल्पितशङ्काजनितश्रोत्रनादरं निराकर्तुं प्रतिपाद्यमर्थं विशेषतः प्रतिजानीते-

पिङ्गलेति। पिङ्गलेन=सूत्रकर्त्रा, आदिपदाद्भाष्यकारादिभिश्च। आचार्यैरवधेयवचनैः। यल्लौकिकं छन्दो मात्रावर्णविभेदेन=इदं मात्राच्छन्दः आर्यादि, इदं वर्णच्छन्दः सामान्यादि, इति भेदेन। द्विधा=द्विप्रकारमुक्तं तच्छन्दः। इह=ग्रन्थे, कथ्यते इत्यर्थः। लौकिकशब्देन वेदवेदाङ्गाऽनधिकारिणाम् त्रैवर्णिकेतराणामप्यस्मिन् ग्रन्थेऽधिकार इति दर्शयति। वर्णग्रहणेन च 'मात्राच्छन्दो

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गणच्छन्दः' इति कैश्चिदुक्तो द्वेधा विभागः पराकृतः। तादृशविभागे ह्येकाक्षराणां श्रचादीनामसङ्ग्रहाऽऽपत्तेः। वर्णच्छन्दस्त्वेन विभागे च गणच्छन्दसामपि सङ्ग्रहादिति भावः। अन्ये तु गणमात्राक्षरच्छन्दस्त्वेन त्रैविध्यमाहुः। यदुक्तम्–

आदौ तावद् गणच्छन्दो मात्राच्छन्दस्ततः परम्।
तृतीयमक्षरच्छन्दश्छन्दस्त्रेधा तु लौकिकम् ॥ इति।

गणच्छन्द आर्यादि, मात्राच्छन्दो वैतालीयादि, अक्षरच्छन्दः सामान्यादीति। तदप्यनेन पराकृतम्, गणच्छन्दसामपि मात्राच्छन्दःसु सङ्ग्रहात् ॥ ४ ॥

तारा–आचार्य पिङ्गल (सूत्रकार) तथा भाष्यकार (वृत्तिकार) आदि आचार्यों ने जो मात्रा और वर्ण के भेद से दो प्रकार के लौकिक छन्द कहे हैं, उन्हीं का मैं इस ग्रन्थ में वर्णन करता हूँ ॥ ४ ॥

विशेष–गायत्री आदि सात छन्द वैदिक भी हैं और लौकिक भी। अतः इस ग्रन्थ में मात्र लौकिक गायत्री आदि छन्दों का ही वर्णन है। यद्यपि कुछ आचार्यों ने **'गणमात्रावर्णभेदाच्छन्दस्त्रिविधम्'** कहा है। इनके अनुसार गणछन्द आर्यादि, मात्राछन्द वैतालीयादि तथा वर्णछन्द श्रीप्रभृति हैं। किन्तु गणछन्दों का मात्राछन्दों में ही अन्तर्भाव हो जाने से मात्रा एवं वर्ण दो ही प्रकार के छन्द माने गये हैं। यदि 'मात्रावर्ण' के स्थान पर 'मात्रागण' कहा जाता तो एकाक्षर छन्दों 'श्री' आदि छन्दों में लक्षण घटित नहीं हो पाता, क्योंकि इनमें आठ गणों वाला अथवा पाँच गणोंवाला कोई भी गण नहीं बनता। इसलिए मात्रा और वर्ण के भेद से दो भेद किये गये। वर्ण के अन्तर्गत श्रीप्रभृति एकाक्षर छन्दों में भी लक्षण घटित हो जाता है। यद्यपि लक्षणविधान में गणों को ही आधार मानकर छन्दों की व्यवस्था है, तथापि 'आर्या' आदि छन्दों में गुरु और लघु को मात्रारूप में मानकर पाँच गण बनाये गये हैं। तथा 'उक्ता' आदि छन्दों में गुरु–लघु को वर्णरूप में मानकर आठ गण बनाये गये हैं। अतः **'मात्रावर्णविभेदेन'** विधान किया गया है ॥ ४ ॥

षडध्यायनिबद्धस्य छन्दसोऽस्य परिस्फुटम्।
प्रमाणमपि विज्ञेयं षट्त्रिंशदधिकं शतम् ॥ ५ ॥

नारायणी–अन्यकर्तृकसम्भावितच्छन्दोऽन्तरप्रक्षेपनिक्षेपनिराकरणाय ग्रन्थं परिमाणतः परिच्छिनत्ति–**षडध्यायेति**। परि समन्तात्साकल्येन स्फुटं प्रकटं यथा स्यात्तथा षड्भिरध्यायैर्निबद्धस्य घटितस्याऽस्य च्छन्दसश्छन्दोग्रन्थस्य वृत्तरत्नाकराख्यस्य षट्त्रिंशदधिकं षट्त्रिंशत्सङ्ख्याधिकं द्वात्रिंशदक्षराणामनुष्टुप्छन्दसां श्लोकानां शतं १३६ परिमाणं ज्ञेयम्। अनुष्टुप्श्लोकपरिमाणमेवात्र गृह्यते। ग्रन्थगणनायां लोके तस्यैव प्रसिद्धत्वात्। एतेनाल्पतरग्रन्थपाठे प्रयासाभावाद्विस्तीर्णभाष्यवृत्त्यादिग्रन्थप्रयासनैरपेक्ष्येणैव प्रसिद्धसकलच्छन्दोज्ञानसिद्धेर्व्युत्पित्सुभिरयमेव ग्रन्थोऽभ्यसनीय इति सूचितम्॥ ५ ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–इस वृत्तरत्नाकार नामक छन्दोग्रन्थ को छः अध्यायों में निबद्ध किया गया है। इन छः अध्यायों के अन्तर्गत सम्पूर्ण ग्रन्थ १३६ श्लोक-प्रमाण है। ग्रन्थ में कालक्रम से प्रक्षेप-निक्षेप शङ्का-निराकरणार्थ श्लोकसंख्या स्पष्ट निर्दिष्ट कर दी गयी है।

म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तै- रेभिर्दशभिरक्षरैः।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना॥ ६॥

नारायणी–इदानीं सकलवाग्व्यापित्वेन मादीन्गणान्स्तुवंल्लक्षणकथनार्थमुद्दिशति–म्यरस्तेति। मगण-यगण-रगण-सगण-तगण-जगण-भगण-नगण-गुरुभिर्लान्तैर्लघुयुक्तैरेभिर्दशभिर्गणाष्टकगुरुलघुरूपैरक्षरैः समस्तवाङ्मयं वाग्जालं व्याप्तम्। अस्तीति शेषः। अत्रोपमा विष्णुना त्रैलोक्यं यथा व्याप्तं तद्वत्। अत्र स्वरोच्चारणं सौकर्यार्थम्। एवमुत्तरत्रापि।

वक्ष्यमाणत्र्यक्षरप्रस्तारक्रमोपपन्नक्रमनिर्देशकसूत्रानुरोधेनाऽयं गण उक्तः। सूत्राणि तु 'धी श्री स्त्री म्' (पिं. सू. २/१), 'वरा सा य्', (पिं. सू. २/२), 'का गुहा र्' (पिं. सू. २/३), 'वसुधा स्' (पिं. सू. २/४), 'सा ते क्व त्' (पिं. सू. २/५), 'कदा स ज्' (पिं. सू. २/६), 'किं वद भ्' (पिं. सू. २/७), 'न हस न्' (पिं. सू. २/८) 'गृ ल्' (पिं. सू. २/९) 'गन्ते' (पिं. सू. २/१०) इति॥ ६॥

तारा–अब मादि गणों का स्तवनपूर्वक छन्दों के लक्षण-कथन के उद्देश्य से प्रथम मादि गणों के स्वरूप-निर्देश का उपदेश करते हैं। 'म य र स त ज भ न' तथा 'ग' एवं 'ल'–इन दस अक्षरों से समस्त काव्य-वाङ्मय इस प्रकार व्याप्त है, जैसे विष्णु से तीनों लोक व्याप्त है।

सर्वगुर्मो मुखान्तर्लौ यरावन्तगलौ सतौ।
गमध्याद्यौ ज्भौ त्रिलो नोऽष्टौ भवन्त्यत्र गणास्त्रिकाः॥ ७॥

नाराणयी–क्रमेण गणाँल्लक्षयति–अत्र छन्दःशास्त्रेऽष्टौ त्रिकास्त्र्यक्षरा गणा भवन्ति। चतुरक्षरा गणा मा भूवन्निति त्रिका इत्युक्तम्। परिमाणे कन्। तानाह–सर्वेति। सर्वे गवो गुरवो यस्मिन्नसौ सर्वगुः। 'नामैकदेशे नामग्रहणम्' इति न्यायेन गुशब्दो गुरुवाची। एवं लशब्दो लघुवाची। एवं सर्वत्र। मो=मगणः। मुखे आदावन्तर्मध्ये लो लघुर्ययोस्तौ य-रौ=यगण-रगणौ। अन्ते गलौ गुरुलघू ययोस्तौ क्रमेण स-तौ-सगण-तगणौ। गु=गुरुर्मध्य् आद्यश्च ययोस्तौ ज्-भौ=जगण-भगणौ। त्रिलस्त्रिलघुर्नो नगणः। एतेषां प्रस्तारो यथा–

म०	य०	र०	स०	त०	ज०	भ०	न०
ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ।।	।।।

एतेषां क्रमनियमश्च प्रस्तारे प्रकटीभविष्यति। अन्यत्रापि मादीनां स्वरूपमुक्तम्–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥ इति॥
मो भूमिस्त्रिगुरुः श्रियं दिशति यो वृद्धिं जलं चादिलो,
रोऽग्निर्मध्यलघुर्विनाशमनिलो देशाटनं सोऽन्त्यगः
तो व्योमान्तलघुर्धनापहरणं, जोऽर्को रुजं मध्यगो,
भश्चन्द्रो यश उज्ज्वल मुखगुरुर्नो नाक आयुस्त्रिलः॥

इदं च फलं काव्यनायकस्य तत्कर्तुः पठितुर्वा यथायोग्यं व्यस्तं समुच्चितं वा ज्ञेयम्। यत्र नायकादिभिः प्राचीना देवतादिः स्वकल्पिता वा तत्र कर्तुः श्रोतृणां चेत्यादि। क्वचित्तु देवतामात्रमवादि–

पृथ्वीजलशिखिवाता गगनं सूर्यश्च चन्द्रमा नाकः।
प्रस्तारक्रमवशतो देवा ज्ञेया यथासङ्ख्यम्॥ इति॥

गणदेवतादिकोष्ठकम्।

अथ यदि दैवाद्दुष्टफलो गणः काव्यादौ कृतः, तदा तद्रक्षणार्थं द्वितीयो गणः शोध्यः। तत्र मगण–नगणौ मित्रसंज्ञौ, भगण–यगणौ भृत्यौ, ज–तावुदासीनौ, र–सावरी नीचौ च। तदुक्तम्–

म–नौ मित्रे भ–यौ भृत्यावुदासीनौ ज–तौ स्मृतौ।
र–सावरी नीचसंज्ञौ द्वौ द्वावेतौ मनीषिभिः ॥ इति॥

तथा च यदि मित्रगणान्मित्रगणस्तदा समृद्ध्यादि फलम्, मित्रगणाद् भृत्यगणे जयादिशुभम्, मित्रादुदासीने शून्यकम्, मित्राच्छत्रौ बन्धुपीडा, भृत्यान्मित्रे तु सर्वकार्यसिद्धिः, भृत्याद् भृत्ये सर्वो लाभः, भृत्यादुदासीने धननाशः, भृत्याद्वैरिणि शोकः, उदासीनान्मित्रे किञ्चिदेव कार्यसिद्धिः, उदासीनाद् भृत्ये सर्वे वशाः, उदासीनादुदासीने न शुभम् न चाशुभम्, उदासीनाच्छत्रौ स्वजनवैरम्, शत्रोर्मित्रे शून्यम्, शत्रोर्भृत्ये गृहिणीनाशः शत्रौरुदासीने स्वकुलक्षयः, शत्रोः शत्रौ काव्यनायकनाशो भवति। इति गणयुगफलम्। तदुक्तम्–

मित्रान्मित्रादयः स्युर्यदि धनमुदयं शून्यकं बन्धुपीडां।
भृत्यान्मित्रादयश्चेद् धृतिमधिकगुणं हानिशोकौ च कुर्युः॥
औदास्यार्थाच्च मित्रादय इह कुसुखं धैर्यमीर्ष्यां स्ववैरं
शत्रोर्मित्रादयश्चेद् भ्रममथ गृहिणीनाशमाधिं विनाशम्॥ इति॥

तथा–मित्रान्मित्रं विधत्ते प्रचुरधनमथो मित्रतो भृत्यसंज्ञः,
स्थैर्यं मित्रादुदासो न किमपि च फलं मित्रतः शत्रुसंज्ञः।
बन्धोः पीडामथो स्माद्यदि खलु नियतं भृत्यतो मित्रसंज्ञः,
सर्वं कार्यं च भृत्याद् भृतगण इह चेदायतिः सर्वलोके॥
भृत्याच्चेत्स्यादुदासो धनविगममथो भृत्यतः शत्रुसंज्ञः
शोकं कुर्यादुदासाद्यदि भवति तदा मित्रसंज्ञोऽल्पकार्यम्।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तस्माद् भृत्यः प्रभुत्वं तत इह सततं स्यादुदासो विनाशं
तस्माच्छत्रुः स्ववैरं विविधगुणहरं सर्वसत्कार्यनाशम्॥
शत्रोर्मित्रं च शून्यं यदि भवति ततो भृत्यसंज्ञो गृहिण्या,
नाशं तस्मादुदासो धनहरमधिकं दुःखदारिद्र्यशोकम्॥
शत्रोः शत्रुर्भवेच्चेद् द्विगणसुसहितो नायकस्यैव नाशं
देशोद्वासं विधत्ते कथयति च फलं पिङ्गलो नागराजः॥ इति॥

अत एव किरात-माघ-नैषधीयेषु दुष्टफलादप्युदासीनाज्जगणादुदासीनस्य तगणस्य सत्त्वान्न शुभं न चाशुभमिति दोषाभावः।

अथ गणशुद्धिप्रसङ्गादक्षरशुद्धिरुच्यते। तच्छुद्धौ हि नायकादीनां सुखं भवति। तदुक्तम्-

'अक्षरे परिशुद्धे तु नायको भूतिमृच्छति'॥ इति।

अत्र ऋ-ङ-ञ-ञ-ट-ड-ढ-ण-प-फ-ब-भ-म-र-ल-ध-ष-ह-लान्संयुक्ताक्षराणि च विहाय शेषाक्षराणि शुभफलानीति संक्षेपः। तदुक्तं भामहेन-

अवर्णात्सम्पत्तिर्भवति मुदिवर्णाद्धनशता-
न्युवर्णादख्यातिः सरभसमृवर्णाद्धरहितात्।
तथा ह्येचः सौख्यं ङ-ञ-ण रहितादक्षरगणात्
पदादौ विन्यासाद् भ-र-ब-ह-ल-हाहाविरहितात्॥

तथा-कः खो गो घश्च लक्ष्मीं वितरति, वियशो ङस्तथा चः सुखं छः
प्रीतिं, जो मित्रलाभं, मयमरणकरौ झ्-व्यौ, ट-ठौ खेददुःखे।
डः शोभां, ढो विशोभां, भ्रमणमथ च णस्तः सुखं थश्च युद्धम्
दो धः सौख्यं, मुदं नः, सुखभयमरणक्लेशदुःखं पवर्गः॥
यो लक्ष्मीं, रश्च दाहं, व्यसनमथ ल-वौ, शः सुखं, षश्च खेदं,
सः सौख्यं हश्च खेदं, विलयमपि च लः, क्षः समृद्धिं करोति।
संयुक्तं चेह न स्यात्सुखमरणपटुर्वर्णविन्यासयोगः
पद्यादौ गद्यवक्त्रैः वचसि च सकले प्राकृतादौ समोऽयम्॥ इति॥

तथा दुःखदारिद्र्यवाचका दुष्टाः शब्दाः काव्यादौ न प्रयोज्याः। अयं च प्रयोगनिषेधः काव्यादौ मुक्तकश्लोके चादौ ज्ञेयः। देवतादिवाचके शब्दे तु गणविचारेऽक्षरविचारे वा दोषाऽभावः। तदुक्तं भामहेनैव-

देवतावाचकाः शब्दा ये च भद्रादिवाचकाः।
ते सर्वे नैव निन्द्याः स्युर्लिपितो गणतोऽपि वा॥ इति॥

तथा च माघ-किरातयोर्जगणसंयोगयोः प्रयोगेऽपि श्रीशब्दप्रयोगाद्दोषाभाव इत्यलं भूयसा प्रसक्तेन। प्रकृतमनुसरामः॥ ७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–अब गणों के स्वरूप प्रदर्शित किये जा रहे हैं। यथा–सर्वगुरु १. मगण, आदिलघु २. यगण, मध्यलघु ३. रगण, अन्तलघु ४. तगण, आदि गुरु ५. भगण, मध्यगुरु ६. जगण, अन्तगुरु ७. सगण सर्वलघु ८. नगण–ये आठ गण वर्णछन्द में कहे गये हैं। 'ग' से गुरु, तथा 'ल' से लघु का निर्देश किया गया है॥ ७ ॥

म०	य०	र०	स०	त०	ज०	भ०	न०
ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ।।	।।।

त्रिका:–से तात्पर्य–'तीन वर्ण' गणों का मापदण्ड नियत किया गया है। अतः प्रत्येग गण तीन वर्ण परिमाण का निश्चित है। मात्रा ग्रहण से संगति नहीं होती, क्योंकि भिन्न-भिन्न मात्रिक गण होते हैं। 'समानमात्रिक' गण आर्यादि छन्दों में प्रयुक्त होते हैं। इससे मात्रिक गणों का विधान पृथक् किया गया है।

ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः॥ ८॥

नारायणी–इदानीं मात्राच्छन्दःसूपयोगिनो गणानाह। अत्र शास्त्रे आर्यादिषु च्छन्दःसु स्थिताश्चतुष्कलाश्चतुर्मात्राः पञ्चगणा ज्ञेयाः। प्राकट्याय स्वरूपतस्तानाह–सर्वेति। सर्वत्रान्ते मध्ये आदौ च गुरुर्येषां ते तथा। कथम्भूताः चतुर्लघुना गणेनोपेता युक्ताः। तत्र चतुर्मात्रिकत्वात्सर्वगुरुर्लभ्यते। यथा–

सर्वगुरुः	अन्त्यगुरुः	मध्यगुरुः	आदिगुरुः	चतुर्लघुः
ऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ।।	।।।।
१	२	३	४	५

अयं गणक्रम आर्यानष्टोद्दिष्टयोरुपयोगीति तत्रैव वक्ष्यते पञ्चकलादयस्तु प्राकृतप्रक्रमे वक्ष्यन्ते संस्कृतेऽनुपयोगात् ॥ ८ ॥

तारा–वर्णच्छन्दों के आठ गणों के उल्लेख के अनन्तर मात्राच्छन्दों के पाँच गणों का निर्देश करते हैं। छन्दःशास्त्र में आर्यादि के उपयोगी पाँच मात्रिक गण कहे गये हैं। इनमें प्रत्येक गण में चार मात्राएँ निश्चित हैं। सर्वत्र अन्त–मध्य–आदि मात्राओं का योग चार मात्रा में ही समाहित होना चाहिए।

विशेष–सर्वगुरु, अन्तगुरु, मध्यगुरु, आदिगुरु प्रभृति गणों में भी चतुर्मात्राओं का ही ग्रहण होता है और सर्वलघु चार मात्राओं का एक गण माना जाता है। इस प्रकार पाँच गण बनते हैं। यथा–

ऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ।।	।।।।
सर्वगुरु	अन्तगुरु	मध्यगुरु	आदिगुरु	सर्वलघु।

दीर्घ (गुरु) में दो लघु (ह्रस्व) मात्राएँ होती हैं। इससे गुरु की दो मात्राएँ तथा लघु की एक मात्रा का संकलन किया जाता है। इस प्रकार चार लघु मात्राओं का एक गण चतुष्कलात्मक गण होता है, जो आर्या आदि छन्दों में परिगणित होता है॥ ८॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सानुस्वारो विसर्गान्तो दीर्घो युक्तपरश्च यः।
वा पादान्ते त्वसौ ग्वक्रो ज्ञेयोऽन्यो मात्रको लृजुः॥ ६॥

नारायणी–असौ वर्णो ग्=गुरुर्ज्ञेयः कोऽसावित्यपेक्षायामाह–सानुस्वार इति। अनुस्वारेण युक्तः अं–कं–इत्यादिः, विसर्गान्तः अः–कः–इत्यादिः, दीर्घः आ. का. इत्यादिः। इदं प्लुतस्याप्युपलक्षणम्। युक्तपरो युक्तः संयुक्तः परो यस्य सः। संयोगे परभूते यः पूर्वः सोऽपि गुरुरित्यर्थः। यथा विष्णुरित्यादौ विशब्दादिः। पादान्ते श्लोकचरणान्ते वर्तमानो लघुर्गुरुर्वा भवति। लघुत्वेऽपेक्षिते लघुकार्यं, गुरावपेक्षिते गुरुकार्यं करोतीत्यर्थः। अयं च व्यवस्थितविकल्पः। तेन 'अथ वासवस्य वचनेन' (कि. २२/१) इत्यादावुद्गतादिपदान्तस्य लघुतैव। 'तस्या खुरन्यासपवित्रपांसुम्' (रघु. २/२) इत्यादौ च गुरुतैव। युक्तपरश्चेति व्यञ्जनोपध्मानीयजिह्वामूलीयपराणामुपलक्षणम्। तथा च "तनुवाग्विभवोऽपि सन्" (रघु० १/६), "मन्दः कवियशःप्रार्थी" (रघु० १/३) इत्येवमादिषु सकारस्य, जिह्वामूलीयोपध्मानीयपक्षे च दकार–शकारयोर्गुरुत्वं सिद्धं भवति। इतरथा नकारस्य पदान्तत्वात् सकारस्य न प्राप्नोति, जिह्वामूलीयोपध्मानीययोश्च योगपरत्वाभावाद्दकारशकारयोर्न प्राप्नोति। तदुक्तम्–

दीर्घं संयोगपरं तथा प्लुतं व्यञ्जनान्तमूष्मान्तम्।
सानुस्वारं च गुरुं क्वचिदवसानेऽपि लघ्वन्त्यम्॥ (पिं० सू०१–४)

इति व्यञ्जनपरस्य गुरुत्वाल्लघ्वन्तपादेषु सामान्यादिषु व्यञ्जनान्तः पादो न कार्यः। ननु 'संयोगे गुरु' (पा. सू. १/४/११) "दीर्घं च" (पा. सू. १/४/१२) इति वदता पाणिन्याचार्येण पादान्तस्थादीनां गुरुसंज्ञाया अनुक्तत्वात्तद्विरोध इति चेत, मैवम्। 'कुण्डा' 'हुण्डा' इत्यादिषु 'गुरोश्च हलः' (पा. सू. ३/३/१०३ इत्यकारप्रत्ययस्य, 'ईहाञ्चक्रे' 'ऊहाञ्चक्रे' इत्यादिषु च 'इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः' (पा. सू. ३/१/३६) इत्याम्प्रत्ययस्य सिद्ध्यर्थं स्वशास्त्रे संयोगपरदीर्घयोर्गुरुत्वं पाणिनिः प्रत्यज्ञासीत्। अन्यैस्तु स्वशास्त्रे प्रयोजनाभावान्नाम्नातं नत्वभावादिति न किञ्चिदेतत्। वृत्तिकारस्तु 'गन्ते' (पिं. सू. २/१०) इति सूत्रे वाशब्दाऽश्रवणात्सर्वत्र पादान्तस्थो लो गुर्भवतीति व्याचख्यौ, तदयुक्तम्। गुरुलघुभिरेव च समाप्तयोः समानीगी–त्यार्ययोर्व्यभिचारात्। अथ तत्र लघुसमाप्तिविधायकशास्त्रेण विशेषशास्त्रेण सामान्यस्याऽस्य बाध इति मतम्, तदपि न, सिद्धेन हि लघुना समाप्तिर्विधीयते न तु समाप्तिस्थस्य लघुत्वं; येन बाधः स्यात्। 'गन्ते' (पिं. सू. २/१०) इति सूत्रं त्वन्ते पदान्ते स्थितौ लघुः क्वचिद् गुरुरिति क्वाचित्कत्वाभिप्रायं व्याख्येयम्। तेन न तद्विरोध इत्यलं प्रपञ्चेन। प्रकृतमनुसरामः।

स च प्रस्तारे वक्रः नागराक्षरेऽकारश्लेष(ऽ)चिह्नवज्ज्ञेयो लेख्यः। पूर्वोक्तेभ्यः सानुस्वारादिभ्योऽन्यः ल् लघुः कोऽसावन्यः मात्रिको मात्रारूपः। एतेन गुरोर्द्विमात्रत्वमुक्तं भवति। स प्रस्तारे कर्तव्ये ऋजुरेखाकारः (।) कार्यः॥ ६॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–इस प्रकार वार्णिक छन्दों के आठ गण तथा मात्रिक छन्दों के पाँच गणों का स्वरूप निर्देश करके अब गुरु-लघु का सविस्तार विचार करते हैं। यथा अनुस्वार एवं विसर्ग से युक्त वर्ण गुरु माना जाता है। जैसे-**कं कः**। दीर्घ वर्ण तथा प्लुतवर्ण को गुरु जानना चाहिए। संयुक्त अक्षर परे रहने पर पूर्व वर्ण को गुरु माना जाता है। पद्य में पाद के अन्त का वर्ण छन्द के अनुरोध से विकल्प से गुरु अथवा लघु हो जाता है। अर्थात् पादान्त लघुवर्ण भी छन्दपूर्ति के निमित्त गुरु माना जाता है तथा गुरु वर्ण लघु। विसर्ग के साहचर्य से अर्धविसर्ग-स्वरूप जिह्वामूलीय एवं उपध्मानीययुक्त लघु वर्ण भी गुरु हो जाता है। गुरु का स्वरूप **वक्र** (ऽ) तथा लघु का **ऋजु** (।) सीधा होता है। गणस्वरूपनिर्देश में '**वक्र-ऋजु ऽ।**' संकेतों का ही प्रयोग किया जाता है।

विशेष–विसर्गयुक्त वर्ण का उदाहरण यथा–'**विश्वनाथः**'। थकार विसर्गयुक्त होने से गुरु होगा। अनुस्वारयुक्त वर्ण '**शिवं विश्वनाथः**' में वकार (वं) भी गुरु ही माना जायगा। संयुक्ताक्षर परे रहने के कारण '**विश्वनाथः**' में 'वि' ह्रस्व-इकारान्त रहने पर भी गुरु हो जायगा। इसी प्रकार पद्य में पादान्त वर्ण 'लघु-गुरु' की अपेक्षा से लघु-गुरु होगा। यथा–

"**अथ वासवस्य वचनेन**" पद्य में पाद का अन्तिम वर्ण 'नकार' "उद्गता' छन्द के अनुसार लघु ही रहेगा। इसी प्रकार "**तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुम्**" में पादान्त वर्ण गुरु ही होगा। "**मन्दः कवियशःप्रार्थी**" में ककारपूर्ववर्ती विसर्ग जिह्वामूलीय एवं पकारपूर्ववर्ती विसर्ग उपध्मानीय होने से विसर्ग के पूर्ववर्ती 'दकार' व 'शकार' (दः, शः) गुरुभूत जिह्वामूलीय उपध्मानीय के उदाहरण हैं।

पादादाविह वर्णस्य संयोगः क्रमसञ्ज्ञकः।
पुरःस्थितेन तेन स्याल्लघुतापि क्वचिद्गुरोः॥ १०॥

नारायणी–संयोगपरस्य गुरुत्वे क्वचिदपवादमाह–**पादादाविति**। इह च्छन्दःशास्त्रे पादादौ चरणादौ वर्णस्य वर्णान्तरेण संयोगः क्रमसंज्ञकः पूर्वाचार्यैरुक्त इति शेषः। तेन पादादिसंयोगेन पुरःस्थितेन क्वचिदपेक्षितविषये संयोगपरत्वाद् गुरोरपि लघुता स्यात्। 'वा पादान्ते' (वृ. र. १/६) इत्यत्र पादान्ते लघोर्गुरुत्वं विकल्पितम्। इह तु गुरोर्लघुत्वमिति न पौनरुक्त्यमिति भावो वक्ष्यते ॥ १० ॥

तारा–छन्दःशास्त्र के नियमानुसार पाद के आदि का संयुक्ताक्षर (वर्ण) क्रमसंज्ञक कहलाता है। यह क्रमसंज्ञक संयुक्त वर्ण पादादि में रहने पर भी उसके पूर्व का पादान्त वाला वर्ण छन्दानुरोध से गुरु न होकर लघु ही माना जायगा। इसी का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं॥१०॥

तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि।
अल्पव्ययेन सुन्दरि! ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति ॥ ११॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी—गुरोर्लघुतायामुदाहरणं सप्रतिज्ञमाह इदमस्योदाहरणम्—तरुणमिति। अस्य पूर्वश्लोकार्धस्य। अत्र ग्राम्यनागरिकवरागमे ग्राम्यवरे साभिलाषां चतुरवधूं निन्दागर्भस्तुत्या निवारयन्ती सख्याह—हे सुन्दरि! ग्राम्यजनो ग्रामीणो जनोऽल्पव्ययेन मिष्टं रसवदशनमश्नाति भुङ्क्ते किं तत् तरुणं कोमलं सर्षपाणां शाकम्, नवानां तण्डुलानामोदनं वाऽपर्युषितौदलं वा, पिच्छिलानि वृद्धानि दधीनीति अल्पद्रव्यौ मिष्टान्नभोजी ग्राम्यजनोऽचतुरोऽयम्। त्वं च सुन्दरी अतोऽमुं परित्यज्य नागरिके साभिलाषा भवेत्यत्र ध्वन्यम्। अत्र सुन्दरीत्यत्र संयोगपरत्वाद् गुरुत्वे सति तृतीये पादे त्रयोदशमात्रता मा भूदिति लघुत्वं प्रतिज्ञायते। तथा च द्वादशमात्रतैवेति भावः। क्वचिदिति व्यवस्थितविकल्पार्थम्। तेन सुन्दरीत्यत्र लघुतैव।

गुणिनामपि निजरूपप्रतिपत्तिः परत एव सम्भवति।
स्वमहिमदर्शनमक्ष्णोर्मुकुरतले जायते यस्मात्॥ (वास)
दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।

इत्यादौ गुरुतैव। आर्यामुदाहरन्त आर्यासु पादव्यवस्थाभावं वदन्तो वृत्तिकृतः पराकृताः। अत एव—

त्रिंभिस्त्रिभिर्गणैः पादावार्यादेर्विषमौ स्मृतौ। इति।

"यस्याः पादे प्रथमे" (श्रु० ४) इत्यादि चाभियुक्तैरुक्तं पथ्याभिप्रायं वा, तत्र पादव्यवस्थाया वक्ष्यमाणत्वात्।

ननु 'वा पादान्ते' (वृ० र० १-६) इत्यत्र वर्णमात्रस्य वा पादान्तस्थस्य गुरुता विकल्प्यते, गुरोरेव वा नित्यप्राप्ता सा विकल्प्यते, लघोरेव वा, नाद्यः, पादान्तवर्णमात्रस्य तेनैव गुरुताविकल्पे पक्षे लघुत्वस्यापि सिद्धत्वात्पादादावित्यस्य वैयर्थ्यप्रसङ्गात्, लघ्वंशेऽप्राप्तविकल्पः, तेनैव पाक्षिकलघुतायाः सिद्धौ पुनर्विधान-वैयर्थ्यात्, 'तरुणम्' (वृ० र० १-११) इत्युदाहरण एव द्वियीयचतुर्थपादान्तयोर्ल-घ्वोर्गुरुत्वाभावे च्छन्दोभङ्गप्रसङ्गाच्च। न तृतीयः, लघोस्तत्राप्रस्तुतत्वात्, असंयोग-परस्यापादान्तगुरोरक्रमपरत्वात्पाक्षिकलघुत्वाभावप्रसङ्गाच्चेति चेत्, अत्र पादान्त-वर्णमात्रमुद्दिश्य विकल्पितं गुरुत्वं तेन विधीयेत इति विधेयोद्देश्ययोरेकैकाव-च्छेदादर्थद्वयस्यार्थसिद्धत्वाद्वाक्यभेदाभावः पौरुषेयत्वाद्वा स न दोषः। पादादाविति च तस्यैव विषयं प्रदर्शयद्विवरणम्। तरुणमित्यादिषु गुरोर्लघुतायां तृतीयपाद उदाहरणम् लघोर्गुरुतायां च द्वितीयचतुर्थपादयोरुदाहरणमित्यापातत उत्तरं भवति। वस्तुतस्त्वप्रस्तुतस्याप्यर्थतो बुद्धिस्थस्य लघोरेव गुरुता तेन विकल्प्यते। पादान्त-गुरोस्तु लघुता संयोगपरस्यैवेत्यनेनैवोच्यते। अक्रमपरस्य तु पादान्तगुरोर्लघुता नेष्टैव। अत एव 'गन्ते' (पिं. सू. २-१०) इति सूत्रे 'गृ ल्' (पिं. सू. २-६) इति पूर्वसूत्राद् गृग्रहणमनुवर्त्य गृशब्दोपलक्षितस्य ह्रस्वाक्षरस्य पादान्ते वर्तमानस्य गुरुसंज्ञाऽतिदिश्यते इति वृत्तिकारेणोक्तम्। इदं च गुरोर्लघुत्वं संयोगनिमित्त-कगुरोरेव, न दीर्घादेः। अत्र सोदाहरणो मामकः संग्रहश्लोकः—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

युक्तपरत्वनिमित्तकप्रान्तगुरोरेव वेष्यते लघुता।
पादान्तस्थलघोरिह गुरुता वेष्टस्य जानीहि॥ इत्यलं प्रपञ्चेन।

इदं चोपलक्षणं प्रशब्दे ह्रशब्दे च परतोऽपादान्तस्थस्यापि लघुतायाः कवियोगे दर्शनात्। तथा च कुमारसम्भवे-'गृहीतप्रत्युद्गमनीयवस्त्रा' (कु० ७-११) इति प्रशब्दे परतस्तस्य लघुता दृष्टा। माघे च-'प्राप्य नाभिह्रदमज्जनमाशु' (शि० व० १०-६०) इति। अन्यत्रापि-'तव ह्रियापह्रियो मम ह्रीरभूत्' ह्रशब्दे परतो लघुता दृष्टा। अन्ये तु संयोगमात्रे परभूते लघुत्वमतीवतीव्रप्रयत्नतयेत्याहुः। अत एव सरस्वतीकण्ठाभरण उक्तम्-

यदा तीव्रप्रयत्नेन संयोगादेरगौरवम्।
न च्छन्दोभङ्ग इत्याहुस्तदा दोषाय सूरयः॥ (सर० १-१२३)

तथा च कविप्रयोगाः रामायणे-

कृतार्थांश्च कृतार्थानां मित्राणां न भवन्ति ये।
तान्मृतानपि क्रव्यादाः कृतघ्नान्नोपभुञ्जते॥ इति।
एवं तदार्या नृपवीरसिंह! सीता वचः प्राह विषादयुक्तम्।
एतच्च श्रुत्वा गदितो मया त्वं सीतोपलम्भे प्रकुरुष्व बुद्धिम्॥ (इति च।)
तब ह्रियाऽपह्रियौ मम ह्रीरभूच्छशिगृहेऽपि ह्रतं न धृता ततः।
बहुलभ्रामरमेचकतामसं मम प्रिये! क्व समेष्यति नो पुनः॥ (इति च।)

अन्यत्र च-'धनं प्रदानेन श्रुतेन कर्णौ' इत्यादि च। प्राकृतेऽपि-

जह णहाउ ओइण्णो अब्भन्त (?) मुल्लापिअमंसुअद्धन्तम्।
तह अण्हाआसि तुमं सच्छे गोलाणईतुहे॥
(यथा स्नातुमवतीर्णो आर्दीभूतमुल्लसितमंशुकार्धान्तम्।
तथा च स्नातासि त्वं स्वच्छे गोदानदीतीर्थे॥ इति।)

अत्र द्वितीयैकादशत्रयोविंशतिवर्णानां संयोगपरत्वाद् गुरुत्वेऽपि ण्हल्हादि-संयोगस्यातीवतीव्रप्रयत्नोच्चारणेन पूर्वस्य लघुतायां न च्छन्दोभङ्गो भवति। इदं च महाकविप्रयोगदर्शने भवति, न तु स्वेच्छया। अत एवाहुः-

क्वचिदपि संयुक्तपरो वर्णो लघुरत्र दर्शनेन यथा।
परिहसति चित्तधैर्यं दारकटाक्षेषु निर्वृत्तम्॥ इति।

तीव्रप्रयत्ने तु गुरुतैव। 'अथ प्रजानामधिपः प्रभाते' (रघु० २-२) इत्यादौ। तथा इ-हिं-उं-हुं-काराणामेकारौकारयोश्च केवलयोः सव्यञ्जनयोर्वा प्राकृतादिभाषासु विभाषया गुरुता भवति। तदुक्तम्-

इ-हि-कारौ विन्दुयुतौ ए-ओ-शुद्धौ च वर्ण-मिलितौ चं।
रहयोर्व्यञ्जनयोगे सविभाषं सर्वमेव लघु॥ इति।

अत्र इ-हिं-कारावित्युपलक्षणम्। इं-हिं-ए-ओ एतेषूदाहरणम्-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

माणिण माणाह काइं फलमेओ जे चरणमिलु कान्त।
सहजे भुअङ्गमु जइ णमइ तह किं करिअ मणिमन्त॥
(मानिन! मानैः किं फलमेष यच्चरणमिलितः कान्तः।
सहजेन भुजङ्गमो यदि नमति तत्र किं क्रियते मणिमन्त्रैः॥)

अतइं-हिं-ए-ओ इत्येतेषां गुरुतायां दोहाच्छन्दसोऽधिकमात्रताऽऽपद्येत। रहव्यञ्जनसंयोगे तूदाहृतम्। तथा प्राकृतादिषु दीर्घस्यापि त्वरितपाठे लघुता। तथा द्वयोस्त्रयाणां वा वर्णानां त्वरितपाठे एकवर्णता भवति। तदुक्तम्-

दीर्घाक्षरमपि जिह्वा ह्रस्वं चेत्पठति भवति लघु।
द्वौ वा त्रीनथ वर्णानेकं जानीहि शीघ्रपठनाच्च॥ इति।

अत्रोदाहरणमूह्यम्। अयं प्राकृतविचारः पञ्चमाध्यायान्तवक्ष्यमाणप्राकृत-च्छन्दःसूपयोगात्कृत इत्यलं बहुना॥ ११॥

तारा—कोमल सरसों का साक, नये चाँवल का भात तथा पिच्छल लच्छेदार दधि आदि ग्रामों में अल्प व्यय से ही प्राप्त हो जाते हैं। अतः हे सुन्दरि! ग्रामीण जन इसे ही बड़ी मधुरता से खाते हैं।

विशेष—श्लोकार्थ के अनन्तर प्रकृत प्रसङ्ग गुरुविधान का अपवाद, प्रस्तुत उद्धृत श्लोक में ही घटित किया जा रहा है। यहाँ चतुर्थ पाद के प्रारम्भ का वर्ण (अक्षर) 'ग्रा' है, यह 'ग्-र्' का संयुक्तस्वरूप है, अतः संयुक्त अक्षर परे रहने पर पूर्व का लघुवर्ण भी गुरु हो जाता है, किन्तु इस अपवाद-कारिका के अनुसार 'ग्रा' का पूर्ववर्ती 'सुन्दरि' का 'रि' वर्ण गुरु नहीं हुआ, प्रत्युत 'लघु' ही रहा। इससे आर्या छन्द में छन्दोभङ्ग नहीं हुआ। क्योंकि आर्या के तृतीय चरण में १२ मात्राओं का विधान है, यदि 'रि' गुरु हो जाता तो तृतीय चरण में भी १३ मात्राएँ हो जातीं और छन्दश्च्युति होती। इस प्रकार छन्दानुरोधेन यह व्यवस्थित विकल्प है। पूर्व-कारिका 'पादान्ते वा' से गुरुविकल्प व्यवस्था थी, इस 'पादादाविह' से लघुविकल्प व्यवस्था। अतः दोनों निर्देशों में पौनरुक्त्य दोष नहीं समझना चाहिए॥ ११॥

अब्धिभूतरसादीनां ज्ञेया संज्ञाऽत्र लोकतः।
ज्ञेयः पादश्चतुर्थोंऽशो यतिर्विच्छेदसंज्ञिका॥ १२॥

नारायणी—परिभाषान्तराण्याह-अब्धिभूतेति। लोकतो लोकव्यवहारा-दब्ध्यादीनां संज्ञाः संक्षेपेण संज्ञया ज्ञायन्ते इति संज्ञाः संज्ञीभूताः। चतुरादिसङ्ख्या इति यावत्। ज्ञेया यतिनियमेषु। तद्यथा-अब्धयश्चत्वारः, भूतानि पञ्च, रसाः षट्। आदिपदादश्वा मुनयश्च सप्त, वसवो नागाश्चाष्टौ, ग्रहा नव, दिशो दश, रुद्रा एकादश, आदित्या द्वादश, इत्येवमादि ज्ञेयम्। अब्ध्यादिशब्दाः स्वपर्यायाणां स्वार्थसंख्यासमानसंख्यार्थानां चाप्युपलक्षकाः। तेन समुद्रवेदादयोऽपि लोके ज्ञेयाः। तथा छन्दःशास्त्रत्वाच्छन्दसश्चतुर्थो भागः पादो ज्ञेयः पदादिव्यवहारेषु।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अंशः समचतुर्थांशोऽत्र न ग्राह्यः। किं तु यावान्यत्रोक्तः। तथा च समानां विषमाणां चोद्गतादीनां पादाः सङ्गृहीता भवन्ति। पादशब्दः स्वपर्यायाणामङ्घ्रिचरणादिशब्दानामुपलक्षकः। तथा यतिर्यतिशब्दो विच्छेदे विरामे संज्ञितः परिभाषितः संज्ञाकृतो ज्ञेयः। 'संज्ञिता' इति पाठे यतिशब्दसामानाधिकरण्यात्स्त्रीलिङ्गता ज्ञेयेति च विपरिणतानुषङ्गः। इयं च यतिस्तृतीयान्तेष्वब्ध्यादिनिर्देशेषूपतिष्ठते। साकाङ्क्षत्वात्। अब्ध्यादिसङ्ख्येष्वक्षरेषु यतिः स्यादित्यर्थः। इयं च यतिः श्रुतिसौकर्यार्थं नियतस्थानेषु कार्या। यतिनियमस्थानानि च वृद्धैः सङ्गृहीतानि–

यतिः सर्वत्र पादान्ते श्लोकार्धे तु विशेषतः।
समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके॥
क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत्।
यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ॥
पूर्वान्तवत्स्वरः सन्धौ क्वचिदेव परादिववत्।
एष्टव्यो गतिचिन्तायां यणादेशः परादिवत्॥
नित्यं प्राक्पदसम्बद्धाश्चादयः प्राक्पदान्तवत्।
परेण नित्यसम्बद्धाः प्रादयश्च परादिवत्॥ इति।

एषामर्थ उदाहरणेन स्पष्टीक्रियते। 'यतिः सर्वत्र पादान्ते' इत्यस्योदाहरणम्–

अत्र मे सखि! शिखण्डमण्डने पुण्डरीककमनीयलोचने।
श्यामतामरसदामकोमले रामनामनि मनो मनोरमे॥
(प्र० रा० २-२३) इत्यादि।

प्रत्युदाहरणं तु–'नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्कार्धधारिणे।' इत्यादि।

"श्लोकार्धे तु विशेषतः" इत्यस्योदारणं पूर्वोदाहरणे "दधीनि। अल्पव्ययेन" (वृ० र० १-११) इत्यत्र। सन्धिर्न भवति स्पष्टविभक्तिकता च भवतीति विशेषः। सन्धौ प्रत्युदाहरम्–

श्यामा कामाकुला रामा वामा भोगाय आप्यतेऽ-।
नेकजन्मसु पुण्यानां निचयो न चितो यदि॥

अत्र पूर्वरूपकरणम्। स्पष्टविभक्तिकतायां प्रत्युदाहरणम्–

सुरासुरशिरोरत्न - स्फुरत्किरणमञ्जरी–।
पिञ्जरीकृतपादाब्जद्वन्द्वे वन्दामहे शिवम्॥

अत्र समासकरणम्। "समुद्रादि" इत्यत्रोदाहरणम्–"तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी" (मे० १-२) इति। अत्र मन्दाक्रान्तायां चतुर्षु स्पष्टविभक्तिकता। ततः षट्स्वव्यक्तविभक्तिकता। 'पादान्ते' इत्यस्यापि विशेषणं "व्यक्तविभक्तिके" इति। तत्रोभयोदाहरणम्–

स्यन्दने गरुडकेतुलाञ्छने कुण्डिनेशतनयाधिरोपिता।
केनचिन्नवतमालकोमल-श्यामलेन पुरुषेण नीयते॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

क्वचिदिति। समुद्रादौ या यतिः सा पदमध्येऽपि क्वचिद्भवति। यदि पदस्य यत्यपेक्षया पूर्वपरभागावेकवर्णौ न घटत इत्यर्थः। अत्रोदाहरणम्–"पादान्तयतिः पदमध्ये न भवति।" प्रत्युदहारणम्–

"प्रणमत भवबन्धक्लेशनाशाय नारायणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम्।"

पूर्वोत्तरभागयोरेकाक्षरत्वे तु यतिर्दोषाय। सा च धातुनामप्रत्ययाऽव्ययभागभेदेन चतुर्धा। तत्र क्रमेणोदाहरणानि–'एतासां राजति सुमनसां दाम कण्ठावलम्बि', 'स्वीकुर्वन्ति हि सुधियः प्रकुर्वते च', 'दुःसोढो दाशरथिमहिमा राक्षसानां बभूव', 'सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्दः शिवः', 'स्खलति सुरवधूकल्पासु रामासु को न', 'भुवि सुरगुरुदेशीयाः कियन्तो न सन्ति', 'कलिवशविवशः सम्प्रत्ययं जीवलोकः', 'रामेशं वा प्रतिदिनमुताहो रमेशं भजामः'। एवमन्यान्यपि सङ्कीर्णान्युदाहरणानि ज्ञेयानि। 'पूर्वान्तवत्स्वरः सन्धौ' इत्यस्यार्थः योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ सवर्णदीर्घादिः, स प्रायः पूर्वान्तवत्क्वचिदेव परादिवच्च द्रष्टव्य इति। अत एव 'अन्तादिवच्च' (पा० सू० ६-१-८) इति पाणिनिः सस्मार। पूर्वान्तवद्भावे यथा–'कस्ते दारिद्र्यदावानल! वदतु यशो वावदूकोऽपि दाने' 'स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमेवाभिरामा' (मे० १-५१)।

परादिवद्भावे यथा–'अन्तेवासिदयालुरुज्झितनयेनासादितो जिष्णुना' (वेणी. ३-६)। अत्र स्वरस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि परादिवद् भवति। तद्भक्तत्वात्।

यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ। इति।

पूर्वान्तवत्स्वरः सन्धावित्यादेरपि शेषः। तेन–'अस्या वक्त्राब्जमवर्जितपूर्णेन्दुशोभं विभाति' इत्यादौ यतिर्दुष्यति। तत्रापि पूर्वभागस्यैवैकवर्णताया दोषः न तूत्तरस्य। तदर्थमेव स्वरसन्धावनेनापवादकरणात्। यणादेशः परादिवदित्यत्रोदाहरणम्–'सप्ताकूपारपारप्रथितपृथुयशस्यर्थिसार्थे कृतार्थे।' व्यञ्जनस्यापि परादिवद्भाव इष्यते। यथा–'इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन्गुह्यकस्तं ययाचे' (मे० १-५) इति। 'नित्यं प्राक्पदसम्बद्धा' इति। तेभ्यः पूर्वा यतिर्न कार्येत्यर्थः। यथा–'बाले! भूपतिमौलिलालितपदद्वन्द्वत्ववृद्धेऽपि च'। आदिपदात् 'रक्षोभिः सुरमनुजैर्दितेः सुतैर्वा'। प्रत्युदाहरणं तु–

नमः शिवाय कृष्णाय च दानवविनाशिने।

'नित्यं प्राक्पदसम्बद्धा' इति किम्? 'तथाऽऽद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि' (नै० १-१)। चादय इति किम्?

सम्पत्तिः सैव रमणीसखैर्या भुज्यते भुवि।

अत्र समासान्तटच्प्रत्ययान्तसखिशब्दस्य नित्यं प्राक्पदसम्बद्धत्वेऽपि यतिर्न दुष्यति। 'परेण नित्यसम्बद्धा' इति। परादिति किम्? तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थः। 'प्रस्मृतः किमथवा पठितो नु' (नै० ५-१२१) आदिपदात् 'निजगृहे जयिनं तिसृणां पुराम्'। परेण नित्यसम्बद्धा इति किम्? कर्मप्रवचनीयेभ्यः पराऽपि यतिर्भवत्विति। यथा–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

श्रेयांसि बहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि।

प्रादय इति किम्?

राक्षसाधिपबलं प्रणाशयाञ्चक्रतू रघुवरौ वरौ रणे।

अयं त्वनेकाक्षराणां चादीनां प्रादीनां चादिवद्भावः पादान्तयतावेवेष्यते। एकाक्षराणां तु पादान्तयतौ पादमध्ये समुद्रादियतौ च। तदुक्तं कविकल्पलतायाम्–

एक स्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यकृत्। इति।

पादान्ते यतौ प्रत्युदाहरणं तत्रैवोक्तम्, यथा–

पिनाकपाणिं प्रणमामि स्मरशासनम्। इति।

पादमध्ययतौ प्रत्युदाहरणम्–'विष्णुं रुद्रं च खलु भजतां, नैव संसारबन्धः' अनेकाक्षराणां तु पादमध्ये चामीकरादिष्विव पूर्वापरभागयोरेकवर्णत्वाद्यतिरिष्टैव। तत्र चादीनां यथा–'प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम्' (मे० २-३२) इत्यादि। प्रादीनां यथा–'दूरारूढप्रमोदं हसितमिव परिस्पृष्टमासासखीभिः'। अत्र 'नित्यं प्राक्पदसम्बद्धा' इत्यत्र च 'स्वादु स्वच्छं च सलिलमिदं प्रीतये कस्य न स्यात्' इति। 'नित्यं प्राक्पदसम्बद्धा' इति किम्? 'मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः' (मे० १-३८) इति। 'परेण नित्यसम्बद्धा' इत्यत्र च 'दुःखं मे प्रक्षिपति हृदये दुःसहस्तद्वियोगः' इत्यादि वृत्तिकारैः समुद्रादियतिरुदाहृता। अन्ते च अयं तु पादान्तयतावन्तादिवद्भाव इष्यते, न तु पादमध्ययतौ इत्यादि स्वयमेवोक्तं तद्विचारणीयम्। तथा–

अनुक्तयतिकेऽप्येवं कार्या श्रुतिसखा यतिः।

तदुक्तं कविकल्पलतायाम्...

एवं यथा यथोद्वेगः सुधियां नोपजायते।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते॥

शुक्लाम्बरादयस्तु पादान्त एव यतिमाहुः। भरतादयस्तु यतिमेव नेच्छन्ति। अत एव कविप्रयोगाः। अत्र भर्तृहरेः–

लभेत सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीडयन्।
पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दितः॥
कदाचिदपि पर्यटञ्शशविषाणमासादये-
न्न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्॥ (नी० श०५) इति।

जयदेवस्यापि–'भावं शृङ्गारसारस्वतमिह जयदेवस्य विष्वग्वचांसि' (गी० गो०१२-१२) इति। तदुभयं बहुविरोधाच्चिन्त्यम्। इयं च यतिर्वृत्तस्वरूपाद् भिन्नाऽपि गुणालङ्काराद्यपेक्षयान्तरङ्गाङ्गत्वात्सूत्रकारादिभिर्लक्षणमध्ये निबद्धा, न तु वृत्तस्वरूपतया। मात्रागुरुलघुनियमनं हि वृत्तलक्षणं, विरामात्मकत्वं च यतेः। अत एव वामनेन काव्यालङ्कारसूत्रेषु 'न वृत्तदोषात् पृथग् यतिदोषो वृत्तस्य यत्यात्मकत्वात्' (वा० सू० २-२-५) इत्याशङ्क्य 'न, लक्ष्मणः पृथक्त्वात्' (वा० सू० २-२-६) इति परिहृतमित्यलम्॥ १२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–अब्धि से ४ संज्ञा समझनी चाहिए। इसी प्रकार भूत से ५, रस से ६, आदि पद से अश्व तथा मुनि की ७, वसु तथा नाग से ८, ग्रह से ९, दिशा से १०, रुद्र से ११, सूर्य से १२ संज्ञा का बोध होता है। अर्थात् इन संज्ञावाचक शब्दों से तत्तत् संख्याओं का बोध होता है। छन्द के चतुर्थ अंश को पाद समझना चाहिए। तथा यति का नाम विच्छेद या विश्राम समझें। अर्थात् यति का तात्पर्य या अर्धविराम अथवा पृथक् समझना चाहिए। छन्दःशास्त्र के पारिभाषिक शब्दों के अवबोधन के लिए यह संक्षिप्त निर्देश किया गया है, जिनका प्रयोग यथास्थान आगे होगा॥ १२॥

युक्समं विषमं चायुक्स्थानं सद्भिर्निगद्यते।
सममर्द्धसमं वृत्तं विषमं च ततः परम् ॥ १३॥

नारायणी–परिभाषान्तरमाह–युक्समिति। समं द्वितीयचतुर्थादिस्थानं युगिति सद्भिर्निगद्यते कथ्यते। विषमं चैक आदि स्थानं सद्भिरयुक् निगद्यते। चकारात्समस्य युग्मानोजसंज्ञे विषमस्यायुग्मौजसंज्ञे इत्यादि ज्ञेयम्।

पदैः पादाख्यैर्घटितं पद्यम्। तद् द्विविधम्–जातिर्वृत्तं चेति। जातिर्नियतमात्रिका। वृत्तं नियतगुरुलघुविन्यासम्। तत्र जातिरार्यादि। वृत्तमुक्तादि समार्धसमविषमात्मकम्। तदुक्तम्–

पद्यं चतुष्पदं तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षमरसङ्ख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत् ॥ इति॥

इत्येतत्सर्वं मनसि निधाय वृत्तप्रभेदानाह–समाख्यमिति।

समाख्यमर्धसमाख्यं विषमाख्यं चेति त्रिधा वृत्तमित्यर्थः॥ १३॥

तारा–छन्दःशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वानों ने 'सम' अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ पाद को युक् कहा है। तथा 'विषम' अर्थात् प्रथम, तृतीय पाद को अयुक्। इसी प्रकार 'च' से 'सम' को युग्म, अनोज तथा 'विषम' को अयुग्म, ओज भी कहा गया है। इससे **'सम' 'अर्धसम'** एवं **'विषम'** वृत्त होते हैं।

विशेषः–विद्वानों का कथन है–

पद्यं चतुष्पदं तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत् ॥ इति॥

अर्थात् पद्य चतुष्पद होते हैं। उनके वृत्त एवं जाति दो भेद हैं। वृत्त में अक्षरों की संख्या होती है और जाति में मात्राओं की गणना होती है। **'वृत्त'**, 'सम', 'अर्धसम' तथा 'विषम' भेद से तीन प्रकार का होता है। और **'जाति'** 'आर्यादि' भेद से अनेक प्रकार की है॥ १३॥

अङ्घ्रयो यस्य चत्वारस्तुल्यलक्षणलक्षिताः।
तच्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः समं वृत्तं प्रचक्षते ॥ १४॥

नारायणी–त्रिविधस्यापि वृत्तस्याऽन्वर्थसंज्ञामाश्रित्य क्रमेण स्वरूपमाह श्लोकत्रयेण–यस्याङ्घ्रयः पादाश्चत्वारोऽपि तुल्येन लक्षणेन लक्षिता युक्ताः, तच्छन्दःशास्त्रविशारदाश्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः समं वृत्तं वदन्ति॥ १४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—जिस छन्द के चारों चरणों (पादों) में समान लक्षण या गण होते हैं, उसे छन्दःशास्त्र के तत्त्वज्ञाताओं ने 'समवृत्त' कहा है। यथा—'स्रग्धरादि' छन्द हैं॥ १४॥

प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत्।
द्वितीयस्तुर्यवद् वृत्तं तदर्धसममुच्यते॥ १५॥

नाराणयी—द्वितीयश्चरणस्तुर्यवच्चतुर्थवत्। तथा चार्धं समं यस्य तदर्धसम-मित्यन्वर्थसंज्ञा॥ १५॥

तारा—प्रथम पाद के समान लक्षण जिसके तृतीय पाद में हों तथा इसी प्रकार द्वितीय पाद के लक्षण के समान लक्षण जिसके चतुर्थ पाद में हों, उसे छन्दःशास्त्र के तत्त्वज्ञों ने 'अर्धसम' छन्द (वृत्त) कहा है। यथा—उपचित्रादि वृत्त हैं॥१५॥

यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम्।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः॥ १६॥

नारायणी—यस्य पादचतुष्टयेऽपि परस्परं लक्ष्म लक्षणं भिद्यते तद्विषममाहुः, विगतं समं यस्मादिति व्युत्पत्तेः। तत्र समं पथ्यादि, अर्धसमं द्रुतमध्यादि, विषमं पदचतुरूर्ध्वादि॥ १६॥

तारा—और जिस छन्द के चारों पादों में भिन्न-भिन्न लक्षण हों, उसे छन्दःशास्त्र के विशारदों ने 'विषम' वृत्त (छन्द) कहा है। यथा—'पद-चतुरूर्ध्वादि' 'विषम वृत्त' निर्दिष्ट हैं॥ १६॥

आरभ्यैकाक्षरात् पादादेकैकाक्षरवर्धितैः।
पृथक्छन्दो भवेत्पादैर्यावत् षड्विंशतिं गतम्॥ १७॥

नारायणी—तत्र समवृत्तभेदानाह—एकाक्षरं पादमारभ्यैकेनाक्षरेण कविना वर्धितैः पादैः कृत्वा पृथग्भिन्नं भिन्नं छन्द उक्तादि भवेत्। वृद्ध्यवधिमाह-यावदिति। यावत्षड्विंशतिं २६ षड्विंशतिसङ्ख्याकं पादं प्रति गतं गमनं भवति। षड्विंशत्यक्षरपादपर्यन्तं वृद्धिर्भवतीत्यर्थः॥१७॥

तारा—जिस छन्द के चारों पादों में एक-एक अक्षर होता है उसे एकाक्षर छन्द कहा गया है। इसी प्रकार जिसके प्रत्येक पाद में दो-दो, तीन-तीन या चार-चार अक्षर होते हैं उन्हें क्रमशः द्व्यक्षर, त्र्यक्षर तथा चतुरक्षर छन्द कहते हैं। और क्रम से एक-एक अक्षर वृद्धिक्रम से छब्बीस अक्षरपर्यन्त चारों पाद समान अक्षर के होते हैं। ये छब्बीस प्रकार के भिन्न-भिन्न नाम से छब्बीस वर्णछन्द हैं॥ १७॥

तदूर्ध्वं चण्डवृष्ट्यादिदण्डकाः परिकीर्तिताः।
शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः॥ १८॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–अधिकाक्षरपादस्य छन्दसः संज्ञामाह–षड्विंशत्यक्षरपादाच्छन्दस ऊर्ध्वं सप्तविंशत्यक्षरपादं छन्दश्चण्डवृष्ट्यादिदण्डकसंज्ञं भवति। सप्तविंशत्यक्षरादेकैकेन रगणादिना वृद्धिः, न त्वेकैकाक्षरेण। आदिपदादर्णवादि॥

इह शास्त्रे विशेषलक्षणेनाऽलक्षितस्य छन्दसः कविभिश्च ग्रथ्यमानस्य सामान्यसंज्ञामाह–

शेषं विशेषनिरूपितादन्यत्। तदेवाह–त्रिभिरिति। क्वचित्त्रिभिः, क्वचित्षड्भिः, चकाराद् दशभिर्विलक्षणगुरुलघुक्रमवद्भिर्न्यूनाधिकाक्षरैश्च चरणैर्युक्ता यास्ता गाथा ज्ञेया इत्यर्थः ॥ १८ ॥

तारा–और छब्बीस अक्षरों से अधिक अक्षर वाले पादों से जो छन्द बनते हैं, उन्हें 'चण्डवृष्टि' आदि नामक 'दण्डक' छन्द कहते हैं। इनके अतिरिक्त जो शेष छन्द बनते हैं, वे 'गाथा' छन्द कहलाते हैं। और वे 'गाथाएँ' तीन अथवा छः पादों की होती हैं। चकाराद् न्यूनाधिक अक्षर वाले दस पादों तक 'गाथा' छन्द बनते हैं॥१८॥

उक्ताऽत्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठाऽन्या सुपूर्विका।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पङ्क्तिरेव च॥ १९॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथाऽतिजगती मता।
शक्वरी साऽतिपूर्वा स्यादष्टच्यत्यष्टी ततः स्मृते ॥ २०॥
धृतिश्चातिधृतिश्चैव कृतिः प्रकृतिराकृतिः।
विकृतिः सङ्कृतिश्चापि तथातिकृतिरुत्कृतिः ॥ २१ ॥
इत्युक्ताश्छन्दसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि साम्प्रतम्।
लक्षणं सर्ववृत्तानां मात्रावृत्तानुपूर्वकम् ॥ २२॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे संज्ञाभिधानो नाम प्रथमोऽध्यायः॥

नारायणी–पूर्वोक्तानामेकाक्षरपादमारभ्य षड्विंशत्यक्षरपादावधिकानां छन्दसां सामान्यतो जातिसंज्ञामाह–एकाक्षरपादा 'उक्ता' नाम। इयं च जातिसंज्ञा। अवान्तरसंज्ञास्तु वक्ष्यन्ते। एवमितरत्रापि द्व्यक्षरपादा 'अत्युक्ता'। एवं शेषा अपि ज्ञेयाः। अन्या सुपूर्विका, अनन्तरोक्ता प्रतिष्ठैव सुपूर्वा सती सुप्रतिष्ठा नामाऽन्या जातिरित्यर्थः। साऽतिपूर्वेति। सा शक्वर्यतिपूर्वा, अतिशक्वरीत्यर्थः। ननु सूत्रकारेण समच्छन्दसां गायत्र्यादीनामेवोक्तत्वादुक्ताद्युक्तेरुत्सूत्रत्वमिति चेन्न। 'द्विकौ ग्लौ' (पिं. सू.) इत्यादिसूत्रोक्तैकाक्षरादिप्रस्तारस्य तत्संज्ञायां ज्ञापकत्वात्। कविभिः प्रायेणाप्रयुक्तत्वात्तेषां लक्षणावसरेऽनुक्तिरिति भावः। ताः–१ उक्ता, २ अत्युक्ता, ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा, ५ सुप्रतिष्ठा, ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप्, ९ बृहती, १० पङ्क्तिः, ११ त्रिष्टुप्, १२ जगती, १३ अतिजगती, १४ शक्वरी, १५

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अतिशक्वरी, १६ अष्टिः, १७ अत्यष्टिः, १८. धृतिः, १६ अतिधृतिः, २० कृतिः, २१ प्रकृतिः, २२ आकृतिः, २३ विकृतिः, २४ सङ्कृतिः, २५ अतिकृतिः, २६ उत्कृतिः। अत्र प्रतिपादमेकैकाक्षरवृद्धौ सकले छन्दसि चतुरक्षरा वृद्धिर्भवति। तत्रोक्ता चतुरक्षरा। अत्युक्ताऽष्टाक्षरा। एवमुत्तरत्रापि। उत्कृतिश्चतुरधिकशताक्षरा॥

उक्तानुवादपूर्वकं वक्तव्यमाह–छन्दसामित्यमुना प्रकारेण जातिसंज्ञा उक्ताः। साम्प्रतमिदानीं मात्रावृत्ताऽनुपूर्वकं मात्रावृत्तमादितः कृत्वा सर्वेषां वृत्तादीनामुक्तानां क्रमशः क्रमेण लक्षणं वच्मि वदामीति योजना। प्रथमं मात्रावृत्तमुच्यते। तत उद्देशक्रमेण वर्णवृत्तमुच्यत इत्यर्थः॥ १६-२२॥

इति श्रीमद्विद्वन्मुकुटमाणिक्यश्रीमद्भट्टरामेश्वरसूनुनारायणभट्-विरचितायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां परिभाषाऽध्यायः प्रथमः॥ १॥

तारा–एकाक्षर से लेकर छब्बीस अक्षर पर्यन्त बने छन्दों की संज्ञा उक्तादि प्रभृति उत्कृति पर्यन्त क्रमशः निम्ननिर्दिष्ट प्रकार से है। तदनन्तर सभी छन्दों (वृत्तों) के लक्षण मात्रा एवं वर्ण के क्रम से बताते हैं॥ १ उक्ता, २ अत्युक्ता, ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा, ५ सुप्रतिष्ठा, ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप्, ६ बृहती, १० पङ्क्ति, ११ त्रिष्टुप् १२ जगती, १३ अतिजगती, १४ शक्वरी, १५ अतिशक्वरी, १६ अष्टि, १७ अत्यष्टि, १८ धृति, १६ अतिधृति, २० कृति, २१ प्रकृति, २२ आकृति, २३ विकृति, २४ संकृति, २५ अतिकृति, २६ उत्कृति।

क्रमशः संख्यानुक्रम से इनके वर्णों की संख्या भी समझनी चाहिए। यथा–'प्रथम उक्ता' एक अक्षर पाद तथा 'अन्तिम उत्कृति' छब्बीस अक्षर पाद का होता है। इनके लक्षण भेद-विभेद तथा उदाहरण अग्रिम अध्याय द्वितीय में बताये जा रहे हैं॥ १६-२२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः।

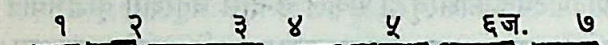

षष्ठोऽयं नलघू वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः॥ १॥

षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले मुखलाच्च सयतिपदनियमः।

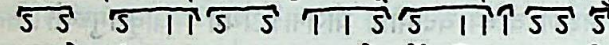

चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः॥ २॥

नारायणी—अथ मात्रावृत्तानि विवक्षुः प्रथममार्यां लक्षयति—लक्ष्मैतदिति द्वयेन। आर्यायाः प्रथमेऽर्धे एतन्नियतं सार्व्वत्रिकं लक्ष्म लक्षणं ज्ञेयम्। किं तत्। सप्तसङ्ख्याका गोपेता गुरुणा युक्ता गणाश्चतुर्मात्राः पूर्वोक्ताः। गुरूपेतत्वोक्तच्या यद्यपि 'स्वरा अर्धं चार्यार्धम्' (पिं. सू.) इति सूत्रे अर्धं चेति ग्रहणात्सार्धाः सप्त गणा भवन्तीति सामान्यत उक्तम्, तथाप्यर्धगणस्थाने एको गुरुरेवान्ते कार्यः, न तु लद्वयमिति सुचेतनीयम्। इहार्यार्धे। विषमे प्रथमतृतीयादौ। स्थाने जो जगणो मध्यगुरुर्गणो न कार्यः। षष्ठस्त्वयं जगणः कार्यः। नलघू वा कार्यौ। नश्च लघुश्चेति नलघू। चतुर्लघुर्वा गणः कार्य इत्यर्थः। अन्ये तु स्वेच्छया ज्ञेयाः। षष्ठे इति। द्वितीयलादित्यतः परं पूर्वमिति शेषः। षष्ठे न्ले षष्ठस्थाने चतुर्लघौ गणे कृते सति द्वितीयलात्तस्यैव षष्ठस्य चतुर्लघोर्गणस्य द्वितीयलघोः पूर्वं प्रथमलघ्वनन्तरं सयतिपदनियमो यतिसहितं पदं नियमेन समाप्यत इत्यर्थः। 'न्ले' इति प्रथमाद्विवचनं वा। ततश्च षष्ठे स्थाने यदि न्ले नलघू स्याताम्, तदा द्वितीयलात् पूर्वं यतिरित्यर्थः। परके न्ले, न-ले षष्ठापेक्षया परस्मिन्सप्तमे चतुर्लघौ कृते सति, मुखलात्सप्तमस्य प्रथमलघोः पूर्वं षष्ठगणान्ते सयति पदं नियम्यते। चरमे द्वितीये पुनरर्धे पञ्चमके न्ले चतुर्लघौ तस्मान्मुखलघोः पूर्वम्, अर्थाच्चतुर्थान्ते पदं समाप्यत इत्यनुषङ्गेण पूर्वपदाध्याहारेण च योज्यम्। इहेति। इहार्याचरमार्धे षष्ठो गणो लो लघुरेव भवति। न चतुर्मात्रिक इति पूर्वार्धाद्विशेषः। उत्तरार्धे एतावन्मात्रविशेषं वदता-ऽन्यत्पूर्वार्धलक्षणमेव भवतीति द्योतितम्। यतिनियमं छन्दोमाणिक्यकारोऽप्याह—

पूर्वार्धे षष्ठो जः खो वा खे चास्य लघुनि भवति यतिः।
षष्ठः खपरोऽत्र यतिस्तुर्योऽप्यथ भवति चरमदले॥ इति।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अस्यार्थः–ख इति चतुर्लघोर्गणस्य संज्ञा। पूर्वार्धे षष्ठो गणो जगणः खो वा कार्यः। खे तु षष्ठे गणे, अस्य लघूनि तदीयप्रथमलघ्वन्ते यतिर्भवति। यदि षष्ठः खपरः–खश्चतुर्लघुः परो यस्य स तथा सप्तमश्चतुर्लघुः स्यादित्यर्थः। तदात्र षष्ठान्ते वा यतिः। चरमदले–द्वितीयार्धे यदि तुर्यश्चतुर्थः खपरस्तत्रापि चतुर्थान्ते यतिरिति। यद्वा मूले पञ्चम्यौ ल्यब्लोपे। तेन द्वितीयलमादाय सयतिपद–नियमः, सयतिकपदप्रारम्भनियम इत्यादिरर्थः। उभयथापि लक्ष्येऽविसंवाद एव। किं त्वेतस्मिन्व्याख्याने 'न्लौ चेत्पदं द्वितीयादि' (पिं. सू. ४–१८) 'सप्तमः प्रथमादि' (पिं. सू. १९) इति सूत्रानुग्रहो भवति। पूर्वपदाध्याहारश्च कर्तव्यो न भवति। अत एव क्षेत्रराज आह–

षष्ठो द्वितीयमादाय लमेवारभ्यते पदम्।
सप्तमे न्ले पुनर्मुख्यं पूर्वार्धेऽसौ यतिः स्मृता॥
पदमारभ्यते नित्यं गृहीत्वा प्रथमं लघु।
पञ्चमे न्ले बुधैरेवं चरमार्धे स्मृता यतिः॥ इति।

छन्दोमाणिक्यं त्वार्धसूत्रार्थकथनेनापि सङ्गच्छते। अत्र यतिमात्रे नियते सति चामीकरादिवत्पूर्वापरभागयोरनेकाक्षरत्वे पदमध्ये यतिर्मा भूदिति पदस्याऽपि नियम उक्तः। तत्र स्पष्टास्पष्टविभक्तिकत्वयोर्न विशेषः। अत्र प्रथमाऽर्या षष्ठजगणपक्षे सामान्यलक्षणोदाहरणम्। षष्ठस्य चतुर्लघुत्वे पूर्वार्धद्विविधयतौ च द्वितीयाऽऽर्या–पूर्वार्धमुदाहरणम्। उत्तरार्धयतेस्तल्लक्षणस्य तदुत्तरार्धमिति विवेकः। अत्र विषमे जगणनिषेधात्प्रत्येकं चत्वारो विकल्पाः। यथा–

१ २ ३ ४
ऽऽ, ॥ऽ, ऽ॥, ॥॥, इति। समस्थाने तु जगणस्याऽनिषेधात्प्रत्येकं पञ्च।
१ २ ३ ४ ५
यथा–ऽऽ, ॥ऽ, ।ऽ।, ऽ॥, ॥॥, इति। ततश्च पूर्वार्धे प्रथमे भेदाः ४, द्वितीये ५, तृतीय ४, चतुर्थे ५, पञ्चमे ४, षष्ठे २ जन्लयोरेव विकल्पनात्। सप्तमे ४, अष्टमे गुरुरेकः। एतेषामन्योन्यगुणने द्वादश सहस्राणि, अष्टौ शतानि पूर्वार्धभेदाः। उत्तरार्धे तु षष्ठे लघुनियमनात्तदतिरिक्तं सर्वं पूर्ववदेव। तथा चान्योन्यगुणने षट्सहस्राणि चत्वारि शतानि भेदा उत्तरार्धे। उभयविकल्पानां परस्परगुणनेऽष्टौ कोटय एकोनविंशतिर्लक्षाणि विंशतिः सहस्राणि। इयमार्याणां भेदसङ्ख्या। अङ्कतोऽपि ८१९२०००। तदुक्तम्–

जगणविहीना विषमे चत्वारः, पञ्च युजि, चतुर्मात्राः।
षष्ठे द्वाविति च गणास्तथाङ्कतः प्रथमदलसङ्ख्या॥
एवमपरार्धसङ्ख्या षष्ठे स्याल्लघुनि चैकस्मिन्।
आर्यासङ्घ्चोभयदलसङ्घ्चाघातादिनिर्दिष्टा॥ इति॥

अत्रैव प्रसङ्गादार्यासु नष्टोद्दिष्टे उच्येते–

लोके प्रसिद्धनामा सीमा विद्याविनोदविभवानाम्।
जयतीह शुद्धचरितो रामेशाख्यो गुरुः काश्याम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

यदा कश्चिज्जिज्ञासेतेयमार्या कतिधेति, तदास्या गणान्स्थापयेत्। गणार्धश्चतुः पञ्चादिकं सङ्ख्याविकल्पं यथासङ्ख्यं स्थापयेत्। तत उपान्त्यमन्त्येन हत्वेष्टाद्विकल्पादधस्तनाञ्शेषान्विकल्पसङ्ख्यापूरकान्विकल्पानपनीय शेषया सङ्ख्यया तदाद्यं गणविकल्पाङ्कं हत्वा इष्टविकल्पाधस्तनविकल्पान् राशेरपनीय शेषाङ्कं पूर्वपूर्वेण गुणयित्वेष्टविकल्पाधस्तनविकल्पाङ्कं पातयेत्। एवं यावदाद्यगणं कुर्यात्। शेषसङ्ख्चयाऽऽर्यासङ्ख्यां जानीयात्। अत्र सर्वगुर्वन्तगुरुमध्यगुर्वादिगुरुसर्वलघुक्रमेणैवावस्थानेऽधस्तनत्वं ज्ञेयम्। अत्र न्यासः-

१	२	३	४	५	६	७	८ गु०
लोके	प्रसिद्ध-	नामा	सीमा	विद्या-	विनोद-	विभवा-	नाम्॥
ऽ ऽ,	। ऽ।,	ऽ ऽ,	ऽ ऽ,	ऽ ऽ,	। ऽ।,	।। ऽ,	ऽ,
४	५	४	५	४	२	४	१

१	२	३	४	५	६	७	८ गु-
जयती	ह शुद्ध-	चरितो	रामे-	शाख्यो-	गु-	रुः का-	श्याम्॥
।। ऽ,	। ऽ।,	।। ऽ,	ऽ ऽ,	ऽ ऽ,	।,	ऽ ऽ,	ऽ,
४	५	४	५	४	१	४	१

अत्रान्ते न्यस्तस्याऽर्धगणस्य विकल्पाभावादधस्तनाङ्कस्य द्वितीयाऽर्धे सप्तमाधस्तनैश्चतुर्भिर्गुणने जाताश्चत्वारः। सप्तमस्येष्टस्य सर्वगुरुत्वात्तस्याधस्तनान् ज (।ऽ।) गणव्यतिरिक्तानन्तगुर्वादिगुरुसर्वलघूं स्त्रींश्चतुर्षु पातयेत्। शेष एकः। षष्ठस्य लघुमात्ररूपत्वाद्विकल्पाऽभावः। पञ्चमाधस्थचतुर्भिरेकगुणने तत्राऽपि पूर्ववत्त्रयाणां त्यागे शेषस्यैकस्य चतुर्थाधस्थपञ्चभिर्हतौ चतुर्षु पातितेषु शेषस्यैकस्य तृतीयाधस्थैश्चतुर्भिर्हतौ शेषयोर्द्वयोस्त्यागे शेषद्वयस्य द्वितीयस्थैः पञ्चभिर्हतौ द्वये त्यक्ते शेषा अष्टौ। तेषां प्रथमस्थैश्चतुर्भिर्हतौ जगणातिरिक्ते द्वये त्यक्ते त्रिंशत्। एवमुत्तरार्धम्। पूर्वार्धान्त्यगणार्धं त्वविकल्पम्। सप्तमस्थैश्चतुर्भिस्त्रिंशतो द्वये पातिते शतमष्टादशाधिकम्। तस्य षष्ठस्थाभ्यां द्वाभ्यां हतौ एकस्य त्यागे पञ्चत्रिंशदधिकं शतद्वयं शिष्टम्। तस्य पञ्चमस्थैश्चतुर्भिर्हतौ त्रिषु पातितेषु शिष्टा सप्तत्रिंशदधिका नवशती। तस्यां चतुर्थस्थैः पञ्चभिर्हतायां चतुर्णां त्यागे एकाशीत्यधिकानि षट्चत्वारिंशच्छतानि। तेषु तृतीयस्थैश्चतुर्भिर्हतेषु त्रिषु पातितेषु अष्टादशसहस्राणि एकविंशत्यधिकानि सप्तशतानि च। तेषां द्वितीयस्थैः पञ्चभिर्हतौ द्वयोरपाये सहस्राणां त्रिनवतिस्त्र्यधिकाषट्शती च। तस्यां प्रथमस्थैश्चतुर्भिर्हतायां त्रयाणां त्यागे सिद्धोऽङ्को लक्षत्रयं चतुःसप्ततिः सहस्राणां नवाधिकानि चत्वारि शतानि च। अङ्कतोऽपि ३७४४०९। एतावत्सङ्ख्चेयं पूर्वोक्ताऽऽर्या भवति। तदुक्तम्-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गणानुद्दिष्टगाथायाः संस्थाप्य तदधो लिखेत्।
चतुःपञ्चादिकां सङ्ख्यां स्थानस्थानोचितां ततः॥
हत्वा हत्वाद्यमन्त्येन चोपरिस्थगणादधः।
पृथग्घातगणेभ्योऽथ गणसङ्ख्यां विकल्पयेत्॥
हताद्धार्योचिता तावद्यावदाद्यङ्क सम्भवः।
तत्सङ्ख्यामुद्दिशेद् गाथामुद्दिष्टप्रत्यये बुधः॥ इति
इत्यार्योद्दिष्टविधिः॥

अथ तन्नष्टम्। यथा लक्षत्रयं चतुःसप्ततिसहस्राणि चत्वारि शतानि नव चेत्येतत्सङ्ख्याऽऽर्या कीदृगिति जिज्ञासा, तदा नष्टाङ्कं लिखित्वा आदिभूतगण-विकल्पैर्भागं हरेत्। भागे हृते योऽङ्कः शिष्टस्तत्सम्मितं तद्गणविकल्पेषु गणं लिखेत्। भागहारे यल्लब्धं तत्सैकं कृत्वा पुनः पुनरुत्तरगणविकल्पैर्भागे हृते भाज्यशेषसङ्ख्याको गणस्तत्तद्गणविकल्पेषु पूर्वस्थापितगणानन्तरं स्थाप्यः। इत्येवं यावत्पूर्ति कार्यम्। यत्र तु गणविकल्प एव शिष्यते, तत्र तत्सङ्ख्य एव गणो ग्राह्यः। परं लब्धं सैकं न कार्यम्। शिष्टं पूर्ववत्। तद्यथा-प्रथमगणस्य चतुर्विकल्पत्वाच्चतुर्भिः पूर्वोक्ते नष्टाङ्के हृते लब्धं त्रिनवतिसहस्राणि द्व्यधिकानि च शेष एकाङ्क इति। द्वितीयगणस्य पञ्चविकल्पत्वात्तैर्भक्ते लब्धसहस्राण्यष्टादश विंशत्यधिकसप्तशती च शेषास्त्रय इति। तद्विकल्पेषु तृतीयो मध्यगुरुः स्थाप्यः। लब्धे सैके तृतीयस्य चतुर्विकल्पत्वात्तैर्भक्ते लब्धमशीत्यधिकषट्चत्वारिंशच्छतो शेष एक इति। तद्विकल्पेष्वाद्यः सर्वगुरुः कार्यः। लब्धे सैके चतुर्थः पञ्चविकल्प इति पञ्चभिर्भागे लब्धं नवशती षट्त्रिंशदधिका शेष एक इति। तद्विकल्पेष्वाद्यः सर्वगुरुः स्थाप्यः। लब्धे सैके पञ्चमस्य चत्वारो विकल्पा इति तैर्भक्ते लब्धं चतुस्त्रिंशदधिकं शतद्वयं शेष एक इति। तद्विकल्पेषु सर्वगुरुः स्थाप्यः। लब्धे सैके षष्ठस्य जगणन्लयोरेव विकल्पाद् द्वाभ्यां भक्ते लब्धं सप्ताधिकं शतं शेष एक इति। तद्विकल्पयोराद्यो मध्यगुरुः स्थाप्यः। लब्धे सैके सप्तमस्य चत्वारो विकल्पा इति, इति तैर्भक्ते लब्धं एकोनत्रिंशत् शेषं द्वयमिति। तद्विकल्पेषु द्वितीयोऽन्तगुरुः। ततः सर्वार्याभिमतं गुरुं न्यसेत्। एवं पूर्वार्धं स्थितम्। ततो लब्धे सैके आर्योत्तरार्धादि-गणश्चतुर्विकल्प इति चतुर्भिर्भक्ते लब्धं सप्त शेषं द्वयमिति। द्वितीयविकल्पोऽन्त-गुरुः। लब्धे सैके द्वितीयस्य पञ्च विकल्पा इति तैर्भक्ते लब्धमेकः शेषं त्रय इति। तृतीयविकल्पो मध्यगुरुः। लब्धे सैके तृतीयश्चतुर्विकल्प इति चतुर्भिर्भक्ते लब्धं शून्यं शेषं द्वे इति। द्वितीयविकल्पोऽन्तगुरुः। लब्धे शून्ये सैके चतुर्थः पञ्चविकल्प इति पञ्चभिर्भागे लब्धं शून्यं शेष एक इति। प्रथमविकल्पः सर्वगुरुः। लब्धे सैके पञ्चमश्चतुर्विकल्प इति तैर्भक्ते लब्धं शून्यमवशेष एक इति। प्रथमः सर्वगुरुः। अन्ते एको गुरुर्लेख्यो नियतत्वात्। एवं सत्येतादृशीयमिति पूर्वोक्तामेवार्यां वदेत्। तदुक्तम्-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नष्टाङ्के प्रथमे भक्ते गणाङ्कैश्चतुरादिकैः।
शेषसङ्ख्यो गणो ज्ञेयो लब्धं कुर्यात्सरूपकम्॥
पुनर्भजेत्पुनर्लब्धं सरूपं शेषसङ्ख्यया।
गणान्दद्याद् गते शेषे गाथायाः प्राग्गणक्रमः॥ इति।

एवमार्यान्तरेषु गीत्यादिषु च ज्ञेयम्। इत्यार्यानष्टविधिः॥ १-२॥

तारा—अब प्रथमतः मात्रावृत्तों का उल्लेख करते हुए सर्वप्रथम आर्या का लक्षण वर्णन करते हैं। वृत्तरत्नाकार के अनुसार आर्या के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्ध की पृथक्-पृथक् व्यवस्था की गई है। अतः तदनुसार आर्या के पूर्वार्द्ध में चार लघुमात्रिक सात गण होते हैं तथा अन्त में एक गुरु रहता है। इसमें विषम गण जगण (वर्णगण-मध्यगुरु वाला जगण) नहीं होना चाहिए। विषम अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम तथा सप्तम गण। षष्ठ गण जगण हो सकता है तथा नगण भी हो सकता है। यदि षष्ठ गण चार लघुमात्रिक हुआ तो द्वितीय लघुवर्ण के पूर्व अर्थात् प्रथम लघुवर्ण के पश्चात् यति (विराम) चिह्न होगा तथा इसी पर पदान्त भी रहेगा। यदि सप्तम गण चतुर्लघुमात्रिक गण हुआ तो प्रथम लघुवर्ण के पूर्व अर्थात् षष्ठ गण की समाप्ति पर ही यति (विराम) चिह्न रहेगा तथा पदसमाप्ति नियम का विधान भी होगा।

उत्तरार्द्ध में भी पूर्वार्द्ध के समान ही लक्षण रहेगा, किन्तु यदि पञ्चम गण उत्तरार्द्ध में चतुर्लघुमात्रिक हुआ तो प्रथम लघुवर्ण के पूर्व अर्थात् चतुर्थ गण के पश्चात् यति तथा पदनियम व्यवस्था है और षष्ठ गण मात्र एक लघुवर्ण का ही रहेगा, न कि चतुर्लघुमात्रिक। यथा—

विशेषः—लक्षणश्लोक ही उदाहरण भी प्रस्तुत करता है। दूसरे श्लोक के पूर्वार्द्ध में षष्ठ गण चतुर्लघुमात्रिक है '**च सयति**'। '**च**' पर यति तथा पदसमाप्ति भी है। और उत्तरार्द्ध में '**इह भवति**' पञ्चमगण चतुर्लघुमात्रिक है, तथा षष्ठ गण मात्र एक लघुमात्रिक वर्ण '**ति**' का है। चतुर्थगण की समाप्ति पर '**यति**' एवं पदसमाप्ति-नियम भी चरितार्थ है। उदाहरणान्तर देखें—

ऽ। ।।ऽ ।ऽ ऽ ।। ।। ऽ ऽ।ऽ ।ऽ ऽ ऽ
हन्त विरहः समन्तात् ज्वलयति दुर्वारतीव्रसंवेगः।
।। ऽ ।।।। ऽ ।। ।ऽ। ऽ ऽ।ऽ ।।ऽ
अरुणास्तपनशिलामिव पुनर्न मां भस्मतां नयति॥

इस उदाहृत पद्य में विषम स्थानीय १.३.५ एवं ७वें गण में मध्यम गुरुवाला जगण नहीं है। तृतीय चरण के अन्त में '**समन्तात्**' पर पादसमाप्ति है। इसके प्रथम पाद में बारह मात्राएँ भी हैं। चतुष्कलात्मक ७ गण भी यथावत् हैं। द्वितीय पाद में १८ मात्राएँ हैं। छठा गण यहाँ जगण है, अतः यह उदाहरण '**षष्ठ जगण**' वाली आर्या का है। अन्तिम वर्ण गुरु है॥ २॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

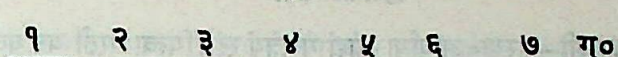

त्रिष्वंशकेषु पादो दलयोराद्येषु दृश्यते यस्याः।

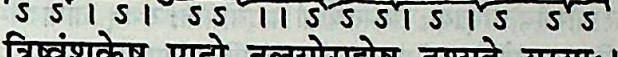

पथ्येति नाम तस्याश्छन्दोविद्भिः समाख्यातम् ॥ ३ ॥

नारायणी—अथ काँश्चिदार्याविशेषानाह—त्रिष्वंकेष्विति। आद्येषु त्रिष्वंशकेषु चतुर्मात्रिकेषु त्रिषु गणेषु यस्या दलयोरर्धयोः पादो दृश्यते कविप्रयोगेषु तस्या आर्याया नागश्रेष्ठेन पिङ्गलेन पथ्येति नाम प्रकीर्तितमुक्तम्। 'त्रिषु गणेषु पादः पथ्याद्ये च' (पिं. सू. ४-२२) इति सूत्रे इत्यर्थः। सर्वत्रात्र ऋषिनामनिर्देशः समूलताप्रदर्शनार्थः न त्वन्यतमत्व-प्रदर्शनार्थः। इदमेवात्रोदाहरणम्। एवमुत्तरत्राऽपि॥ ३ ॥

तारा—पूर्वोक्त लक्षणयुक्त जिस आर्या छन्द के पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध दोनों भागों में प्रथम तीन गणों के पश्चात् पाद अर्थात् यति या विराम दिखाई पड़ता है, उसे छन्दःशास्त्र के विद्वानों ने 'पथ्या' नाम से ख्यात किया है। अर्थात् आर्या के इस भेद को **'पथ्या'** कहते हैं। यथा—

विशेषः—इस 'पथ्या' छन्द का उदाहरण प्रस्तुत लक्षणश्लोक ही है। **"त्रिष्वंशकेषु पादो"** तथा **"पथ्येति नाम तस्याः"** इन दोनों स्थानों पर छन्द के दोनों भागों (पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध) में विराम है। यहीं पर दोनों में तृतीयगण की समाप्ति होती है। उदाहरणान्तर निम्न श्लोक में समझें—

। । । । । ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ।
जय जय जगदीश विभो, केशव कंसान्त माधवानन्त।
। । । । ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ
कुरु करुणामिति भणितिः, पथ्या भवरोगदुःखानाम्।

इस उदाहृत पथ्या छन्द के प्रथमार्ध में सात चतुष्कलात्मक गण के पश्चात् एक गुरु है और तीन गणों के पश्चात् यति (विराम) भी है। इसी प्रकार द्वितीयार्द्ध में पाँच चतुष्कलात्मक गण के पश्चात् एक षष्ठ गण, एक गुरु वाला तथा सप्तम चतुष्कलात्मक गण के पश्चात् एक है। तृतीय गण के पश्चात् यहाँ भी यति है। अतः पथ्या छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य **'पथ्या'** छन्द का उदाहरण है॥ ३॥

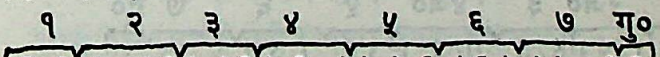

सँलङ्घ्य गणत्रयमादिमं शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः।

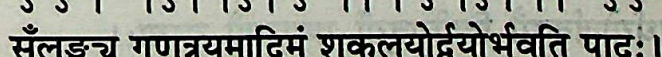

यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति ॥ ४ ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी—यस्या=आर्याया आद्यं गणत्रयं लङ्घयित्वा परतो यत्र क्वचिद् द्वयोः शकलयोरर्धयोर्व्यस्तयोः समस्तयोर्वा पादयोर्यतिः स्यात्, तामार्यामित्येवं प्रकारतया पिङ्गलनागो विपुलां समाख्याति कथयति। 'विपुलान्या' (पिं. सू. ४-२३) इति सूत्रे इतिशब्दं प्रकारवचनमङ्गीकृत्य व्याख्येयम्। तेन इतिनाऽनुक्तत्वा-द्विपुलामिति कर्मणि द्वितीयाया न विरोधः। प्रकारवाचिनेतिशब्देन चपलादीनामपि गणत्रयानन्तरविरामत्वप्रकारे सति विपुलात्वमपि भवतीति सङ्कीर्णभेदा अपि सङ्गृहीताः। इयं च त्रिविधा। पूर्वार्धे एव त्रिगणानन्तरविरामा मुखविपुला, उत्तरार्धे एव तादृग्जघनविपुला, उभयोरर्धयोस्तादृगुभयविपुलेति। इयमेव महाविपुलापि। अत्र 'षष्ठे' (वृ. १-२) इत्यादिमूलस्थाद्या। द्वितीया ममैव यथा—

करुणाविषये करुणां करुणावरुणालयाशु मयि धेहि।
राघव! करुणाशीलवतां विषमा न मनसो वृत्तिः॥

तृतीया मूलस्यैव॥ ४॥

तारा—जिस आर्या के तीन गणों का उल्लंघन करके अर्थात् तीन गणों के पश्चात् कहीं भी दोनों भागों (पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध) में यति (विराम) हो तो उसे **'पिंगलनाग'** नामक आचार्य **'विपुला'** छन्द कहते हैं। यथा—

विशेषः—लक्षणश्लोक ही उदाहरण-स्वरूप भी है। इसमें दोनों भागों में (पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में) तृतीय गण से हटकर ही यति (विराम) निर्दिष्ट है। मात्रिकगण बनाकर घटित कर लेना चाहिए। अर्थात् पूर्वार्द्ध में तृतीय गण पर यति न होकर **'मं'** पर यति है। उत्तरार्द्ध में भी तृतीय गण पर यति नहीं है, **'गो'** पर यति है। शेष लक्षण सामान्य आर्या के दोनों भागों में पूर्णतः घटित है। दूसरा उदाहरण निम्न आर्या है—

ऽ ऽ ।। ।।। । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ।। ऽ

या स्त्रीकुचकलशनितम्बमण्डला, जायते महाविपुला।
गम्भीरनाभिरतिदीर्घलोचना, भवति सा सुभगा॥

इस आर्या छन्द में प्रथम पाद तृतीय गण की समाप्ति **'तं'** पर पूर्ण नहीं होता, प्रत्युत आगे चलकर **'ला'** पर पूर्ण होता है। इसी प्रकार तृतीय पाद भी तृतीय गण **'दी'** पर ही पूर्ण न होकर आगे **'ना'** पर पूर्ण होता है। अतः यति-विधान अर्थात् पाद-समाप्ति दोनों भागों में लंघित है। इससे यह 'विपुला आर्या' का उदाहरण है॥ ४॥

१ २ज० ३ ४ज० ५ ६ ७ गु०

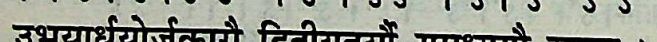

उभयार्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः।

चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन॥ ५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–यस्यां द्वयोरर्धयोर्व्यस्तयोः समस्तयोर्वा द्वितीयचतुर्थौ गणौ पश्चात्पुरःस्थितगुरुमध्यगतौ जगणौ स्याताम् साऽऽर्या चपला। एतदुक्तं भवति प्रथमो गणो द्विगुरुरन्त्यगुरुर्वा, तृतीयो द्विगुरुः, पञ्चमो द्विगुरुरादिगुरुर्वा, द्वितीयचतुर्थौ मध्यगुरु इति नियतमस्यामिति। अत्राद्यार्धे प्रथमे द्वौ विकल्पौ (ऽऽ, ।। ऽ), द्वितीय एकः (।ऽ।), तृतीयेऽप्येकः (ऽऽ), चतुर्थेऽप्येकः (।ऽ।), पञ्चमे द्वौ (ऽऽ, ऽ॥), षष्ठे द्वौ (।ऽ।, ।।।), सप्तमे चत्वारः (ऽऽ, ॥ऽ, ऽ॥, ।।।), अष्टमे गुरुरेव। अन्योन्यगुणने द्वात्रिंशत्। उत्तरार्धे षष्ठस्य लघुमात्रत्वात्षोडश। उभयार्धविकल्पानामन्योन्यगुणने द्वादशाऽधिका पञ्चशती विकल्पानाम्; अङ्कतोऽपि ५१२॥ ५॥

तारा–जिस आर्या छन्द के उभय भागों अर्थात् पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध में द्वितीय एवं चतुर्थ गण जगण हो और वह जगण दो गुरुओं के मध्य में हो अर्थात् जगण के पूर्व तथा उत्तर दोनों ओर गुरु हो तो उसे नागराज आचार्य ने **'चपला'** नाम का आर्या कहा है।

विशेष–लक्षण-श्लोक में ही उदाहरण घटित है, द्वितीय तथा चतुर्थ गण दोनों अर्द्धभागों में जगण है और दोनों भागों के जगणों के पूर्व तथा उत्तर दोनों भागों में गुरु है। अर्थात् चारों जगण गुरु के मध्य में है। यथा–

ऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ

'यार्धयोर्जका' 'रौ द्वितीयतुर्' 'लेतिनामतस्' 'याप्रकीर्तितम्' अथवा गुरुमध्यवाला जगण (वर्णगण) होना चाहिए। उदाहरणान्तर निम्न आर्या है–

।।ऽ। ऽ ।ऽऽ। ऽ ।ऽऽ। ऽ।ऽ ऽऽ

चपला न चेत् कदाचिन्नृणां भवेद्भक्तिभावना कृष्णे।
धर्मार्थकाममोक्षास्तदा करस्था न सन्देहः॥

इस आर्या छन्द के उभय भागों में द्वितीय गण **'न चेत्क'** तथा चतुर्थ गण **'नृणां भ'** उत्तरार्द्ध में भी द्वितीय गण **'र्थकाम'** व चतुर्थ गण **'तदाक'** मध्य गुरु वाला जगण (वर्णगण) है। अथवा यह जगण दो गुरु वर्ण **'ला-दा'** व **'चिन्-वेद्'** के मध्य में है। अतः यह पद्य **'चपला'** आर्या का उदाहरण है॥ ५॥

१ २ज० ३ ४ज० ५ ६ ७ गु०
ऽ ऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ।।ऽ।ऽ ऽ ऽ

आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः।

१ २ ३ ४ ५ ल० ७ गु०
ऽऽ ऽ।।ऽ ऽ ।।।ऽ ऽ।ऽ ।।ऽ

शेषे पूर्वजलक्ष्मा मुखचपला सोदिता मुनिना॥ ६॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–मुखविपुलादीनां सूत्रकारानुक्तत्वात्स्वयं स्फुटतया लक्षणाऽनुक्तावपि चपलाभेदौ सूत्रोक्तत्वाल्लक्षयति–**आद्यमिति**। यस्या आर्याया आद्यं प्रथमं दलमर्धं चपलानिष्ठं लक्ष्म लक्षणं भजेत्। शेषे द्वितीयार्धे पूर्वजं सामान्यार्याभवं लक्ष्म यस्याः सा तथा सा मुनिना पिङ्गलेन मुखचपलोक्ता। अत्र चपलापूर्वार्धविकल्पानां द्वात्रिंशतामार्याऽपरार्धविकल्पानां चतुःषष्टिशतरूपाणां परस्परताडनेन द्वौ लक्षौ चत्वारि सहस्राणि अष्टौ शतानि च विकल्पा भवन्ति। अङ्कतोऽपि २०४८०० ॥ ६ ॥

तारा–जिस आर्या छन्द का सम्पूर्ण पूर्वार्द्ध भाग चपला नामक आर्या के समान हो तथा उत्तरार्द्ध भाग सामान्य आर्या छन्द के लक्षण से युक्त हो तो मुनि ने उसे '**मुखचपला**' नाम से कहा है।

विशेष–लक्षण–श्लोक ही पूर्वार्द्ध भाग चपला के लक्षणों से युक्त है तथा द्वितीयार्द्ध भाग उत्तरार्द्ध सामान्य आर्या लक्षणों वाला है। अतः '**मुखचपला**' का उदाहरण भी यही है। षष्ठ गण लघु है।

उदाहरणान्तर निर्दिष्ट आर्या में देखें–

ऽ ।।। ऽ ।ऽऽ ।ऽ ।ऽऽ।ऽ ।ऽ ऽऽ

नन्दसुत वञ्चकस्त्वं, दृढं न ते प्रेम गच्छ तत्रैव।

ऽ। ।।। ऽ ऽऽ ऽ। ।ऽऽ। ।।।।ऽ

यत्र भवति ते रागः कापि जगादेति मुखचपला॥

इस आर्या में पूर्वार्द्ध चपला आर्या के समान द्वितीय व चतुर्थ गण '**तवञ्च**' तथा '**दृढं न**' वर्णगण जगण है और उत्तरार्द्ध सामान्य आर्या के समान षष्ठ गण एक लघुवाला तथा अन्तिम वर्ण गुरु है। अतः यह आर्या '**मुखचपला**' आर्या का उदाहरण समझें॥ ६॥

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ गु०

ऽ । । ऽ । ।ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ

प्राक्प्रतिपादितमर्धं प्रथमे प्रथमेतरे तु चपलायाः।

१ २ ज० ३ ४ज० ५ ल० ७ गु०

ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । । । । ऽ

लक्ष्माश्रयेत सोक्ता विशुद्धधीभिर्जघनचपला॥ ७ ॥

नारायणी–प्राक्प्रतिपादितं पूर्वोक्तं लक्ष्मसामान्यलक्षणं प्रथमार्धे भवति। प्रथमेतरे द्वितीयार्धे चपलाया लक्षणं भवति, साऽऽर्या विशुद्धा विवेकचतुरा धीर्बुद्धिर्येषां तैः पिङ्गलादिभिर्जघनचपलोक्ता। अत्रापि चपलायामिवोत्तरार्धविकल्पाः षोडश। पूर्वार्धे त्वष्टशताधिकद्वादशसहस्रसङ्ख्या आर्यापूर्वार्धविकल्पा अविकृता एव। परस्परं गुणने द्वौ लक्षौ चत्वारि सहस्राणि अष्टौ शतानि विकल्पाः।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अङ्कतोऽपि २०४८०० । उभयार्धयोश्चपलालक्षणयोगे महाचपला । सा च प्रथमैव मूले । अत्र चैका पथ्या विपुलाभेदत्रयं चेति चत्वारो भेदाः । पुनश्चैत एव प्रत्येकं चपलाभेदत्रयेण सम्पन्नाः सन्तो द्वादश। एवं मिलित्वा षोडशाऽऽर्याभेदाः स्थूलदृशां भवन्ति । एषां भेदानां मध्येऽनुक्तोदाहरणानि स्वबुद्ध्या ग्रन्थान्तराच्चात्रा-ऽवगन्तव्यानि । अस्माभिस्तूक्तप्रायत्वाद् ग्रन्थविस्तारभयाच्च नोक्तानि ॥ ७ ॥

इति श्रीनारायणभट्टविरचितायां वृत्तरत्नाकरटीकायामार्याप्रकरणम्।

तारा-प्रथम अर्द्ध-पूर्वार्द्ध भाग में जहाँ सामान्य आर्या छन्द का लक्षण घटित होता हो तथा द्वितीय उत्तरार्द्धभाग में 'चपला' छन्द के लक्षण हों तो उसे विशुद्धबुद्धि विद्वानों ने 'जघनचपला' नाम से कहा है।

विशेष-'प्राक् प्रतिपादितमर्धे' लक्षणश्लोक ही जघनचपला का उदाहरण भी समझें। इसका पूर्वार्द्ध सामान्य आर्या छन्द के लक्षणों से युक्त तथा उत्तरार्द्ध चपला के लक्षणों से युक्त है। अतः यही उदाहरण भी हुआ। अन्य उदाहरण यह है-

ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ ऽ। । । । ऽ । । । । । ऽ ऽ

कृष्णः शृङ्गारपटुर्यौवनमदरागचपलतालिताङ्गः।

ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ । । । । । ऽ ऽ

आसीद् व्रजाङ्गनानां मनोहरो जघनचपलानाम्॥

इस छन्द के पूर्वार्द्ध भाग में आर्या का सामान्य लक्षण 'सप्त गण तथा अन्तिम एक गुरु' है। किन्तु उत्तरार्द्ध में चपला का लक्षण द्वितीय (व्रजाङ्ग) व चतुर्थ (मनोहर) गण मध्यगुरु वाला वर्णगण जगण घटित होता है। अतः यह आर्या जघनचपला आर्या छन्द कहा गया है॥ ७॥

इत्यार्याप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गीतिप्रकरणम्

१ २ ३ ४ ५ ६ज० ७ गु०

ऽऽ।।।।ऽ ऽ।। ।। ।। ऽ।ऽ ।ऽ।। ऽ

आर्याप्रथमदलोक्तं यदि कथमपि लक्षणं भवेदुभयोः।

१ २ ३ ४ ५ ६ज० ७ गु०

।।ऽ ।।।। ऽ ऽ ऽ ऽऽ ऽ।ऽ ।ऽ ऽऽ

दलयोः कृतयतिशोभां तां गीतिं गीतवान्भुजङ्गेशः॥ ८ ॥

नारायणी–अथार्यालक्षणज्ञानपूर्वकज्ञेयस्वरूपत्वात्कैश्चिदार्याभेदत्वाङ्गीकाराद्गीतीर्लक्षयति–आर्येति। तदाशब्दोऽत्राध्याहार्यो यदिशब्दयोगाय। तथा च यद्यार्याप्रथमार्धोक्तलक्षणमुभयोरर्धयोः कथमपि विकल्पितषष्ठजगणचतुर्लघुगणान्यतमप्रकाराश्रयणेनाऽपि भवेत् तदा कृतयतिशोभां कृता यत्या विच्छेदात्मिकया शोभा श्रुतिसौभाग्यं यस्यास्ताम्। एतेनार्योक्तौ यस्तत्तद्गणविशेषे सति विरामविशेषः सोऽप्यस्यां भवतीति दर्शितम्। भुजङ्गेशः पिङ्गलस्तां गीतिं गीतवानुक्तवान्। 'आद्यार्धसमा गीतिः' (पिं. सू. ४-२८) इति सूत्रेणेत्यर्थः। ततश्चात्र द्वितीयार्धेऽपि पूर्णाः सगुरवः सप्त गणाः। न तु षष्ठे लघुमात्रमित्यादि ज्ञेयम्। इयमेका पथ्या, तिस्रो विपुलाः, द्वादश चपलाः। एतत्पूर्वोक्तत्वात्षोडशधा। तत्र पथ्यागीतिर्मूले। अन्याः स्वयमुदाहार्याः। अत्राद्यार्धमार्यावत्। द्वादश सहस्राण्यष्टौ शतानि च विकल्पाः। उत्तरार्धेऽपि तावन्त एव। परस्परहतौ कोटयः षोडशाऽष्टत्रिंशल्लक्षाश्चत्वारिंशत्सहस्राणि च विकल्पाः। अङ्कतोऽपि १६३८४०००० ।

पथ्यागीत्यादिषु चतुर्षु भेदेष्वियं संज्ञया ज्ञेया। द्वादशसु चपलागीतिषु पूर्वापरार्धविकल्पघाते सङ्ख्या स्वयमूह्या॥ ८॥

आर्या–यदि सामान्य आर्या के प्रथमार्द्ध का लक्षण दोनों भागों–पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में किसी प्रकार घटित हो जाय, तथा यति (विराम) चिह्न भी दोनों में सामान्य आर्या के ही समान हो तो आचार्य नागराज ने उसे 'गीति' छन्द के नाम से कहा है।

विशेषः–लक्षणकारिका के दोनों भागों में सामान्य आर्या के पूर्वार्द्ध के लक्षण घटित हैं, यति (विराम) चिह्न भी उसी के समान दोनों भागों में है। अतः यही इसका स्पष्ट उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न आर्या है–

ऽ।।ऽ।। ऽऽऽ।।ऽ ।।ऽ।ऽ ।।ऽ

केशववंशजगीतिर्लोकमनोहरणहारिणी जयति।

ऽऽऽऽऽऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ऽऽ

गोपीमानग्रन्थेर्विमोचनी दिव्यगायनाश्चर्या॥

इस आर्या के दोनों भागों में सामान्य आर्या के पूर्वार्द्ध का लक्षण सप्त गण व अन्तिम एक गुरु है। अतः यह 'आर्या' गीति है ॥ ८ ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

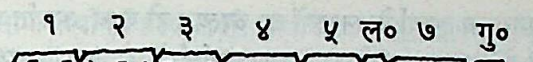

आर्याद्वितीयकेऽर्धे यद्गदितं लक्षणं तत्स्यात्।

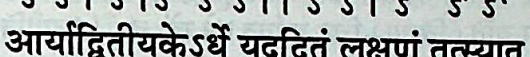

यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते ॥ ६ ॥

नारायणी-अत्रापि तदेति शेषः। यद्यार्याद्वितीयार्धे यदुक्तं लक्षणं षष्ठलघ्वादि, तदुभयोरर्धयोः स्यात्। तदोपगीतिं पिङ्गलः 'अन्त्येनोपगीतिः' (पिं. सू. ४-७६) इत्यत्राहेत्यर्थः। अस्यां पूर्वार्द्धे षट्सहस्राणि चत्वारिंशतानि विकल्पाः। उत्तरार्धेऽपि तावन्त एव। अन्योन्यघाते चतस्रः कोट्यो नव लक्षाः षष्टिः सहस्राणां विकल्पाः। अङ्कतोऽपि ४०६६०००० ॥ ६ ॥

तारा-आर्या के द्वितीय भाग उत्तरार्द्ध में जो लक्षण कहे गये हैं वही लक्षण यदि किसी प्रकार उभयभागों-पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध में भी हो जाँय तो मुनि ने उसे 'उपगीति' छन्द के नाम से कहा है।

विशेषः-इसका उदाहरण भी इसकी लक्षण-कारिका ही है। इसके दोनों भाग-पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध में सामान्य आर्या के उत्तरार्द्ध के लक्षण घटित हैं। अतः यही 'उपगीति' का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण देखें-

।।ऽ।ऽ।ऽऽ ऽऽ ऽऽ ।ऽऽऽ
नवगोपसुन्दरीणां रासोल्लासे मुरारातिम्।
ऽऽ।।।।ऽऽ ऽ।।ऽऽ।ऽ ऽऽ
अस्मारयदुपगीतिः स्वर्गकुरङ्गीदृशां गीतेः॥

इस आर्या छन्द के दोनों भागों में आर्या के उत्तरार्द्ध का सामान्य लक्षण 'षष्ठ वर्ण एक लघुवाला व अन्तिमवर्ण गुरु और सात ही गण' पूर्णरूपेण घटित होता है। अतः यह 'उपगीति' आर्या छन्द है ॥ ६ ॥

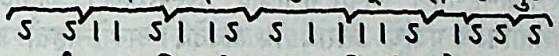

आर्याशकलद्वितयं व्यत्ययरचितं भवेद्यस्याम्।

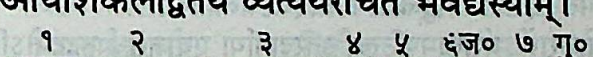

सोद्गीतिः किल कथिता तद्वद्यत्यंशभेदसंयुक्ता ॥ १० ॥

नारायणी-आर्यार्धद्वयं यस्या व्यत्ययेन विपर्यासेन यत्पूर्वार्धं तदुत्तरार्धम् यदुत्तरार्धं तच्च पूर्वार्धमित्येवंरूपेण रचितम्, सा किलेति प्रसिद्धा। उद्गीतिरुक्ता। तेनैव तद्वदिति पथ्याद्यार्याभेदवदेव यत्या विरामेण योंऽशभेदः पादभेदस्तेन युक्तेत्यर्थः। अत्रार्यावद्विकल्पसङ्ख्या। यथा-८१६२०००० ॥ १० ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा-जहाँ सामान्य आर्या के लक्षणों का व्यत्यय हो जाय, अर्थात् पूर्वार्द्ध का लक्षण उत्तरार्द्ध में तथा उत्तरार्द्ध का लक्षण पूर्वार्द्ध में हो, इस प्रकार दोनों में वैपरीत्य हो और यति (विराम) चिह्न पूर्ववत् बने रहें, वहाँ 'उद्गीति' छन्द कहलाता है।

विशेषः-प्रस्तुत लक्षणकारिका में सामान्य आर्या के लक्षणों का व्यत्यय (उलटा) हुआ है तथा यति (विराम) चिह्न पूर्ववत् बने हैं। अतः यह 'उद्गीति' छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर निम्न आर्या में समझें-

ऽ ऽ।ऽ । ऽ।।ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ ऽ ऽ

नारायणस्य संततमुद्गीतिः संस्मृतिर्भक्तचा।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ।।ऽ

आचार्यामासक्तिर्दुस्तरसंसारसागरे तरणिः॥

इस आर्या पद्य में पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध के लक्षणों का व्यत्यय हुआ है अर्थात् प्रथमार्द्ध का लक्षण 'सप्त गण व एक गुरु' उत्तरार्द्ध में घटित है तथा उत्तरार्द्ध का लक्षण 'सप्त गण, षष्ठ गण एक लघुवाला व अन्तिम वर्ण गुरु' पूर्वार्द्ध में है। अतः इस क्रम का व्यतिक्रम होने के कारण यह 'उद्गीति' आर्या का उदाहरण है॥१०॥

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ गु० गु०

ऽ ऽऽ ऽ ऽ ।। ।।ऽ ऽ ऽ।ऽ ।।ऽ ऽ ऽ

आर्यापूर्वार्द्धं यदि गुरुणैकेनाधिकेन निधने युक्तम्।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ गु० गु०

।।ऽ ऽ ऽ।। ऽ ।ऽ ।ऽ ।।ऽ।ऽ ऽ ऽ ऽ

इतरत्तद्वन्निखिलं दलं यदीयमुदितेयमार्यागीतिः॥ ११॥

नारायणी-आर्यापूर्वार्धं यद्येकेनाधिकेन गुरुणा निधने अन्ते युक्तं स्यात्। इतरच्च द्वितीयं समस्तं यदीयमर्धं तद्वत्पूर्वार्धवदियमार्यागीतिरिति मुनिनोक्ता। आर्यायां हि पूर्वार्धे सगुरुकाः सप्त गणाः। इह तु पूर्णा अष्टौ गणा अर्धद्वयेऽपि भवन्ति। अन्तिमस्तु गणो द्विगुरुरेव। अन्यत्सर्वमार्यापूर्वार्धतुल्यमेवेति भावः। अत्रार्यापूर्वार्धविकल्पानामष्टमगणे विकल्पाभावात् परस्परताडने जातोऽङ्को द्वादशसहस्राण्यष्टौ शतानि च पूर्वार्धे उत्तरार्धेऽपि तावदेव। अन्योन्यहतौ जाता मुख्यगीतिवद् भेदसङ्ख्या। अङ्कतोऽपि १६३८४०००००।

केचित्त्वत्रोत्तरार्धेऽर्धशब्दमपठित्वा इतरदार्याया एवोत्तरार्धं तद्वदन्तेऽधिकैकगुरुयुक्तं स्यात्साऽऽर्यागीतिरिति। आर्यापूर्वार्धमित्यत्र समस्तमप्यार्याशब्दं षष्ठ्यन्तं समासान्निष्कृष्टमनुषज्य पूर्वार्धस्याष्टगणत्वेन 'द्वात्रिंशन्मात्रताम्' उत्तरार्धस्यैकोनत्रिंशन्मात्रतां चाभिप्रेत्य व्याचक्षते। भवतु, नामैतद्व्याख्याकौशलम्, किं तु बहूनामसम्मतम्, सूत्राननुगुणं च 'अर्धे वसुगण आर्यागीतिः।' (पि. सू. ४-६१) इति हि सामान्यतोऽर्धे वसुगणेऽष्टगणे सतीति। यद्वा द्वे अप्यर्धे यद्यष्टगणे स्यातामिति सूत्रकार आह। कैश्चित्त्वियं सङ्गीतिरिति संज्ञिता। अपरैः स्कन्धकमिति।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गीतीनामप्यार्यापूर्वकत्वादार्यात्वमस्त्येव। एताश्चतस्रोऽपि गीतयः प्रत्येकं पथ्यादिपूर्वोक्तषोडशप्रकारार्यासम्भिन्नतया षोडशेति मिलिताश्चतुःषष्टिः। पूर्वाश्च षोडशार्या इति मिलित्वाऽशीतिः। तदुक्तं हलायुधेन–

एकैव भवति पथ्या तिस्रो विपुलास्ततश्चतस्रस्ताः।
चपलाभेदैस्त्रिभिरपि भिन्ना इति षोडशार्याः स्युः॥
गीतिचतुष्टयमित्थं प्रत्येकं षोडशप्रकारं स्यात्।
साकल्येनार्याणामशीतिरेवं विकल्पाः स्युः॥ इति।

छन्दोविचितौ त्वेकादशाऽपरे गीतिभेदाः प्रदर्शिताः। ते यथा, आर्यैव–दलद्वयेऽप्यधिकैकगुरुयुता सङ्गीतिः। ममैव यथा–

आगमविद्यैकनिधिर्विबुधेन्द्रशतैरधीतनिगमविलासः।
रामेश्वरभट्टगुरुर्जयति पिता मे पितामहतुल्यः॥ (१)

पूर्वार्ध एवाधिकैकगुरुयुक् सुगीतिर्नाम। पितामहगुरुरिति पठित्वा पूर्वमेवोदाहरणम्। (२) यद्युत्तरार्ध एव तादृक्तदा प्रगीतिर्नाम। 'अधीतनिगमार्थः' इति पठित्वा प्रथममेवोदाहार्यम् (३) सुगीतिरेव व्यत्यस्तार्धा मञ्जुगीतिः। सुगीत्युदाहरणमेव व्यस्तार्धं ज्ञेयम्। (४) प्रगीतिरेव व्यत्यस्तार्धं मञ्जुगीतिः। प्रगीत्युदाहरणं व्यत्यस्तार्धमत्रोदाहरणम्। (५) यद्युपगीतिरर्धद्वयेऽप्यधिकैकगुरुयुक् स्यात्तदा विगीतिः। ममैव यथा–

विषयान्विषधरविषमान्संस्मृतिमपि नीरसां ज्ञातवतः।
संसारसारभूते दशरथबाले मतिः स्थैर्यमीयात्॥ (६)

यद्युद्गीतिर्द्वयोरप्यर्धद्वयेऽप्यधिकगुरुयुक्ता तदा चारुगीतिः। अत्र पूर्वोक्तं सङ्गीत्युदाहरणमेव विपर्यस्तार्धं ज्ञेयम् (७)। आर्यागीतेरेवैकगुरुहीनोत्तरार्धतार्या वल्लरीत्वम्। ममैव यथा–

पीनोन्नतकुचकलशा पीवरजघनोरुभारमन्थरयाता।
पश्यन्ती प्रणयदृशा तरुणी कं वा न चालयेत्पुरुषम्॥ (८)

तस्या एव पूर्वार्ध एव तथात्वे ललितेतिसंज्ञा अर्धयोर्व्यत्यासेनाऽनन्तरमेवोदाहरणम् (९) उपगीतिरेवाद्यार्धेऽधिकैकगुरुयुता प्रमदा नाम। ममैव यथा–

यस्य विलासवतीनां केलिकलाकौशले रतिविरतिः।
मैथुनमात्ररसज्ञः शृङ्गविहीनः पुमान्स पशुः॥ (१०)

सैवोत्तरार्धेऽधिकैकगुरुयुता चन्द्रिका नाम। व्यत्यस्तार्धे पूर्वमेवोदाहरणम् (११) एतासामपि पूर्वोक्तपथ्यादिषोडशार्याणां सम्भिन्नतया प्रत्येकं षोडशधात्वे सति सङ्ख्या १७६। एतासामुदाहरणानि स्वयमूह्यानि। विस्तरभयात्तु नोच्यन्ते। पूर्वोक्तानां चतुर्विधगीतानां च तथैव षोडशधात्वे सङ्ख्या ६४ ऐक्ये गीतिसङ्ख्या २४०। पूर्वोक्तषोडशशुद्धार्याभेदैक्ये सङ्ख्या २५६ ॥ ११ ॥

॥ इति श्रीनारायणभट्टविरचितायां वृत्तरत्नाकरटीकायां गीतिप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–यदि सामान्य आर्या छन्द का पूर्वार्द्ध अन्त में एक गुरु अधिक से युक्त हो जाय। अर्थात् आर्या के पूर्वार्द्ध में सात गणों के पश्चात् एक गुरु की अपेक्षा दो गुरु हो जाँय, अन्य स्थिति दोनों भागों की यथावत् बनी रहे तो उसे आचार्यों ने '**आर्या गीति**' नाम से कहा है।

विशेषः–उपर्युक्त इसी लक्षणकारिका में पूर्वार्द्ध के अन्त में एक गुरु अधिक है। अर्थात् सात गण 'निधने' पर पूर्ण हो जाते हैं। तत्पश्चात् 'युक्तम्' में दो गुरु हैं। इस प्रकार एक गुरु तो सामान्य आर्या के पूर्वार्द्ध में सात गणों के अनन्तर रहता ही है, किन्तु यहाँ अन्त में दो गुरु हैं। अतः यही '**आर्या गीति**' का उदाहरण भी हो गया। उदाहरणान्तर निर्दिष्ट आर्या है–

ऽ ऽ ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ ऽ

हर्षाश्रुस्तिमितदृशः प्रमोदरोमाञ्चकञ्चुकाञ्चितदेहाः।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ ऽ गु.

आर्यागीतिं भक्ता गायन्ति श्रीपतेश्चरितसम्बद्धाम्॥

इस उद्धृत आर्या के पूर्वार्द्ध में 'सप्त गण व दो गुरु' हैं, इसी प्रकार उत्तरार्द्ध में भी समान रूप से लक्षण घटित है। अतः यह आर्या '**आर्यागीति**' छन्द का उदाहरण है॥११॥

॥ इति गीतिप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

वैतालीयप्रकरणम्

६मात्राः र० ल० गु० ८मात्राः र० ल० गु०

ऽ ।।ऽ ऽ । ऽ ।ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ।ऽ।ऽ

षड्विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्चसमे स्युर्नो निरन्तराः।

। । ऽ । ।ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ।ऽ

न समाऽत्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥ १२॥

नारायणी-मात्राच्छन्दसां प्रकृतत्वाद्वैतालीयप्रकरणमारभते-षडिति।

वैतालीये छन्दसि विषमे, अर्थात्पादे, प्रथमे तृतीये च षट् कला मात्राः स्युः। समे पादे द्वितीये चतुर्थे चाष्टौ कलाः स्युः। अन्ते उक्तानां कलानामन्ते परस्ताद् रलौ रगणलघू गुरुश्च भवतीति वैतालीयस्वरूपपरिच्छेदः। एतदुक्तं भवति विषमे पादे चतुर्दश, समे च षोडश मात्राः कार्याः। तन्मध्येऽन्तिमा अष्टौ मात्रा रेफलघुगुरुभिः कार्या इति। विषमे पश्चात्षट् समेऽष्टौ अवशिष्यन्ते, तासां निवेशने नियमविशेषमाह-ताश्चेति। समे ताः षट् कला निरन्तरा नो न स्युः केवलाः षट् लघव एव न कार्याः किं तु गुरुमिश्रा इत्यर्थः। समे विशेषोक्त्या विषमे स्वरुचिः। अत्राऽवशिष्टासु च कलासु षट्स्वष्टसु च कला द्वितीया चतुर्थी षष्ठी च परया तृतीयपञ्चमसप्तमकलयाश्रिता मिलिता न भवति, द्वितीयतृतीय-कलादीनामेकेन गुरुणोपादानं न कार्यमित्याशयः। अत्र विषमपादयोराद्यासु षण्मात्रास्वष्टौ विकल्पाः। यथा-ऽऽऽ, ।। ऽऽ; ऽ।।ऽ, ॥।ऽ, ऽऽ॥, ॥ऽ॥, ऽ॥॥, ॥॥॥, समपादयोराद्यास्वष्टमात्रासु त्रयोदश विकल्पाः-ऽऽऽऽ, ॥ऽऽऽ, ।ऽ।ऽऽ, ऽऽ॥ऽ, ऽऽ॥ऽ,॥ऽ॥ऽ, ऽ॥॥ ऽ, ऽऽऽ॥, ॥ऽऽ॥, ऽ॥ऽ॥, ॥॥ऽ।।, ऽऽ॥॥, ॥ऽ॥॥, एते आर्याभिर्वर्णक्रमेण निबद्धाः कैश्चित्-'मीनाङ्काः (१) सुरसङ्गैः (२) पङ्कजसौ (३) रभितजलाः (४) तत्सारस (५) खगसम्भृत (६) सज्जनमुदि (७) ककुभिककुभि (८)'॥

एते विषमे पादे। हंसस्मेरा (१) अलिकेशास्या (२) नीरजवक्त्राः (३) कुवलयनेत्राः (४) सुस्वच्छजलाः (५) सुतरङ्गभुजाः (६) केशरदशना (७) राजन्ते कृत (८) जनहर्षा भुवि (९) शारदरात्रिषु (१०) विमलनिशाकर (११) भानुप्रभृतिषु (१२) ननु पश्य सुयनु (१३)॥, एते समे॥ ततोष्टभिस्त्रयोदश गुणिताश्चतुरधिकशतं वैतालीयस्याद्यार्धे भेदाः। एतावन्त एवाऽपरार्धे। परस्परहता जातं दश सहस्राण्यष्टौ शतानि षोडश च। अङ्कतोऽपि १०८१६। इयमेवौपच्छन्द-सिकापातलिकयोर्वक्ष्यमाणयोः सङ्गच्छा ॥ १२॥

तारा-जिस छन्द के विषम पाद अर्थात् प्रथम एवं तृतीय पाद में छः मात्राएँ हों तथा सम पाद अर्थात् द्वितीय-चतुर्थ पाद में आठ मात्राएँ हों, और अन्त में

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

चारों पादों में एक रगण एक लघु तथा एक गुरु रहे, उसे '**वैतालीय**' छन्द कहा जाता है। किन्तु साथ ही समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में आठ मात्राएँ नैरन्तर्य से नहीं रहनी चाहिए। तथा कोई भी समकला-२।४।६।८ मात्राएँ परस्पर एक-दूसरे के आश्रित (सम्मिलित) न रहें। अर्थात् द्वितीय कला तृतीय से, चतुर्थ कला पञ्चम से, षष्ठ कला सप्तम से तथा अष्टम कला रगण के साथ नहीं मिलनी चाहिए। यह विशेष ज्ञातव्य है।

विशेषः-'वैतालीय' छन्द का सामान्य लक्षण प्रस्तुत करते हुए लक्षण-कारिका को ही उदाहरणस्वरूप निर्दिष्ट किया गया है। प्रथम पाद में सर्वप्रथम '**षड्विषमे**' तक छः मात्राएँ हैं। '**अष्टौ समे**' में रगण है और इसके पश्चात् एक लघु व एक गुरु '**कला**' में है। तृतीय पाद में भी ठीक यही स्थिति है। '**न समात्र प**' यह छः मात्राएँ हैं, इसके पश्चात् '**राश्रिता**' रगण है और तदनन्तर एक लघु एक गुरु 'कला' में है। समपाद द्वितीय में सर्वप्रथम आठ मात्राएँ '**ताश्च समे स्युः**' में है, '**नो निरं**' में रगण है और '**तराः**' में एक लघु, एक गुरु है। इसी प्रकार चतुर्थपाद 'वैतालीये' में आठ मात्राएँ, '**ऽन्ते रलौ**' में 'रगण' और '**गुरुः**' में एक लघु तथा एक गुरु है। इसी तरह सम पादों में नैरन्तर्य से लघु व गुरु '**ताश्च समे स्युः**' में लघु-गुरु नहीं है। साथ ही सम कला २-४-६-८ पराश्रित भी नहीं है। अतः सम्पूर्ण लक्षण कारिका में ही घटित है। उदाहरणान्तर निम्न पद्य में देखें-

।।ऽ।।ऽ। ऽ।ऽ ।।ऽऽ।। ऽ।ऽ ।ऽ
घुसृणेन मदन-चर्चितं तव यन्निन्दति राधिके कुचम्।
।।ऽ।।ऽ। ऽ।ऽ ऽऽऽऽऽ ।ऽ ।ऽ
मुदमातनुतेऽत्र पाकिनं तद्वैतालीयं फलं हरेः॥

इस उद्धृत पद्य के प्रथम एवं तृतीय (विषम) पाद के प्रारम्भ में छः कलाएं हैं, इसके पश्चात् एक रगण (वर्णगण), एक लघु व एक गुरु है। इसी प्रकार द्वितीय एवं चतुर्थ (सम) पाद के प्रारम्भ में आठ कलाएँ, पश्चात् एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। समपादों (२-४) में सभी आठों कलाएँ लघु नैरन्तर्य से नहीं है। साथ ही २-४-६-८ सम कलाएँ स्वतन्त्र हैं, किसी से मिली नहीं हैं। अर्थात् प्रथम व तृतीय पाद की प्रारम्भिक छः कलाओं में द्वितीय '**सृ-द**', चतुर्थ '**णे-मा**', षष्ठ '**म-नु**' आगे की कलाओं से मिली नहीं हैं। इसी प्रकार द्वितीय व चतुर्थ पाद की आठ कलाएँ भी अग्रिम कलाओं से मिली नहीं हैं। द्वितीय पाद में द्वितीय '**व-त**' चतुर्थ '**यन्-वै**', षष्ठ '**निन्-ता**', और अष्टम '**द-ली**' भी अपनी अग्रिम कलाओं से मिली नहीं है। अतः यह पद्य '**वैतालीय**' छन्द का उदाहरण है। क्योंकि इसमें वैतालीय छन्द का लक्षण पूर्णरूपेण घटित हो जाता है ॥ १२ ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

६मात्राः र० य० ८मात्राः र० य०

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

पर्यन्ते यौं तथैव शेषं त्वौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम् ॥ १३ ॥

नारायणी–वैतालीयभेदानाह–विषमसमपादयोः षण्णामष्टानां च कलानामन्ते यौं रेफयगणौ स्याताम्, शेषं षडष्टकलानियमादि तथैव सामान्य-वैतालीयवदेव यदा तदाच्छन्दोविद्भिरौपच्छन्दसिकसंज्ञं वैतालीयमुक्तम्। वैतालीय एव प्रतिचरणमेकगुर्वाधिक्येन विषमपादे षोडश, समपादे चाष्टादशमात्राः कार्या इति भावः॥ १३॥

तारा–जिस 'वैतालीय' छन्द के अन्त में एक रगण व एक यगण हो, शेष सब वैतालीय छन्द के लक्षण के सदृश हो, उसे सुधीजनों ने **औपच्छन्दसिक** छन्द कहा है। अर्थात् जिस छन्द में विषम (१-३) पादों में छः मात्राओं के पश्चात् एक रगण व एक यगण हो तथा सम (२-४) पादों में आठ मात्राओं के पश्चात् एक रगण व यगण हो और शेष सभी लक्षण वैतालीय के समान हों, उसे **'औपच्छन्दसिक'** छन्द कहते हैं।

विशेष-लक्षणकारिका में ही उदाहरण घटित करें। यथा-प्रथम पाद में **'पर्यन्ते'** की छः मात्राओं के बाद **'यौं तथैव शेषं'** में एक रगण व एक यगण है। इसी प्रकार द्वितीय पाद में **'त्वौपच्छन्दसि'** की आठ मात्राओं के बाद **'कं सुधीभिरुक्तम्'** में एक रगण, एक यगण है। अतः लक्षण-कारिका ही उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण देखें-

ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

वाक्यैमधुरैः प्रतार्य पूर्वं यः पश्चादभिसन्दधाति मित्रम्।

ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

तं दुष्टमतिं विशिष्टगोष्ठ्यामौपच्छन्दसिकं वदन्ति बाह्याः॥

इस उद्धरण के प्रथम एवं तृतीय पाद में छः कलाओं के पश्चात् **'रैः प्रतार्य पूर्वं'** **'सन्दधाति मित्रम्'** में एक रगण व एक यगण है। इसी प्रकार द्वितीय एवं चतुर्थ पाद में आठ कलाओं के पश्चात् **'तिं विशिष्टगोष्ठ्याम्'** **'कं वदन्ति बाह्याः'** में एक रगण व एक यगण है। इस प्रकार औपच्छन्दसिक छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य **'औपच्छन्दसिक'** का उदाहरण है॥ १३॥

६ मात्राः भ० २ गु० ८ मात्राः भ० २ गु०

ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

आपातलिका कथितेयं भाद्गुरुकावथ पूर्ववदन्यत्॥ १४॥

नारायणी–षण्मामष्टानां च मात्राणां पर्यन्ते भाद्भगणात्परौ गुरूकौ गुरु स्यातामिति रेफलघुगुरूणामपवादः। अथान्यच्छेषं पूर्ववद्वैतालीयवत्। सेयमापा-तलिका सुधीभिः कथितमिति पर्यन्तसुधीशब्दानुषङ्गेण योज्यम्॥ १४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस छन्द में 'वैतालीय' छन्द के समान सभी लक्षणों के साथ विषम (१-३) पादों में छः मात्राओं के अनन्तर तथा सम (२-४) पादों में आठ मात्राओं के अनन्तर एक यगण तथा दो गुरु हों उसे '**आपातलिका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–उदाहरण लक्षणकारिका ही है। यथा–प्रथम पाद के '**आपातलि**' में छः मात्राओं के अन्त में '**-का कथितेयं**' में एक यगण के बाद दो गुरु है। इसी प्रकार द्वितीय पाद के '**भाद् गुरुकावथ**' में आठ मात्राओं के अन्त में '**पूर्ववदन्यत्**' में एक भगण दो गुरु हैं। अतः लक्षणकारिका ही उदाहरण भी हुआ। अन्य उदाहरण निम्न पद्य है–

ऽ।।ऽऽ ।।ऽऽ ऽऽऽ ।।ऽ।।ऽऽ

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी वाचाटा विकटोन्नतदन्ती।

ऽऽ।।ऽ। ।ऽऽ ।।।।ऽ। । ऽ।।ऽऽ

आपातलिका पुनरेषा नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैती॥

इस उद्धरण पद्य के विषम पादों (१-३) में छः कलाओं के अनन्तर एक भगण, दो गुरु '**शी कपिलाक्षी**' का '**पुनरेषा**' में है तथा समपादों (२-४) में आठ कलाओं के पश्चात् भी एक भगण, दो गुरु हैं। अतः लक्षण समन्वय के कारण यह पद्य '**आपातलिका**' का उदाहरण है॥ १४॥

६ मात्राः र० ल० गु० ८ मात्राः र० ल० गु०

।ऽ।ऽऽ। ऽ।ऽ ।ऽ।ऽऽऽ।ऽ।ऽ

तृतीययुग्दक्षिणान्तिका समस्तपादेषु द्वितीयलः॥ १५॥

नारायणी–समस्तेषु चतुर्ष्वपि पादेषु द्वितीयलो द्वितीया मात्रा तृतीयया युग् युक्ता चेत्स्यात्, तदा दक्षिणान्तिका नाम स्यादिति। चेत्तदाशब्दयोरध्याहारः कार्यः। सर्वेषु पादेषु द्वितीयवर्णो गुरुरेव कार्य इति। तेन 'न समात्र पराश्रिया कला।' (वृ० र० २-१२) इत्यस्यापवादः। शेषं यथाप्राप्तमेवेति भावः। इयं वैतालीयौपच्छन्दसिकापातलिकापूर्वकत्वेन त्रेधोदाहार्या। अस्मिन्भेदत्रयेऽपि विषमपादयोर्विकल्पौ द्वौ। यथा– ।ऽ।ऽ,। ऽ।।। समयोश्चत्वारो यथा– ।ऽ।ऽऽ, ।ऽ।।ऽ, ।ऽ।ऽ।।, ।ऽ।।।।।द्वयोश्चतुर्णां च परस्परहतावष्टौ पूर्वार्धे। द्वितीयार्धेऽपि तावन्त एव। तयोरन्योन्यघाते चतुषःषष्टिर्भेदा भवन्ति॥ १५॥

तारा–जिस 'वैतालीय' छन्द के समस्त चारों पादों में द्वितीय मात्रा तृतीय मात्रा से संयुक्त हो अर्थात् चारों पादों में द्वितीयवर्ण गुरु हो उसे '**दक्षिणान्तिका**' छन्द के नाम से कहा गया है।

तात्पर्य यह है कि 'वैतालीय' के लक्षण में जो '**न समा पराश्रिता कला**' कहा गया है यह उसका अपवाद है, क्योंकि उसमें सम कला विषम कला से संयुक्त नहीं रहनी चाहिए–यह विधान है। यहाँ उसका निषेध किया गया है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष-इस लक्षण-कारिका में 'वैतालीय' छन्द का लक्षण अक्षरशः घटित होता है। अन्तर मात्र वही है जो विशेष विधान किया गया है कि द्वितीय सर्वत्र गुरु होना चाहिए। अतः यही कारिका इस 'दक्षिणान्तिका' का उदाहरण भी है। यथा-प्रथम पाद का द्वितीय वर्ण व द्वितीय पाद का भी द्वितीय वर्ण गुरु है, जिससे वह तृतीयवर्ण से संयुक्त हो गया है, इससे **'द्वितीयतः तृतीययुक्'** लक्षण घटित हो गया है। और **'न समा पराश्रिता कला'** का अपवाद भी स्वयंसिद्ध हो गया है। शेष सब 'वैतालीय' छन्द के सामान्य लक्षण के समान है। यथा-

प्रथम पाद में **'तृतीय युग्'** की छः मात्राओं के अनन्तर 'दक्षिणान्तिका' में एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। इसी प्रकार द्वितीय पाद का **'समस्तपादेषु द्वितीयलः'** में आठ मात्राओं के अनन्तर एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से लक्षणकारिका ही उदाहरण भी समझें। अन्य उदाहरण निर्दिष्ट छन्द में समझे-

।ऽ।ऽ ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ।ऽ ऽऽ।ऽ।ऽ

महीभुजां श्रेष्ठ इत्यसौ निगद्यते तैर्नीतिवेदिभिः।

।ऽ। ऽऽ। ऽ।ऽ।ऽ। ऽऽ ऽ।ऽ ।ऽ

श्रुतेन शीलेन संयुतैस्तथैव लङ्कालोचनो नृपः॥

इस उदाहृत पद्य के चारों पादों में द्वितीय कला संयुक्त है। शेष लक्षण 'वैतालीय' छन्द के समान है। अन्तर केवल यह है कि द्वितीय कला इसमें तृतीय से संयुक्त रहती है प्रथम से नहीं, जब कि 'वैतालीय' में यह विधान है कि द्वितीय कला तृतीय से संयुक्त नहीं रहनी चाहिए-**'न समा पराश्रिता कला'**। अत यह अपवाद है। यहाँ **'मही' 'निगद्य' 'श्रुते'** तथा **'तथै'** में सर्वत्र द्वितीय कला तृतीय कला से संयुक्त है। अतः लक्षण घटित हो जाने से उक्त पद्य **'दक्षिणान्तिका'** छन्द का उदाहरण है॥ १५॥

६ मात्राः र० ल० गु० ८ मात्राः र० ल० गु०

।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ ऽऽऽ। ।ऽ।ऽ।ऽ

उदीच्यवृत्तिर्द्वितीयलः सक्तोग्रेण भवेदयुग्मयोः॥ १६॥

नारायणी-अयुग्मयोर्विषमयोः प्रथमतृतीययोः पादयोर्द्वितीयलो द्वितीयमात्रा अग्रेण तदग्रिमेण लेन सक्तो युक्तश्चेत्, तदा उदीच्यवृत्तिरुदितेति वक्ष्यमाणानुषङ्गः। शेषं यथाप्राप्तम्। इयं वैतालीयौपच्छन्दसिकापातलिकापूर्वकत्वेन त्रेधोदाहार्या। अत्र तु द्वौ विषमयोर्विकल्पौ। यथा- ।ऽ।ऽ, ।ऽ॥। समयोः पूर्वोक्तास्त्रयोदश। परस्परहतौ षड्विंशतिः पूर्वार्धभेदाः। तावन्त एवाऽपरत्र। परस्परहतौ जाता भेदाः षट्शतानि षट्सप्ततिश्च। अङ्कतोऽपि ६७६॥ १६॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस 'वैतालीय' छन्द के विषम (१-३) पादों में द्वितीय लघु मात्रा तृतीय मात्रा से संयुक्त हो जाय, उसे **'उदीच्यवृत्ति'** छन्द कहते हैं। अर्थात् 'उदीच्यवृत्ति' छन्द का समस्त लक्षण 'वैतालीय' छन्द के समान हो, अन्तर मात्र द्वितीय मात्रा गुरु रहे। तात्पर्य यह कि 'दक्षिणान्तिका' के सम-विषम सभी पादों में द्वितीय वर्ण गुरुमात्रिक होता है, जबकि 'उदीच्यवृत्ति' छन्द का केवल विषम पादस्थित द्वितीय वर्ण ही गुरुमात्रिक होता है।

विशेष–लक्षणकारिका में ही उदाहरण भी समाहित है। इसके प्रथम पाद का द्वितीय वर्ण 'उदी' गुरु है, जो तृतीय मात्रा से संयुक्त है। द्वितीय पाद के **'सक्तो'** में द्वितीय मात्रा गुरु नहीं है, प्रत्युत वह प्रथम वर्ण की गुरु मात्रा से संयुक्त है, न कि तृतीय वर्ण की गुरु मात्रा से। शेष लक्षण सब 'वैतालीय' सामान्य लक्षण के समान है। अतः यह 'उदीच्यवृत्ति' का उदाहरण हुआ। अन्य उदाहरण निम्न निर्दिष्ट है–

।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ ।।ऽऽ ।।ऽ।ऽ।ऽ
अवाचकमनूर्जिताक्षरं श्रुतिदुष्टं यतिदुष्टमक्रमम्।
।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ।। ऽ ऽ।। ऽ। ऽ।ऽ
प्रसादरहितं च नेष्यते कविभिः काव्यमुदीच्यवृत्तिभिः॥

इस उद्धरण के विषम पाद–प्रथम एवं तृतीय पाद में द्वितीय कला 'वा'-'सा' गुरु है तथा अपनी अग्रिम तृतीय से संयुक्त है। शेष सम्पूर्ण लक्षण वैतालीय छन्द के समान विषम पादों में छः कलाएँ, रगण (वर्णगण), एक लघु एवं एक गुरु है। इसी प्रकार सम पादों आठ कलाओं के अनन्तर एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य **'उदीच्यवृत्ति'** छन्द का उदाहरण है॥ १६॥

६ मात्राः र० ल० गु० ८ मात्राः र० ल० गु०
ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।।।ऽ। ऽ।ऽ
पूर्वेण युतोऽथ पञ्चमः प्राच्यवृत्तिरुदितेति युग्मयोः॥ १७॥

नारायणी–अथेति यदीत्यर्थे वैलक्षण्ये वा, निपातानामनेकार्थत्वात्। युग्मयोर्द्वितीयचतुर्थपादयोः पञ्चमो लः पञ्चमो मात्रा पूर्वेण चतुर्थेन लघुना यदि युतः, एकेन गुरुणा चतुर्थपञ्चममात्रयोरुपादानं यदि स्यादित्यर्थः। तदा प्राच्यवृत्ति-रुदितोक्ता पिङ्गलादिभिरिति। समासान्निष्कृष्टं लशब्दमनुषज्य व्याख्येयम्। शेषं यथाप्राप्तम्। अनयोरपि उदीच्यवृत्तिप्राच्यवृत्त्योः 'न समात्र पराश्रिता कला' (वृ० र० २-१२) इत्यस्य पूर्ववदेवापवादः। सेयमपि पूर्ववत् त्रेधा। विषमयोः पूर्वोक्ता अष्टौ विकल्पाः। समयोश्चत्वारः यथा–।ऽ ।ऽ ।ऽऽ, ।।।ऽ।ऽ, ऽ।ऽ।।, ।।।ऽ।।।अष्टानां चतुर्भिर्हतौ द्वात्रिंशत्पूर्वार्धभेदाः। तावन्त एवोत्तरार्धे। परस्परहतौ भेदाश्चतुर्विंशत्यधिकं सहस्रम्। अङ्कतोऽपि १०२४॥१७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—जिस 'वैतालीय' छन्द के समपाद द्वितीय-चतुर्थ में पञ्चम मात्रा अपनी पूर्व मात्रा चतुर्थ से संयुक्त हो उसे **प्राच्यवृत्ति** छन्द कहते हैं। अर्थात् जिस छन्द में समस्त लक्षण वैतालीय छन्द के घटित होते हों, अन्तर मात्र यह हो कि पञ्चम मात्रा चतुर्थ मात्रा से संयुक्त हो, तात्पर्य-चतुर्थमात्रा गुरुमात्रा हो, वह '**प्राच्यवृत्ति**' छन्द कहलाता है।

विशेष—इसी लक्षण-कारिका में उदाहरण भी सम्मिलित है। यथा-कारिका के समपाद द्वितीय पाद के '**प्राच्यवृत्ति**' में '**वृ**' गुरु है, जो चतुर्थ-पञ्चम मात्रा संयुक्तस्वरूप है। प्रथम विषमपाद में यह स्थिति नहीं है। '**पूर्वेण**' में पञ्चम मात्रा स्वतंत्र लघुमात्रिक है। शेष लक्षण प्रथम पाद में छः मात्रा के पश्चात् एक रगण, एक लघु, एक गुरु है। द्वितीय समपाद में आठ मात्रा के पश्चात् एक रगण, एक लघु व एक गुरु 'वैतालीय' छन्द के ही समान है। अतः यह प्रस्तुत '**प्राच्यवृत्ति**' छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर यह देंखे-

। । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

विपुलार्थसुवाचकाक्षराः कस्य नाम न हरन्ति मानसम्।

। । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

रसभावविशेषपेशलाः प्राच्यवृत्तिकविकाव्यसम्पदः॥

इस उदाहृत पद्य के समपाद द्वितीय व चतुर्थ की पञ्चम कला '**ना व वृ**' में चतुर्थ-पञ्चम कलाएँ संयुक्त होकर गुरु हैं। शेष लक्षण वैतालीय के समान विषम पादों में छः कला तदनन्तर एक रगण, एक लघु तथा एक गुरु है। इसी प्रकार समपादों में आठ कला, तदनन्तर एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य '**प्राच्यवृत्ति**' छन्द का उदाहरण है॥१७॥

६मात्राः र० ल०गु० ८ मात्राः र० ल०गु०

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

यदा समावोजयुग्मकौ पूर्वयोर्भवति तत्प्रवृत्तकम्॥ १८॥

नारायणी—यदा पूर्वयोरुदीच्यवृत्तिप्राच्यवृत्त्योः समौ तुल्यौ क्रमेणौजयुग्मकौ विषमसमपादौ स्याताम्, तत्तदा प्रवृत्तकं नाम। विषमयोः प्रथमतृतीययोः पादयोर्द्वितीयतृतीयमात्राप्रयोगः। समयोस्तु चतुर्थपञ्चममात्रायोगः स्यादिति भावः। इदं वैतालीयौपच्छन्दसिकापातलिकापूर्वकत्वेन त्रेधोदाहार्यम्। तत्र पूर्वोक्तविषमसमपादविकल्पानामन्योन्यहतौ सङ्ख्या स्वयमूहनीया। एवमपरान्तिकादिष्वपि॥१८॥

तारा—जिस छन्द के सम-विषम पाद पूर्वकथित प्राच्यवृत्ति उदीच्यवृत्ति के समान हों उसे '**प्रवृत्तक**' छन्द कहते हैं। अर्थात् जिस छन्द के सम पाद द्वितीय चतुर्थ पाद 'प्राच्यवृत्ति' के सदृश तथा विषमपाद 'उदीच्यवृत्ति' के सदृश हो उसे 'प्रवृत्तक' छन्द समझें।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तात्पर्य यह है कि समपादों में चतुर्थ-पञ्चम मात्रा संयुक्त हो तथा विषम पादों में द्वितीय-तृतीय मात्रा संयुक्त हो, शेष लक्षण 'वैतालीय' के समान हो उसे 'प्रवृत्तक' मानें।

विशेष—इस लक्षणकारिका में ही प्रथम पाद विषम पाद में 'यदा' में द्वितीय-तृतीय मात्रा संयुक्त है। तथा समपाद द्वितीयपाद में 'पूर्वयो' में चतुर्थ-पञ्चम मात्रा संयुक्त। इससे समपाद द्वितीय 'प्राच्यवृत्ति' के समान तथा विषम पाद प्रथम 'उदीच्यवृत्ति' के समान है। शेष लक्षण 'वैतालीय' के सदृश। विषम प्रथम पाद में छः मात्राओं के बाद एक रगण, एक लघु व एक गुरु है तथा समपाद द्वितीय में आठ मात्राओं के बाद एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। अतः इस लक्षणकारिका में ही लक्षण घटित हो जाने से यही इसका उदाहरण भी हुआ। अन्य उदाहरण निम्न पद्य है—

ISI IIISISI SIS IIIS ISIS
इदं भरतवंशभूभृता श्रूयतां श्रुतिमनो रसायनम्।
ISIIIS ISIS SISII ISISIS
पवित्रमधिकं शुभोदयं व्यासवक्त्रकथितं प्रवृत्तकम्॥

इस उदाहृत पद्य के विषम पादों प्रथम एवं द्वितीय में द्वितीय कला 'दं-वि' तृतीय कला से संयुक्त है। तथा समपादों द्वितीय एवं चतुर्थ की चतुर्थ एवं पञ्चम कला संयुक्त है। शेष वैतालीय के समान विषम पादों में छः कला, पुनः एक रगण व एक-एक लघु-गुरु तथा समपादों में आठ कला, पुनः एक रगण व एक-एक लघु-गुरु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य ही 'प्रवृत्तक' छन्द का उदाहरण भी समझें॥ १८॥

८ मात्राः र० ल० गु०
SIS ISII ISIS

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका॥ १९॥

नारायणी—अस्य प्रवृत्तकस्य युग्मपादैर्या सम्पूर्णा रचिता साऽपरान्तिका नाम। पञ्चमी चतुर्थमात्रायुक्ता। षोडशमात्रता च चतुर्ष्वपि पादेषु कार्येत्यर्थः। इयं च वैतालीयौपच्छन्दसिकापातलिकापूर्वकत्वेन पूर्ववत्त्रेधा। कश्चित्तु 'अस्य वैतालीयादिच्छन्दोवृन्दस्य युग्मरचिता' इति व्याचख्यौ। तन्मते वैतालीयादिपूर्व-कत्वेन तत्पूर्वकत्वेन प्राच्यवृत्तिपूर्वकत्वेन च षोढा। उदाहरणानि तु स्वयमूह्यानि भेदाः॥ २५६॥ १९॥

तारा—पूर्वोक्त 'प्रवृत्तक' छन्द के समपादों के समान जिसके चारों पाद रहें, उसे 'अपरान्तिका' छन्द कहते हैं।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष-उदाहरण-स्वरूप 'अपरान्तिका' छन्द को निर्दिष्ट किया जाता है। अन्य उदाहरण है-

।।।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ।ऽ

स्थिरविलासनतमौक्तिकावली कमलकोमलाङ्गी मृगेक्षणा।

।।। ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ ।।।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ

हरति कस्य हृदयं न कामिनः सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका॥

इस उदाहृत छन्द के चारों चरणों में आठ कलाएँ, एक रगण, एक लघु व एक गुरु क्रम से है। चारों चरणों में चतुर्थ कला पञ्चम कला से संयुक्त है। क्रमशः 'ला, को, क, के' वर्णों में गुरु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य 'अपरान्तिका' छन्द का उदाहरण है॥ १६॥

६ मात्राः र० ल० गु०

।ऽ।ऽ ऽ।ऽ।ऽ

अयुग्मगा चारुहासिनी॥ २०॥

नारायणी-अस्य प्रवृत्तकस्याऽयुग्मवाऽयुक्पादैर्विषमपादैः रचिता चारुहासिनी समस्तपादेषु चतुर्दशमात्रिका। द्वितीया च तृतीयायुक्ता कार्येत्यर्थः। इयमपि पूर्ववत् त्रेधा अस्येति। वैतालीयादिच्छन्दोवृन्दपरत्वेन व्याचक्षाणस्य मते तु वैतालीयौपछन्दसिकाऽऽपातलिकातदुदीच्यवृत्तिपूर्वकत्वेन षोढा। उदाहरणान्यूह्यानि। भेदाः २५६। अन्येऽपि भेदा अन्यैरुक्तास्ते स्वकीयैरुदाहरणैः प्रदर्श्यन्ते। यथा वैतालीयसमपादचतुष्टययुताऽन्येयं दक्षिणान्तिका। यथा-

पुरुषश्रेष्ठतमः स पूरुषो विषयैर्यस्य मनो हृतं न हि।

पुरुषक्षुद्रतमः स पूरुषो विषयैर्यस्य मनो हृतं मुहुः॥

वैतालीयविषमपादरचितोत्तरान्तिका। यथा-

विषयान्विषमान्विषोपमानवधार्य ततोऽवधीर्य च।

कुरु राघवचिन्तनं सदा यदि ते हितमाहितं स्वकम्॥

तथाऽऽपातलिकाप्राच्यवृत्त्योर्विषमपादाभ्यां क्रमेण रचितोपपातलिका नाम। यथा-

यः पुरतो वक्त्यतिमिष्टं दोषभाषणरतः परोक्षतः।

वाञ्छसि सौख्यं त्यज तं द्राङ्मित्रसंज्ञितमरिं विषोपमम्॥

तथा यद्यापातलिकादीनां सप्तानां छन्दसां प्रतिपादमन्तेऽधिकैकगुरुयोगः स्यात, तदा तन्नामकान्यौपच्छन्दसिकानि सप्त भवन्ति। तत्रापातलिकौपच्छन्दसिकम्। यथा-

आपातलिकादिषु चेदेको गुरुरधिको भवति प्रतिपादान्ते।

आपातलिकादिकसंज्ञायुगोपच्छन्दसिकं तदभिप्रेतम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

एवं दक्षिणान्तिकौपछन्दसिकादौ ग्रन्थगौरवप्रसङ्गादस्मदनुक्तान्युदाहरणान्यूह्यानि। एवं च वैतालीयसङ्ख्या सप्तत्रिंशत् ३७॥ २०॥

इति वैतालीयं प्रकरणम्॥

तारा–प्रवृत्तक के विषम पादों के समान जिस छन्द के चारों पाद हों, उसे 'चारुहासिनी' छन्द कहते हैं।

अर्थात् वैतालीय सामान्य लक्षण से युक्त जिस छन्द के चारों पादों में चतुर्थ-पञ्चम मात्रा संयुक्त हो उसे 'अपरान्तिका' तथा जिसके चारों पादों में द्वितीय-तृतीय मात्रा संयुक्त हो उसे 'चारुहासिनी' कहते हैं।

चारुहासिनी का उदाहरण निम्नाङ्कित है–

ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

मनाक् प्रसृतदन्तदीधितिः स्मरोल्लसितगण्डमण्डला।

। ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

कटाक्षललिता तु कामिनी मनोहरति चारुहासिनी॥

इस उद्धरण के चारों चरणों में क्रमशः छः कलाएँ, एक रगण, एक लघु व एक गुरु है। द्वितीय एवं तृतीय कलाएँ संयुक्त हैं। जो 'ना, रो, टा, नो' में गुरुत्वेन निर्दिष्ट है। अतः चारुहासिनी छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह छन्द 'चारुहासिनी' का उदाहरण है॥ २०॥

॥ इति वैतालीयप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ वक्त्रप्रकरणम्

गु० म० य० गु०गु० म० य० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ऽ

वक्त्रं नाद्यान्नसौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि ख्यातम्॥ २१॥

नारायणी—अथ वक्त्रस्याऽष्टाक्षरत्वेनानुष्टुभि वक्तव्यस्याऽपि तद्वत्सकलस्य नियतगुरुलघुत्वाभावात्पथ्याचपलादिसंज्ञाः कार्या। मात्रावृत्तानामसाङ्कर्याच्च मात्रा-वृत्तप्रस्ताव एव, लक्षणमाह—**वक्त्रमिति**।

आद्यादक्षरादूर्ध्वं न्सौ नगणसगणौ न स्याताम्, मगणादिर्यथेच्छं स्यात्, अब्धेश्चतुर्थादक्षरादूर्ध्वं यो यगणः स्याद्यदि, तदा वक्त्रं नाम ख्यातम्। तच्चानुष्टुभि ख्यातमुक्तमाचार्यैरिति। यदातदाशब्दाध्याहारेण ख्यातशब्दावृत्त्या च व्याख्येयम्। यद्यप्याद्यादब्धेश्चेति गणग्रहणमपि सम्भवति तथाप्यनुष्टुभि ख्यातमित्यष्टाक्षर-त्वसूचनाद् गणचतुष्टयासम्भवादब्धिग्रहणस्याऽक्षरपरता। आद्यग्रहणस्यापि च तस्समभिव्याहाराद् गणग्रहणे चतुर्थाक्षरमादाय गणारम्भाच्चतुर्थाक्षरादूर्ध्वं यगणा-रम्भायोगाच्चाक्षरपरतैव। आद्यात्परतो नगणसगणनिषेधेन द्वितीयतृतीयवर्णान्यतरस्य गुरुताऽवश्यं भवतीति सूचितम्। अनुष्टुभि ख्यातमित्यनेनाष्टाक्षरपादता सूचिता। अतश्चाऽनुक्तोऽप्यष्टमो वर्णो ज्ञेयः। समयोश्च पादयोः प्रथमादक्षरादूर्ध्वं रगणोऽपि न कार्य इति सम्प्रदायः। अत्राद्ये पादे प्रथमस्थाने गुरुलघुरूपौ द्वौ विकल्पौ, द्वितीये नसनिषेधाच्छेषाः षड्गणाः, तृतीयस्थान एको य एव, चतुर्थस्थाने ग्लौ। अन्योन्यघाते चतुर्विंशतिः। एवं द्वितीयादिपादत्रयेऽपि प्रत्येकं चतुर्विंशतिः। तेषां परस्परहतौ जातं त्रयो लक्षाः एकत्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि षट्सप्ततिश्चेति सङ्ख्या। अङ्कतोऽपि ३३१७७६। एषैव सङ्ख्या प्रत्येकं पथ्यावक्त्रादिषु त्रिषु भेदेषूह्या। सम्प्रदायमाश्रित्य द्वितीयचतुर्थपादयोर्द्वितीयस्थाने रगणस्यापि निषेधात्स-मयोः प्रत्येकं विंशतिर्भेदाः, विषमयोश्चतुर्विंशतिरेव। तेषामन्योन्यघाते जाता सङ्ख्या लक्षद्वयं त्रिंशत्सहस्राणि चत्वारि शतानि। अङ्कतोऽपि २३०४००॥ २१॥

तारा—आठ अक्षरों वाले 'अनुष्टुप्' छन्द में जहाँ प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण व सगण (॥।, ॥ऽ) नहीं हो तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् यगण (।ऽऽ) हो, वह **'वक्त्र'** छन्द के नाम से प्रख्यात है।

विशेष—उपर्युक्त लक्षणकारिका ही वक्त्र छन्द का उदाहरण भी है। यथा—इसके प्रथम अक्षर के बाद 'नगण' 'सगण' नहीं है। तथा चतुर्थ अक्षर के बाद **'न्न सौ स्या'** में यगण है। अतः यही **'वक्त्र'** छन्द का उदाहरण भी हुआ। अन्य उदाहरण निम्न पद्य है—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

। । ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ

नवधाराम्बुसंसिक्तं वसुधागन्धिनिश्वासम्।

ऽ । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ

किञ्चिदुन्नतघोणाग्रं मही कामयते वक्त्रम्॥

इस उदाहृत पद्य में प्रथम अक्षर लघु है, उसके बाद यगण (।ऽऽ) है, नगण (।।।) सगण (।।ऽ) नहीं है। अन्त में गुरु है। तृतीय पाद में प्रथम अक्षर 'किं' गुरु है। तदनन्तर एक जगण (। ऽ ।) तथा इसके बाद एक यगण (।ऽऽ) व एक गुरु है, नगण सगण नहीं है। इसी प्रकार चतुर्थ पाद में एक लघु, एक तगण (ऽऽ।), एक यगण तथा एक गुरु है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'वक्त्र' छन्द का उदाहरण है॥ २१॥

ल० त० य० गु० गु० म० ज० गु०

। ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ

युजोर्जेन सरिद्भर्तुः पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्॥ २२॥

नारायणी—अब्धेर्य इत्यस्यापवादेनास्यैव भेदानाह—युजोरिति।

युजोर्युग्मयोर्द्वितीयचतुर्थचरणयोः सरिद्भर्तुश्चतुर्थाक्षरात्परेण जगणेन पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्। पिङ्गलेन 'पथ्या युजो ज्' (पि०सू०५-१४) इति सूत्रे इत्यर्थः। विषमयोस्तु यगणः सामान्यप्राप्तः॥ २२॥

तारा—'वक्त्र' छन्द के समपादों (२। ४) में यदि चतुर्थ अक्षर के बाद जगण हो तो वह 'पथ्यावक्त्र' छन्द के नाम से कहलाता है। अर्थात् आठ अक्षर वाले 'अनुष्टुप्' छन्द के समपादों में (२। ४) प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के बाद जगण रहे, और विषम पादों (१। ३) में 'वक्त्र' छन्द की तरह प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के बाद यगण रहे तो वह 'पथ्यावक्त्र' छन्द कहा जाता है।

विशेष—इसी लक्षणकारिका के विषम पाद प्रथम पाद में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है तथा चतुर्थ अक्षर के बाद यगण है। इसी प्रकार समपाद द्वितीय पाद में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है तथा चतुर्थ अक्षर के बाद 'प्रकीर्ति' में जगण है। अतः यही 'पथ्यावक्त्र' छन्द का उदाहरण है। पथ्यावक्त्र छन्द का अन्य उदाहरण निम्न निर्दिष्ट है—

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ

नित्यं नीतिनिषण्णस्य राज्ञो राष्ट्रं न सीदति।

। । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ

नहि पथ्याशिनः काये जायन्ते व्याधिवेदना॥

इस उदाहरण के चतुर्थ एवं तृतीय चरण में चतुर्थ वर्ण के बाद एक जगण 'न सीद, धि वेद' में प्रयुक्त है। अतः 'पथ्यावक्त्र' का लक्षण घटित हो जाने के कारण इसे 'पथ्यावक्त्र' छन्द का उदाहरण समझें॥ २२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ल० य० ज० गु०ल० भ० य० ल०
।।ऽ ऽ। ऽ।ऽ।ऽ। ।।ऽऽ।

अयुजोर्जेन वारिधेस्तदेव विपरीतादि॥ २३॥

नारायणी—विषमपादयोश्चतुर्थादूर्ध्वं जगणेन तदेव पथ्यावक्त्रं विपरीत-शब्दादिविपरीतपथ्येति ज्ञेयमित्यर्थः। समयोर्य एव॥ २३॥

तारा—यदि 'वक्त्र' छन्द के विषमपाद प्रथम-तृतीय पाद में चतुर्थ अक्षर के बाद जगण (।ऽ।) हो तो उसे **'विपरीत पथ्यावक्त्र'** छन्द कहते हैं। अर्थात् आठ अक्षरों वाले 'अनुष्टुप्' छन्द के प्रथम-तृतीय विषम पादों में यदि प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के बाद जगण रहे। और द्वितीय-चतुर्थ समपादों में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के बाद यगण हो तो वह **'विपरीत पथ्यावक्त्र'** छन्द कहलाता है।

विशेष—'अयुजोयोर्जेन' इस लक्षण-कारिका में ही विपरीत-पथ्यावक्त्र छन्द का लक्षण घटित है, इससे यही इसका उदाहरण भी है। यथा—इसमें विषम पाद प्रथम पाद में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है, तथा चतुर्थ अक्षर के बाद जगण (।ऽ।) 'न वारि' में विद्यमान है। इसी तरह समपाद द्वितीय पाद में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है तथा चतुर्थ अक्षर के बाद 'परीता' में यगण है। अतः इसी लक्षणकारिका को 'विपरीत पथ्यावक्त्र' छन्द का उदाहरण भी समझें। उदाहरणान्त निम्न छन्द में देखें—

ऽ।ऽऽ।ऽ।ऽ ऽ ऽ ऽऽ ।ऽ ऽऽ
भर्त्तुराज्ञानुवर्तिनी या स्त्री स्यात्सा स्थिरा लक्ष्मीः।
ऽ।ऽ ऽ ।ऽ।ऽ ।।ऽऽ ।ऽऽऽ
स्वप्रभुत्वाऽभिमानिनी विपरीता परित्याज्या॥

इस उद्धरण के प्रथम एवं तृतीय चरण में चतुर्थ वर्ण के पश्चात् एक जगण है। शेष लक्षण 'वक्त्र' के समान, अर्थात् आठ अक्षर वाले 'अनुष्टुप' छन्द के प्रथम एवं तृतीय पाद में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है। (यगण) है। तथा द्वितीय एवं चतुर्थ पाद में भी प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है। मगण व यगण है। अतः यह पद्य 'विपरीतपथ्या' छन्द का उदाहरण बना॥ २३॥

ल० य० न० गु०ल० म० य० गु०
।।ऽ ऽ।।।ऽ।ऽऽऽ।ऽऽऽ

चपलावक्त्रमयुजोर्नकारश्चेत्पयोराशेः॥ २४॥

नारायणी—अयुजोर्विषमयोः पयोराशेश्चतुर्थान्नकारश्चेन्नगणश्चेच्चपला-वक्त्रम्। समयोर्य एव॥ २४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–'वक्त्र' छन्द के विषम पाद प्रथम-तृतीय पादों में यदि चतुर्थ अक्षर के पश्चात् नगण रहे तो उसे '**चपलावक्त्र**' छन्द के नाम से कहा जाता है। अर्थात् जिस आठ अक्षर वाले 'अनुष्टुप्' छन्द के प्रथम-तृतीय विषम पादों में यदि प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् नगण रहे। और समपाद द्वितीय-चतुर्थ पाद में प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण, सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् यगण हो तो वह 'चपलावक्त्र' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–इसी लक्षणकारिका में छन्द-लक्षण घटित है। अतः यही उदाहरण भी है। यथा–इसमें प्रथम अक्षर के बाद दोनों सम विषम पादों में नगण, सगण नहीं है तथा प्रथम विषमपाद में चतुर्थ अक्षर के बाद नगण है और समपाद द्वितीय पाद में चतुर्थ अक्षर के बाद यगण है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह 'चपलावक्त्र' छन्द का उदाहरण भी जाने।

ऽ। ऽ ऽ । । । ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ ऽ
क्षीयमाणाऽग्रदशना वक्त्रनिर्मांसनासाग्रा।
ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ
कन्यका वक्त्रचपला लभते धूर्त्तसौभाग्यम्॥

इस उदाहृत छन्द के प्रथम एवं तृतीय पाद में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर नगण है तथा शेष लक्षण सामान्य 'वक्त्र' के समान चारों चरणों में प्रथम अक्षर के अनन्तर नगण, सगण नहीं है। चतुर्थ अक्षर के बाद द्वितीय चतुर्थ पाद में यगण है। अतः 'चपलावक्त्र' का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'चपलावक्त्र' छन्द का उदाहरण है॥ २४॥

म० य० गु० गु० भ० स० ल० गु०
ऽ ऽ ऽ ऽ। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ।।।ऽ।ऽ

यस्यां लः सप्तमो युग्मे सा युग्मविपुला मता॥ २५॥

नारायणी–युग्मे द्वितीये चतुर्थे च पादे सप्तमो वर्णो लो लघुः सा युग्मविपुला मता सम्मता। यद्यपि पथ्यायामपि युजोः सप्तमो लस्तथापि तत्र जगणेनैव अत्र तु नभजतैः सप्तमस्य लघुतेति न सङ्करः। तथाऽपि जगणपक्षे सङ्कर एवेति चेत् तर्हि तत्र संज्ञाविकल्प एवास्तु। ये त्वत्र जेन सप्तमस्य नैव लघुतेत्य-सङ्करमाहुस्तेषां मूलस्य लक्ष्यविरोधः। जगणेन लघुकरणात्।

सैतवेन पथाऽर्णवं तीर्णो दशरथात्मजः।
रक्षःक्षयकरीं पुनः प्रतिज्ञां स्वेन बाहुना॥

इति सैतवमतेन विपुलोदाहरणे जकारेणैव वृत्तिकृता लघुकरणात्तद्विरो-धश्चेति पूर्वमेवोत्तरं युक्तं संज्ञाविकल्प इति। अत्र समपादयोस्तृतीये स्थाने चत्वारो विकल्पाः शेषेषु प्राग्वत्। तेन समयोः परस्परहता षण्णवतिर्भेदाः

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विषमयोः प्रत्येकं पूर्ववच्चतुर्विंशतिः। परस्परहतौ सङ्ख्याऽपि त्रिपञ्चाशल्लक्षाः, अष्टौ सहस्राणि चत्वारि शतानि षोडश च अङ्कतोऽपि ५३०८४१६। अत्राऽयुग्मे यस्यां लः साऽयुग्मविपुलेत्यकारप्रश्लेषेणापि केचिद्व्याचक्षते। पादव्यत्ययं यत्रोदाहरणमाहुः। विपरीतपथ्याचपलावक्त्राभ्यां चैवं भेदः। तत्र जगणनगणाभ्यां सप्तमस्य लघुता, अत्र तु भ-ताभ्यामपि तस्य तथात्वमिति। उदाहरणं च सप्तमस्य लघुत्वमात्रतात्पर्येण जगणे भराभावेनोक्तमिति चाहुः॥ २५॥

तारा—जिस 'वक्त्र' छन्द के सम पादों में सप्तम अक्षर लघु हो उसे 'युग्म-विपुला' छन्द कहते हैं। अर्थात् 'वक्त्र' छन्द के अनुसार जिस आठ अक्षरों वाले छन्द के सम-विषम समस्त पादों में प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण, सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् यगण हो, किन्तु द्वितीय-चतुर्थ समपादों में सप्तम अक्षर लघु हो तो वह 'युग्मविपुला' छन्द कहलाता है।

विशेष—उपर्युक्त कारिका में छन्द-लक्षण घटित करके इसे ही छन्द का उदाहरण भी समझें। यथा—कारिकाछन्द में प्रथम अक्षर के पश्चात् समस्त चारों पादों में नगण, सगण नहीं है। चतुर्थ अक्षर के पश्चात् यगण है, किन्तु समपाद द्वितीय पाद का सप्तम वर्ण 'म' लघु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका 'युग्मविपुला' छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरण देखें—

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ
इयं सखे चन्द्रमुखी स्मितज्योत्स्ना च मानिनी।
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ
इन्दीवराक्षी हृदयं दन्दहीति तथापि मे॥

इस उदाहरण के चारों पादों में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है। साथ ही द्वितीय व चतुर्थ पाद में सप्तम अक्षर लघु है। अतः 'युग्मविपुला' का लक्षण घटित होने से यह पद्य 'युग्मविपुला' छन्द का उदाहरण है॥ २५॥

गु० य० ज० गु०
ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ

सैतवस्याखिलेष्वपि॥ २६॥

नारायणी—सैतवस्याऽऽचार्यस्य मतेऽखिलेष्वपि पादेषु सप्तमो लः स्यादिति। स्मृत इत्यध्याहारेण सप्तमो ल इति पादानुषङ्गेण व्याख्येयम्। संज्ञा तु विपुलेति निरुपपदैव। अत्र प्रतिपादं षण्णवतिर्भेदाः। तेषां परस्परहतौ सङ्ख्या अष्टौ कोट्य एकोनपञ्चाशल्लक्षाश्चतुस्त्रिंशत्सहस्राणि षट्शती षट्पञ्चाशच्च। अङ्कतोऽपि ८४९३४६५६॥ २६॥

तारा—जिस 'वक्त्र' छन्द के समस्त चारों पादों में सप्तम वर्ण लघु हो वह सैतवाचार्य के मत से 'युग्मविपुला' छन्द होता है। अर्थात् जिस आठ अक्षर वाले अनुष्टुप् छन्द के समस्त पादों में प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण-सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् समस्त चारों पादों में सप्तम अक्षर लघु हो वह सैतवाचार्य के मतानुसार 'युग्मविपुला' छन्द होता है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–'युग्मविपुला' छन्द का उदाहरण निर्दिष्ट है। यथा–

सैतवेन पथार्णवं तीर्णो दशरथात्मजः।
रक्षःक्षयकरीं पुनः प्रतिज्ञां स्वेन बाहुना॥

इस प्रस्तुत 'अनुष्टुप्' में प्रथम अक्षर के अनन्तर नगण-सगण समस्त चारों पादों में नहीं है। तथा सप्तम वर्ण समस्त पादों में लघु है। अतः इसे सैतवाचार्य के मतानुसार 'युग्मविपुला' छन्द का उदाहरण समझें। लक्षण घटित-स्वरूप इस प्रकार है–

ऽ। ऽ। । ऽ । ऽ ऽऽ । । । ऽ। ऽ
सैतवेन पथार्णवं तीर्णो दशरथात्मजः।
ऽ ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽऽ ऽ । ऽ। ऽ
रक्षःक्षयकरीं पुनः प्रतिज्ञां स्वेन बाहुना॥

उपर्युक्त उदाहरण के चारों चरणों में सप्तम अक्षर लघु है। और प्रथम अक्षर के बाद चारों चरणों में नगण, सगण नहीं हैं। अतः लक्षण घटित है। इससे सैतवाचार्य के मत से युग्मविपुला छन्द का उदाहरण बना॥ २६॥

गु० र० भ० गु०
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ
भेनाब्धितो भाद्विपुला॥ २७॥

नारायणी–अब्धितश्चतुरक्षरात्परेण भेन भगणेन भाद् भ इत्यक्षरात्परा विपुला। भविपुलेत्यर्थः। केचिदत्र 'अखिलेष्वपि' इत्यनुवर्तयन्ति। वृत्तिकृतस्तु 'भ्रौ न्तौ च' (पिं० सू० ५-१६) इति सूत्रे 'सर्वतः सैतवस्य' (पिं० सू० ५-१८) इति निवृत्तम् 'चपलायुजोन्' (पिं० सू० ५-१६) 'इत्यस्मादयुग्ग्रहणमनुवर्तते' इति वदन्तो विषमपादविषया एव भविपुलाद्या इत्याहुः॥ २७॥

तारा–जिस आठ अक्षर वाले 'वक्त्र' छन्द के सम-विषम सभी पादों में अथवा केवल विषम पादों में चतुर्थ अक्षर के बाद भगण (ऽ॥) होता है, उसे 'भविपुला' छन्द कहते हैं। अर्थात् जिस 'अनुष्टुप्' छन्द के समस्त चारों पादों में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के बाद भगण हो तो उसे 'भविपुला' छन्द कहा जाता है।

विशेष–प्रस्तुत 'भविपुला' छन्द का मतान्तर से उदाहरण निम्न निर्दिष्ट है। यथा–

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ
इयं सखे चन्द्रमुखी स्मितज्योत्स्ना च मानिनी।
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ। । ऽ । ऽ
इन्दीवराक्षी सततं दहतीति तथाऽपि मे॥

इस उदाहृत पद्य के विषम पाद प्रथम एवं तृतीय में चतुर्थ अक्षर के बाद भगण (वर्णगण) है। साथ ही प्रथम अक्षर के बाद चारों पादों में नगण, सगण भी नहीं है। अतः 'भविपुला' का लक्षण पूर्णतः घटित होने के कारण उक्त पद्य 'भविपुला' छन्द का उदाहरण है॥ २७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

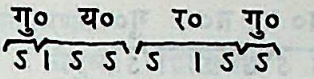

इत्थमन्या रश्चतुर्थात्॥ २८॥

नारायणी–चतुर्थाक्षरात्परतश्चेन्द्रः रगणस्तदेत्थमन्या यथा भाद्विपुला तथा रादिति रविपुलेत्यर्थः॥ २८॥

तारा–इसी प्रकार 'वक्त्र' छन्द के समस्त पादों में चतुर्थ अक्षर के बाद यदि रगण हो तो वह 'रविपुला' कहलाता है। अर्थात् समस्त सम-विषम चारों पादों में जिस आठ अक्षर वाले 'अनुष्टुप्' छन्द के प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण, सगण न हो तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् सभी में अथवा केवल विषम पादों में रगण हो तो वह 'रविपुला' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–'रविपुला' छन्द का मतान्तर से उदाहरण प्रस्तुत पद्य में देखें। यथा–

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ
सकारनानारकासकायसाददसायका।
। ऽ । ऽ ऽ। ऽ। ऽ । ऽ।। ऽ। ऽ
रसाहवा वाहसारनादवाददवादना॥

इस उदाहृत 'अनुष्टुप्' छन्द के सम-विषम चारों पादों में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है तथा विपम पादों में चतुर्थ अक्षर के बाद रगण है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से इसे 'रविपुला' छन्द का उदाहरण समझें॥ २८॥

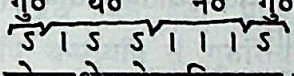

नोम्बुधेश्चेन्नविपुला॥ २९॥

नारायणी–अम्बुधेश्चतुर्थान्नो नगणश्चेत्तदा नपूर्वाऽन्या विपुला नविपुलेत्यर्थः॥ २९॥

तारा–और जिस 'वक्त्र' छन्द के समस्त पादों अथवा केवल विषम पादों में ही चतुर्थ अक्षर के बाद नगण हो तो उसे 'नविपुला' छन्द कहते हैं। अर्थात् समस्त सम-विषम चारों पादों में जिस आठ अक्षर वाले छन्द के प्रथम अक्षर के पश्चात् नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के पश्चात् समस्त अथवा विषम पादों में नगण रहे तो उसे 'नविपुला' छन्द कहा जाता है।

विशेष–मतान्तर से 'नविपुला' का उदाहरण निम्न निर्दिष्ट छन्द में देखें–

। ऽ । ऽ। । । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ
युयत्सुनेव कवचं किमामुक्तमिदं त्वया।
। ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ
तपस्विनो हि वसते केवलाजिनिवल्कले॥

इसमें विषम पादों में चतुर्थ अक्षर के बाद नगण है। अतः इसे नविपुला का उदाहरण जानें॥ २९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

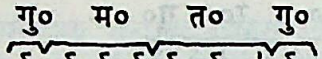

तोऽब्धेस्तत्पूर्वाऽन्या भवेत्॥ ३०॥

नारायणी—अब्धेश्चतुर्थात्परस्तगणश्चेत्तदा तत्पूर्विका तकारपूर्विकाऽन्या विपुला तविपुलेत्यर्थः। एवं मयाभ्यां तत्पूर्वे विपुले भवतः। अत्रैतासु चतसृषु पादचतुष्केऽपि तत्तद्गणयोगस्य ये सत्त्वमाहुस्तेषां मतेन यत्रैकस्मिन्द्वयोर्वा तत्तद्गणयोगस्तत्रासां परस्परसंसर्गेणान्ये भेदा ज्ञेयाः। वृत्तिकृन्मते तु विषमपादयोरेतद्गणयोगः, अन्ययोस्तु सप्तमस्य लघुत्वमात्रम्। यत्र तु चतुर्ष्वपि पादेषु भादियोगस्तस्यानुष्टुप्त्वमेव। न तु वक्त्रत्वमिति विवेकः। तत्राप्ययुक्पादस्य जातिपरत्वे द्वयोरप्ययुजोर्भगणादियोगः, व्यक्तिपरत्वे त्वन्यतराङ्गीकारेणापि लक्षणार्थसिद्धेराद्ये तृतीये वा भगणादियोगः। जातिपक्षे भविपुलोदाहरणम्—

इयं सखे! चन्द्रमुखी स्मितज्योत्स्ना च मानिनी।
इन्दीवराक्षी हृदयं दन्दहीति तथापि मे॥

आद्ये भ-विपुलोदाहरणम्—

उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यः पथ्यमिच्छता।
समौ हि शिष्टैराम्नातौ वर्त्स्यन्तावामयः स च॥ (शि० २-१०)

तृतीये—

प्रोल्लसत्कुण्डलप्रोतपद्मरागदलत्विषा।
कृष्णोत्तरासङ्गरुचं विदधच्चोतपल्लवीम्॥ (श०२-१६)

रेफविपुलायाः क्रमेणोदाहरणानि—

सकारनानारकासकायसाददसायका।
रसाहवा वाहसारनादवाददवादना॥ (शि. १६-२६)
महाकविं कालिदासं वन्दे वाग्देवतां गुरुम्।
यज्ज्ञाने विश्वमाभाति दर्पणे प्रतिबिम्बवत्॥
कामिनीभिः सह प्रीतिः कस्मै नाम न रोचते।
यदि न स्याद्वारिवीचिचञ्चलं हन्त जीवितम्॥

न-विपुलोदाहरणानि क्रमेण—

युयुत्सुनेव कवचं किमामुक्तमिदं त्वया।
तपस्विनो हि वसते केवलाजिनवल्कले॥ (किं. ११-१५)
अथानाथाः प्रकृतयो मातृबन्धुनिवासिनम्।
मौलैरानाययामासुर्भरतं स्तम्भिताश्रुभिः॥ (र. १२-१२)
तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात्संशमितारिभिः।
प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्यभिदः शराः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तत्र त-विपुलोदाहरणानि-

सा वैदुष्ये प्रौढिर्यदि सर्वशस्त्रानुगामिनी।
सा शूरता श्रेष्ठा यदि सर्वशास्त्रानुगामिनी॥
वन्दे गुरुं रामेश्वरं सर्वशास्त्रविशारदम्॥
विस्मेरा कम्पशिरसो यस्योक्तौ पण्डिताः परे॥
लोकवत्प्रतिपत्तव्यो लौकिकोऽर्थः परीक्षकैः।
लोकव्यवहारं प्रति सदृशौ बालपण्डितौ॥

म-विपुलोदाहरणानि-

सखा गरीयाञ्शत्रुश्च कृत्रिमस्तौ हि कार्यतः।
स्यातामभित्रौ मित्रे च सहजप्राकृतावपि॥ (शि. २-३६)
यियक्षमाणेनाऽऽहूतः पार्थेनाथ द्विषन्मुरम्।
अभिचैद्यं प्रतिष्ठासुरासीत्कार्यद्वयाकुलः॥ (शि. २-१)
षड्गुणाः शक्तयस्तिस्रः सिद्धयश्चोदयास्त्रयः।
ग्रन्थानधीत्य व्याकर्तुमपि दुर्मेधसोऽप्यलम्॥ (शि. २-२३)

य-विपुलोदाहरणानि-

ततः कुमुदनाथेन कामिनीगण्डपाण्डुना।
नेत्रानन्देन चन्द्रेण माहेन्द्री दिगलङ्कृता॥
नपुंसकमिति ज्ञात्वा प्रियायै प्रेषितं मनः।
तत्तु तत्रैव रमते हताः पाणिनिना वयम्॥
तथापि यन्मय्यपि ते गुरुरित्यस्ति गौरवम्।
तत्प्रयोजककर्तृत्वमुपैति मम जल्पतः॥ (शि. २-७१)

एवं ज-विपुलाप्युदाहार्या। तत्र तु समपादयोश्चतुर्थादूर्ध्वं जगणेन पथ्यावक्त्रता, सप्तमस्य लघुतामात्रत्वे ज-विपुलात्वमिति विवेकः। सविपुला तु कविप्रयोगाभावान्नास्ति। अन्येषां तु मते 'युयुत्सुनेव' (कि. ११-१५) इत्यादीनां विषमयोश्चपलादित्वात्समयोस्तु पथ्यात्वाच्चपलापथ्यावक्त्रादिसंज्ञा भवन्ति। एवं विपुलापथ्येत्यादिसंज्ञा ज्ञेयाः। अत्र वृत्तिकृन्मते सर्वासु भ-विपुलादिषु विषमपादयोः प्रत्येकं चतुर्विंशतिर्भेदाः, सनयोः प्रत्येकं षण्णवतिः। परस्परहतौ युग्मविपुलावत्सङ्ख्या ज्ञेया। अन्येषां मते तु मुख्यवक्त्रवत्सङ्ख्या। तथा सङ्कीर्णगणतायां सङ्कीर्णविपुलावक्त्रं भवति। भारवेः-

क्वचिदग्रे प्रसरता क्वचिदाप्लुत्य निघ्नता।
शुनेव सारङ्गकुलं त्वया भिन्नं द्विषां कुलम्॥

कुमारे-

यदध्यक्षेण जगतां वयमारोपितास्त्वया।
मनोरथस्याऽविषयं मनोविषयमात्मनः॥ (कु. ६-१७)

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

माघे–

भवद्गिरामवसरप्रदानाय वचांसि नः।
पूर्वरङ्गप्रसङ्गाय नाटकीयस्य वस्तुनः॥ (शि. २-८)

इत्यादयो विपुलाभेदा अनन्ता एव कविप्रयोगेषु द्रष्टव्याः। सर्वेषु तु प्रायेण चतुर्थवर्णस्य गुरुतेति साम्प्रदायिकाः॥ ३०॥

तारा–जिस 'वक्त्र' छन्द के सम-विषम सभी अथवा मात्र विषम पादों में चतुर्थ अक्षर के बाद तगण (ऽऽ।) हो वह '**तविपुला**' छन्द के नाम से कहा जाता है, अर्थात् जिस आठ अक्षर वाले छन्द के सम-विषम समस्त चारों पादों में प्रथम अक्षर के अनन्तर नगण, सगण न रहे तथा चतुर्थ अक्षर के अनन्तर सभी पादों में अथवा मात्र विषम पादों में ही तगण रहे तो उसे '**तविपुला**' छन्द कहते हैं।

विशेष–'तविपुला' का मतान्तर से उदाहरण निम्न निर्दिष्ट 'अनुष्टुप्' में समझें। यथा–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ
सा वैदुष्ये प्रौढिर्यदि सर्वशास्त्रानुगामिनी।
ऽ ऽ। ऽ ऽ ऽ । । ऽ। ऽ ऽ । ऽ। ऽ
सा शूरता श्रेष्ठा यदि सर्वशास्त्रानुगामिनी॥

इस उदाहरणस्वरूप अनुष्टुप् छन्द के सम-विषम चारों पादों में प्रथम अक्षर के बाद नगण, सगण नहीं है तथा चतुर्थ अक्षर के बाद विपम दोनों पादों में तगण है। अतः यह 'तविपुला' छन्द का उदाहरण है॥ ३०॥

॥ इति वक्त्रप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ मात्रासमप्रकरणम्

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६
। । । । । । । । । । । । । । । । ।

द्विकगुणितवसुलघुरचलधृतिरिति॥ ३१॥

नारायणी–वर्णच्छन्दोऽप्येतद् द्विगुणितवसुपदस्योत्तरत्रानुवृत्तिसिद्ध्यर्थं प्रकीर्णकेष्व-भ्यधायि। तेन मात्रासमकादिषु षोडशमात्रत्वमधिकृतं भवति। द्विगुणाः वसुलघवो-ऽष्टौ लघवो यस्यां साऽचलधृतिरिति कथ्यते। चकाराद् गीत्यार्येत्यपि संज्ञा भवति, इति पिङ्गलमतसङ्ग्रहः। षोडशलघुपादेत्यर्थः॥ ३१॥

तारा–विषम मात्रिक छन्दों का उल्लेख करने के अनन्तर अब सममात्रिक छन्दों का उल्लेख कर रहे हैं। यथा–

जिस छन्द में आठ (वसु) लघु मात्राएँ द्विगुणित की गयी हों, अर्थात् जिसमें १६ लघु मात्राएँ हों उसे '**अचलधृति**' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–प्रस्तुत छन्द-लक्षण ही सोलह लघु मात्राओं वाला है; अतः लक्षण घटित हो जाने से यही लक्षणकारिका इस '**अचलधृति**' छन्द का उदाहरण भी समझें। उदाहरण निम्न छन्द में समझें–

।। । । । । । । । । । । । । । । ।
मदकलखगकुलकलरवमुखरिणि।
। । । । । । । । । । । । । । । । ।
विकसितसरसिजपरिमलसुरभिणि॥
। । । । । । । । । । । । । । । । ।
गिरिवरपरिसरसरसि महति खलु।
। । । । । । । । । । । । । । । । ।
रतिरतिशयमिह मम हृदि विलसति॥

इस उदाहृत पद्य में सोलहों मात्राएँ लघु हैं। अर्थात् समग्र छन्द लघु मात्राओं से ही निर्मित है। अतः '**अचलधृति**' छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण उक्त पद्य '**अचलधृति**' का उदाहरण है॥ ३१॥

ल० गु०
ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

मात्रासमकं नवमो ल्गोऽन्त्यः॥ ३२॥

नारायणी–यत्र पादे नवमो ल लघुरेव गुरुश्चाऽन्ते नियतस्तन्मात्रासमक-संज्ञम्। नवमाऽन्त्ययोर्लघुगुरुनियमाच्छेषे नियमाऽभावः सूचितः। सर्वथा षोडश-मात्रता कार्येति भावः। सर्वेषु मात्रासमेषु सममात्रा परेण युक्ता न कार्येत्यपि सम्प्रदायः। ततश्च प्रथमे जगणाभावाच्चत्वारो गणविकल्पाः।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

यथा–ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।।, द्वितीये त्रयः–ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, मध्यगुरुसर्वलघुगणौ विश्लोकस्येष्टत्वान्न भवतः। तृतीये एकः–।।ऽ, 'नवमो ल्'इति वचनादादिगुरुसर्वगुरून भवतः।मध्यगुरुसर्वलघू तु वानवासिकालक्षण-स्पृष्टत्वान्न भवतः। चतुर्थे द्वौ–ऽऽ, ।।ऽ, गन्तत्वाभिधानादन्ये गणा न भवन्ति। एतेषां विकल्पानामन्योन्यघाते प्रतिचरणं चतुर्विंशतिर्भेदाः। चतुर्णां चतुर्विंशत्य-ङ्कानामन्योन्यहतौ वक्त्रवदेव जाता सङ्ख्या लक्षत्रयं एकत्रिंशत्सहस्री षट्सप्त-त्यधिकसप्तशती चेति। अङ्कतोऽपि ३३१७७६॥ ३२॥

तारा–जिस सोलह मात्रा वाले छन्द में नवम मात्रा लघु हो तथा अन्त में एक गुरुमात्रा हो उसे '**मात्रासमक**' छन्द कहते हैं।

विशेष–उपर्युक्त लक्षण-कारिका ही उदाहरणस्वरूप है। इसमें समस्त लघु मात्राओं का योग सोलह लघु मात्राएँ है, तथा इसकी नवम मात्रा 'न' लघु है–एवं अन्तिम गुरुमात्रा–'न्यः' है। इस प्रकार लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निर्दिष्ट पद्य है–

ऽ ऽ । ।ऽ । ।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ।ऽ ऽ ऽ

अश्मश्रुमुखो विरलैर्दन्तैर्गम्भीराक्षो मितनासाग्रः।

ऽ ऽ।।ऽ ।। ऽ ऽ ऽ ऽ।।ऽ ।।ऽ ।ऽ

निर्मांसहनुः स्फुटितैः केशैर्मात्रासमकं लभते दुःखम्॥

इस उदाहरण के चारों चरणों में नवम मात्रा लघु तथा अन्तिम सोलहवीं मात्रा गुरु है। इस प्रकार '**मात्रासमक**' छन्द का लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य '**मात्रासमक**' का उदाहरण है॥ ३२॥

ज०

ऽ ऽ।ऽ ।ऽ ऽ ऽ ऽ

जोन्लावथाम्बुधेर्विश्लोकः॥ ३३॥

नारायणी–अथेत्यथवेत्यर्थः। अम्बुधेः कलाचतुष्टयादूर्ध्वं जगणोऽथवा न्लौ चतुर्लघुर्वा गणः स्यात्। शेषं पूर्ववत्। स विश्लोको नाम मात्रासमकम्। यद्यपि 'विश्लोकः पञ्चमाष्टमौ' (पि०सू० ४–४४) इति सूत्रे पञ्चमाष्टममात्रयो-र्लघुत्वमात्रमुक्तम्, तथाऽपि पञ्चमाष्टमयोर्लघुता चतुर्थमात्रानन्तरं जगणचतुर्लघ्वोरेव भवति, नान्यथेत्यभिप्रायेणैवमूचिवान्। जपक्षे इदमेवोदाहरणम्। लपक्षे तु 'सेव्यो रघुपतिरात्महितार्थम्'। अत्राद्ये गणे विकल्पाश्चत्वारः। यथा–ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।।, द्वितीये द्वौ–।ऽ।, ।।।।, तृतीयेऽपि द्वौ–ऽऽ, ऽ।।, मध्यगुर्वन्तगुरुसर्वलघुरूपं भेदत्रयं तु चित्रापादकत्वान्न भवति। चतुर्थे गुर्वन्तं गणद्वयम्–।।ऽ, ऽऽ, एतेषां परस्परघाते द्वात्रिंशत्प्रतिपादभेदाः। एतेषां घाते जाता सङ्ख्या दश लक्षा अष्ट-चत्वारिंशत्सहस्राणि पञ्च शतानि षट्सप्ततिश्चेति। अङ्कतोऽपि १०४८५७६॥ ३३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस सोलह लघु मात्रा वाले छन्द में चतुर्थ मात्रा के पश्चात् चारों चरणों में एक जगण (।ऽ।) हो, अथवा नगण व एक लघु (।।।) हो तो उसे **'विश्लोक'** नामक छन्द कहते हैं।

विशेष–चतुर्थ मात्रा के बाद जगण पक्ष में लक्षण-कारिका ही 'विश्लोक' छन्द का उदाहरण है। इसमें चतुर्थ मात्रा **'जोन्ला'** के बाद **'वथाम्बु'** में जगण (।ऽ।) है। अतः यह 'विश्लोक' छन्द के जगण पक्ष का उदाहरण हुआ। चार लघु मात्रा के बाद जगण पक्ष में अन्य उदाहरण देखें–

ऽ ऽ ।ऽ।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ।ऽ ऽ ऽ ।

सद्यः पदारविन्दे मातः शान्तिं तवातिसौभाग्येन।

ऽ ऽ ।ऽ ।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ।ऽ ऽ ऽ ऽ

लप्स्ये कदा भवानि प्रेम्णा येनात्र पूरुषो विश्लोकः॥

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में चार लघु मात्रा के बाद एक जगण का विधान है। अतः यह पद्य 'विश्लोक' छन्द का उदाहरण है, क्योंकि इसमें छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित है।

न० ल०

ऽ ऽ ।।।।ऽ ।।ऽ ऽ

नगण (।।।) पक्ष में **'सेव्यो रघुपतिरात्महितार्थम्'** इसे 'विश्लोक' छन्द का उदाहरण समझें। इसमें चार मात्राओं **'सेव्यो'** के बाद **'रघुपति'** में नगण (।।।) व एक लघु है। अतः यह नगण पक्ष का उदाहरण हुआ।

चार लघु मात्रा के बाद चार लघु मात्रा चारों चरणों में निम्न निर्दिष्ट उदाहृत पद्य में देखें–

ऽ ऽ।।।।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।।।।ऽ ।ऽ ऽ

भ्रातर्गुणरहितं विश्लोकं दुर्णयकरणकदर्थितलोकम्।

ऽ ऽ।।।।ऽ ।।ऽ ऽ ऽ ऽ।।।।ऽ ।।ऽ ऽ

जातं महितकुलेऽप्यवनीतं मित्रं परिहर साधु विगीतम्॥

इस उदाहरणस्वरूप छन्द के चारों चरणों में चार लघु मात्रा के बाद चार लघु मात्राएँ हैं अर्थात् एक नगण व एक लघु मात्रा है। अतः 'विश्लोक' छन्द के दूसरे पक्ष का लक्षण भी पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य 'विश्लोक' छन्द का उदाहरण है॥ ३३॥

ज०

ऽ ।।ऽ ऽ ।ऽ।ऽ ऽ

तद्युगलाद्वानवासिका स्यात्॥ ३४॥

नारायणी–तद्युगलादम्बुधियुगलादष्टमात्रानन्तरं यदि जो न्लौ वा सा वानवासिकेति। 'जो न्लावथ' (वृ. र. २-३३) इति पदत्रयमनुषज्य योज्यम्। अत्रापि द्वादशश्च वानवासिका (पि. सू. ४-४३) इति सूत्रे द्वादशचकारलभ्य-नवमयोर्लघुतोक्ता, सा चैवमेव नान्यथेत्येवमेवोक्तम्। जपक्षे इदमुदाहरणम्।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

लपक्षे यथा–'लोकहितार्थं हरिहरमूर्ती'। अत्राद्ये गणे विकल्पाश्चत्वारः ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।।, द्वितीये त्रयः ऽऽ, ऽ।।, ।।ऽ, तृतीये द्वौ– ।ऽ।, ।।।।, चतुर्थेऽपि द्वौ–ऽऽ, ।।ऽ, एतेषामन्योन्यताडने भेदाः प्रतिपादमष्टाचत्वारिंशद्। अन्योन्यहतौ जाता सङ्ख्या त्रिपञ्चाशल्लक्षा अष्टौ सहस्राणि चत्वारि शतानि षोडश च। अङ्कतोऽपि ५३०८४१६॥ ३४॥

तारा–और यदि तद् युगल, अर्थात् अब्धि (४) युगल (जोड़ी–८), तात्पर्य आठ मात्राओं के बाद जगण अथवा नगण (।ऽ। वा ।।।) हो तो उसे **'वानवासिका'** छन्द कहेंगे।

विशेष–इस 'वानवासिका' छन्द के जगण पक्ष का उदाहरण लक्षणकारिका ही है। इसमें आठ मात्राओं के बाद **'नवासि'** में जगण ही है। अतः यही जगण पक्ष का उदाहरण है।

जगण पक्ष का अन्य उदाहरण देखें–

ऽ ।।ऽऽ ।ऽ। ऽऽ

या स्वसुखार्थं सदैव भक्त्या।

इस उदाहृत अंश में आठ लघुमात्राओं के बाद एक जगण है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह अंश (चरण) 'वानवासिका' छन्द के जगण पक्ष का उदाहरण है।

नगण पक्ष में 'वानवासिका' का उदाहरण इस प्रकार समझें–

ऽ ।।ऽऽ ।।।।ऽ ।

'लोकहितार्थं हरिहरमूर्ति'

इस उदाहृत छन्द में आठ मात्राओं के बाद 'हरिहर' में नगण (।।।) है। अतः यह नगण पक्ष का उदाहरण है॥ ३४॥

ल० ल० ल०

ऽ ऽ।। ।।।। ऽ ।ऽ

बाणाष्टनवसु यदि लश्चित्रा॥ ३५॥

नारायणी–बाणाः पञ्च। पञ्चमाष्टमनवसु यदि लघुः स्यात्। शेषं पूर्ववत्। तदा चित्रा नाम। अस्यामाद्ये गणे चत्वारो विकल्पाः; यथा–ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।।, द्वितीयेऽपि द्वौ– ।ऽ।, ।।।।, तृतीये त्रयः– ।।ऽ, ।ऽ।, ।।।।, चतुर्थे द्वौ–ऽऽ, ।।ऽ, अन्योन्यघाते प्रतिपादं भेदसङ्ख्या अष्टाचत्वारिंशत्। अन्योन्यगुणने पूर्वैव सङ्ख्या॥ ३५॥

तारा–सोलह मात्रा वाले छन्द में जब पाँचवी (बाण), आठवीं तथा नवीं मात्रा लघु हो तब उसे **'चित्रा'** छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–उपर्युक्त कारिका ही 'चित्रा' छन्द का उदाहरण भी है। क्योंकि इसमें लक्षण पूर्णरूपेण घटित है। इस कारिका की पञ्चम **'ष्ट'**, अष्टम **'सु'** तथा नवम **'य'** की मात्राएँ लघु ही हैं। अतः यही कारिका 'चित्रा' छन्द का उदाहरण है। उदाहरणान्तर निम्न पद्य है–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

। । ऽ । । । । ।ऽ ऽऽ ऽ ऽ । । । ।। । । । । ऽ ऽ

यदि वाञ्छसि परपदमारोढुं मैत्रीं परिहर सह वनिताभिः।

ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

मुह्यति मुनिरपि विषयासङ्गाच्चित्रा भवति हि मनसो वृत्तिः॥

इस उदाहरण के चारों चरणों में पाँचवीं, आठवीं तथा नवीं मात्रा लघु है। अतः 'चित्रा' छन्द का लक्षण इसमें पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'चित्रा' छन्द का उदाहरण है॥ ३५॥

। । ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

उपचित्रा नवमे परयुक्ते॥ ३६॥

नारायणी—नवमे मात्रास्वरूपे परेण दशमेन युक्ते मिलिते सत्युपचित्रा नाम। शेषं प्राग्वत्। जयदेवस्त्वेकादशमात्रास्वपि नियममाह—'अष्टभ्यो गो ल्या-वुपचित्रा' इति। अष्टकलानन्तरं गुरुलघुयगणा इत्यर्थः। अत्र तृतीये गणे द्वौ विकल्पौ—ऽऽ, ऽ।।, अन्ये गणविकल्पा मात्रासमकवत्। अन्योन्यघाते प्रतिपादं भेदा अष्टचत्वारिंशत्। अन्योन्यघाते सङ्ख्या प्राग्वत्॥ ३६॥

तारा—यदि सोलह मात्रा वाले छन्द में नवम मात्रा दशम मात्रा से संयुक्त हो, अर्थात् नवम मात्रा दशम मात्रा के साथ गुरु मात्रा हो तो उसे 'उपचित्रा' छन्द कहा जाता है।

विशेष—उदाहरणस्वरूप यही लक्षणकारिका प्रस्तुत है। इसमें नवम मात्रा 'मे' में दशम मात्रा भी संयुक्त है। अर्थात् नवम-दशम लघु मात्रा मिलकर एक गुरु 'मे' में एकार है। अतः यह 'उपचित्रा' का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न निर्दिष्ट छन्द में स्पष्ट है—

ऽ ऽ ऽ ।। ऽ। । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

यच्चितं गुरुसक्तमुदारं विद्याभ्यासमहाव्यसनञ्च।

ऽ ऽ ऽ । । ऽ।। ऽ ऽ ऽ । । ऽ। । ऽ । । ऽ ऽ

पृथ्वी तस्य गुणैरुपचित्रा चन्द्रमरीचिनिभैर्भवतीयम्॥

इस उदाहरण पद्य के चारों चरणों में नवीं तथा दशवीं मात्रा संयुक्त है, अर्थात् नवीं, दशवीं मात्रा संयुक्त होकर गुरु है। अतः उक्त 'उपचित्रा' छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'उपचित्रा' छन्द का उदाहरण है॥ ३६॥

भ० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

अष्टाभ्यो भाद् गावुपचित्रा॥ ३७॥

तारा—जिस सोलह मात्रा वाले मात्रासमक 'उपचित्रा' का पूर्व कारिका में लक्षण बताया गया है, उसी का यह विकल्प किसी के मत में है कि जिस

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सोलह मात्रा वाले छन्द में आठ मात्राओं के बाद भगण (ऽ।।) हो, उसके बाद दो गुरु हों तो उसे 'उपचित्रा' कहा जायगा।

इसी प्रकार किसी के मत में–

'अष्टाभ्यो गो ल्यावुपचित्रा'

अर्थात् आठ मात्राओं के बाद गुरु, लघु व यगण हो तो उसे 'उपचित्रा' कहेंगे।

विशेष–उपर्युक्त भेद का उदाहरण **'अष्टाभ्यो गो ल्यावुपचित्रा'** तथा लक्षणकारिका भी है। इन दोनों में आठ मात्रा के पश्चात् 'ऽ।।ऽऽ' यही स्थिति है। अर्थात् भगण (ऽ।।) तथा दो गुरु (ऽऽ) अथवा गुरु-लघु (ऽ।) तथा यगण (।ऽऽ), दोनों प्रकार से एक ही स्थिति है। अतः लक्षण उदाहरण एक ही है। कोई अन्तर नहीं है। केवल कहने के ढंग में अन्तर है। कारिका भाग के 'गावुपचित्रा' में तथा 'ल्यावुपचित्रा' में भी 'ऽ।।ऽऽ' यही स्थिति है। अतः दोनों लक्षण पद्य ही उपचित्रा के उदाहरण भी हैं॥ ३७॥

ज० गु०

।।ऽ। ।। ।।। ऽ।।ऽ ऽऽ।ऽ।ऽऽ ।। ऽ

यदतीत-कृत-विविध-लक्ष्मयुतैर्मात्रासमादिपादैः कलितम्।

ज० गु०

।।।।।।।ऽ।।ऽ।।ऽ ।ऽ। ऽ ऽ ।।ऽ

अनियतवृतपरिमाणसहितं प्रथितं जगत्सु पादाकुलकम्॥ ३८॥

नारायणी–अतीतानि पूर्वोक्तानि कृतानि विविधानि नानाप्रकाराणि यानि लक्ष्माणि लक्षणानि तद्युक्तैर्मात्रासमादीनां पञ्चानां पादैः कलितं रचितं तथाऽनियतवृत्तं पादचतुष्केऽपि नियतैकवृत्तलक्षणहीनं परिमाणेन च षोडशमात्रपादत्वेन युक्तम्। ततः कर्मधारयः। एतादृशं यद् वृत्तं तत्पादाकुलकमित्यन्वर्थसंज्ञया ज्ञेयमिति तच्छब्दाध्याहारेण योज्यम्। अथ प्रथमपादे मात्रासमकविश्लोकचित्राणां लक्षणयोगः, विश्लोकोपचित्रयोर्द्वितीये, मात्रासमकवानवासिकयोस्तृतीये, उपचित्राविश्लोकयोश्चतुर्थे इति। इदं च प्रतिपादमनेकपूर्वोक्तलक्षणं मत्वोदाहरणं मन्तव्यम्। अन्ये तु प्रतिपादमेकैकलक्षणयोगं वदन्तः समुदितेषु विविधलक्षणयोगाभिप्रायेणेदं व्याचक्षते। वयं तूभयथा व्याख्याने दोषाभावं वदामः। अत एव मात्रासमकादिप्रकृत्या 'एभिः पादाकुलकम्' (पि. सू. ४-४७) इति सूत्रकारः सामान्यत एवाह। तथा मात्रासमकविश्लोकवानवासिकोपचित्राणामसङ्कीर्णपादवदुदाहरणमाह यथा–

अलिवाचालितविकसितचूते काले मदनसमागमदूते।
स्मृत्वा कान्तां परिहृतसार्थः पादाकुलकं धावति पान्थः॥ इति।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सङ्कीर्णोदाहरणं तु मूल एव। तेनोभयथापि न दोषः। अत्र पञ्चानां मात्रासमकादीनां परस्परसङ्करे अनन्ता एव भेदाः। तत्र यथा द्वयोर्द्वयोः सङ्करे चत्वारिंशदधिकं शतं भेदा भवन्ति। तद्यथा–

१ २	२ ३	३ ४	४ ५
१ ३	२ ४	३ ५	१४
१ ४	२ ५	२८	
१ ५	४२		
५६			

१४+२८+४२+५६ =१४०

अत्रैककोष्ठस्याङ्कद्वयसङ्ख्याकवृत्तद्वयस्य सङ्करे वक्ष्यमाणोपजातिप्रस्तार-मार्गेण चतुर्दश प्रतिकोष्ठं भेदा भवन्ति। एवं प्रथमद्वितीययोः प्रथमतृतीययोः प्रथमचतुर्थयोः प्रथमपञ्चमयोः सङ्करे चत्वारश्चतुर्दशका मिलिताः षट्पञ्चाशद् (५६) भवन्ति। तथा द्वितीयतृतीयद्वितीयचतुर्थद्वितीयपञ्चमानां सङ्करे द्विचत्वारिंशत् (४२)। तथा तृतीयचतुर्थतृतीयपञ्चमानां सङ्करेऽष्टाविंशतिः (२८) तथा चतुर्थ-पञ्चमयोः सङ्करे चतुर्दश (१४) इति। सर्वेषां मेलने शतमेकं चत्वारिंशच्च (१४०)। एवं त्रयाणां चतुर्णां सङ्करेऽप्यूह्यः। एतेषामुदाहरणान्यूह्यानि। विस्तरभयात्तु नोच्यन्ते। अत्राचलधृत्यादीनां सर्वेषां षोडशमात्रपदत्वेन समत्वान्मात्रासमक-संज्ञा॥ ३८॥

तारा–पूर्वोक्त मात्रासमादि छन्दों के विविध भेदों के लक्षणों से युक्त पृथक् पृथक् पादों के रहने पर जिनका कि एक लक्षणस्वरूप पृथक् से न बताया गया हो, उसे '**पादाकुलक**' छन्द कहते हैं। ये छन्द '**पादाकुलक**' नाम से ही जगत् में विख्यात हैं।

विशेष–उपर्युक्त प्रकार से परस्पर एक-दूसरे सममात्रिक छन्दों के लक्षणों से संकीर्ण पृथक्-पृथक् पाद वाले छन्दों के अनेक भेद बन सकते हैं। उदाहरण-स्वरूप कुछ उद्धृत किये जा रहे हैं। यथा–

मूल कारिका ही सङ्कर का उदाहरण है। इसके प्रथम पाद में '**मात्रा-समक**', '**विश्लोक**' तथा '**चित्रा**' के लक्षण घटित होते हैं। द्वितीय पाद में '**विश्लोक**' तथा '**उपचित्रा**' के लक्षण समाहित हैं। तृतीय पाद में '**मात्रासमक**' तथा '**वानवासिक**' के लक्षण हैं और चतुर्थ अन्तिम पाद में '**विश्लोक**' तथा '**उपचित्रा**' के लक्षण घटते हैं। इस प्रकार यह परस्पर '**संकीर्ण**' लक्षणों से युक्त '**पादाकुलक**' छन्द का लक्षण समझें। तथा–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

। । ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ । । ऽ ऽ
अलिवाचालितविकसितचूते काले मदनसमागमदूते।
ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ
स्मृत्वा कान्तां परिहृतसार्थः पादाकुलकं धावति पान्थः॥

इस उदाहृत पद्य में चारों पाद पृथक्-पृथक् '**मात्रासमक**' छन्द के लक्षणों से युक्त हैं। यथा-प्रथम पाद '**मात्रासमक**' के लक्षणों से युक्त है तो द्वितीय पाद '**विश्लोक**' छन्द के लक्षणों वाला है, इसी प्रकार तृतीय पाद '**वानवासिक**' तथा चतुर्थ पाद '**उपचित्रा**' छन्द के लक्षणों से समाहित है। अतः इसे '**असङ्कीर्ण पादाकुलक**' का उदाहरण जानें।

इनके अनेक भेदों की परिकल्पना नारायणी में स्पष्ट निर्दिष्ट है। जिसका प्रस्तार निम्न निर्दिष्ट है॥ ३८॥

ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ
वृत्तस्य लो विना वर्णैर्गा वर्णा गुरुभिस्तथा।
गुरवो लैर्दले नित्यं प्रमाणमिति निश्चितम्॥ ३९॥

नारायणी-अथोक्तानां वक्ष्यमाणानां च वृत्तानां गुरुलघुमात्रावर्णैयत्तापरिज्ञानोपायमाह-**वृत्तस्येति**। वृत्तस्य ला मात्रा वर्णैर्विना गा गुरवो ज्ञेया इत्यध्याहारः। ला वर्णा गा इत्यादिभिर्वर्णैस्तत्सङ्ख्या लक्ष्यते। ततश्चायमर्थः-यदि वृत्तस्य मात्रावर्णयोः सङ्ख्या विज्ञाता, गुरुलघुसङ्ख्या च न ज्ञाता तदा मात्रासङ्ख्यायां वर्णसङ्ख्यामपनीयाऽवशिष्टा गुरुसङ्ख्या ज्ञेयेति, वर्णसङ्ख्यामध्ये च ज्ञातां गुरुसङ्ख्यामपनीयावशिष्टा लघुसङ्ख्या ज्ञेयेत्याशयः। यदि तु मात्राणां गुरूणां च ज्ञातसङ्ख्यत्वं वर्णाश्चाऽज्ञातसङ्ख्यास्तदा तज्ज्ञानोपायमाह-**वर्णा इति**। तथा वृत्तस्य मात्रा गुरुभिर्विना वर्णा ज्ञेया इत्यर्थः। वृत्तमात्रासंख्यायां गुरुसङ्ख्यामपनीयाऽवशिष्टा वर्णसङ्ख्येत्यर्थः। वृत्तमात्रालघुसङ्ख्याज्ञाने सति गुरुज्ञाने प्रकारान्तरमाह-**गुरव इति**। वृत्तस्य ला इत्यनुषङ्गः। वृत्तस्य मात्राः लैर्लघुभिर्विना दलेऽर्धे कृते गुरवो ज्ञेयाः। वृत्तमात्रासङ्ख्यायां लघुसङ्ख्यामपनीयाऽवशिष्टां सङ्ख्यामर्धीकृत्य तावत्प्रमाणा गुरुसङ्ख्येत्यर्थः। उक्तां गुर्वादिसङ्ख्यामुपसंहरति-**नित्यमिति**। इत्यमुना प्रकारेण प्रमाणं गुर्वादीनां नित्यं सर्वदा निश्चितं भवतीति शेषः। वृत्तस्येत्युपलक्षणम्। गद्यादावपि सम्भवात्। अत्र च गुरुवर्णसङ्ख्यायाज्ञानोपायप्रदर्शनमुपलक्षणार्थम्। तथा हि मात्रावर्णगुरुलघुचतुष्टयात्मके वृत्ते द्वयोर्द्वयोरियत्तापरिच्छेदेऽन्ययोः सङ्ख्यापरिच्छित्तेः। तद्यथा-मात्रावर्णयोर्मात्रागुर्वोर्मात्रालघ्वोर्वर्णलघ्वाश्च षट्सु द्विकेष्वेकैकद्विकज्ञानेऽपरं द्विकमुक्तया दिशा ज्ञेयमिति। इदं सर्वमुदाहरणे योज्यते-'**वागर्थाविव सम्पृक्तौ**' (रघु १-१) इत्यत्र चतुर्दशमात्रास्वष्टरूपां वर्णसङ्ख्यामपनीयाऽवशिष्टा षड्गुरवः। वर्ण-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सङ्ख्यापूरकौ च द्वौ। एवं षड्रूपां गुरुसङ्ख्यामपनीयाऽवशिष्टा वर्णा अष्टौ, गुरूणां षट्त्वादवशिष्टौ द्वौ लघू। एवं लघुद्वयमपनीयावशिष्टायां द्वादशसङ्ख्यायामर्धितायां षट्सङ्ख्या गुरवः, गुरुभिर्द्वादशमात्रासिद्धेश्चतुर्दशमात्रासिद्ध्यर्थं द्वौ लघू इति। एवं वर्णगुरुज्ञाने गुरुलघुज्ञाने चेतरद्वयज्ञानं योज्यम्। एवं सर्वेषु गद्यपद्येषु॥ ३६॥

इति श्रीनारायणभट्टविरचितायां वृत्तरत्नाकरटीकायां मात्रासमप्रकरणम्।

तारा–'वृत्त' की लघु-गुरु मात्राओं एवं वर्णों की निश्चित संख्या-ज्ञान का प्रकार उपस्थित कर रहे हैं। यथा–किसी भी 'वृत्त' की लघु मात्राओं की संख्या में वर्णों की संख्या घटा देने पर गुरु मात्राओं की संख्या अवशेष रह जाती है। इसी प्रकार 'वृत्त' की वर्ण-संख्या में से गुरु-संख्या घटा देने पर वर्ण शेष रहते हैं। और गुरु-संख्या में से लघु-संख्या घटा देने पर लघु मात्रा शेष रहती है।

विशेष–अर्थात् यदि किसी 'वृत्त' की मात्रा-संख्या तथा वर्ण-संख्या ज्ञात हो, किन्तु गुरु-लघु संख्या ज्ञात न हो तो मात्रा-संख्या में से वर्ण-संख्या घटा दीजिए, जो शेष रहे वह गुरु-संख्या समझें। और वर्ण-संख्या में से ज्ञात गुरु-संख्या घटा देने पर शेष लघु-संख्या होगी। इसी प्रकार यदि 'वृत्त' की मात्रा-संख्या तथा गुरु-संख्या ज्ञात हो, किन्तु वर्ण-संख्या न ज्ञात हो तो 'वृत्त' की मात्रा-संख्या में से गुरु-संख्या घटा दें, जो शेष बचे उसे वर्णसंख्या समझें। यह 'वृत्त' के लघु-गुरु तथा वर्ण-मात्रा जानने का उपाय है। यथा–

मूलकारिका में ही घटा कर देख लें। इसमें 'आठ वर्ण' तथा 'चौदह मात्राएँ' हैं और 'छः गुरु' हैं। अब यहाँ छः गुरु तथा आठ वर्ण ज्ञात है, तो आठ वर्ण-संख्या में से छः गुरु-संख्या घटा देने पर दो लघु अवशिष्ट रह जाते हैं, यह लघु-संख्या ज्ञात हो गई। यदि लघु-संख्या ज्ञात हो तो, दो लघुसंख्या आठ वर्ण-संख्या से घटा दें शेष छः गुरु-संख्या निकल आयेगी। इसी प्रकार गुरु-संख्या से लघु-संख्या घटा देने पर.....॥ ३६॥

॥ इति मात्रासमकप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

{ल० गु०
{२८ ऽ

शिखिगुणितदशलघुरचितमपगतलघुयुगलमपरमिदमखिलम्।

{ल० गु०
{३० ऽ

सगुरुशकलयुगलकमपिसुपरिघटितललितपदनिचिति भवति शिखा ॥ ४० ॥

नारायणी—मात्रानियमघटितत्वान्मात्रावृत्तप्रसङ्गेन द्विखण्डकान्याह—शिखीति। शिखिनो गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्न्याख्यास्त्रयोऽग्नयः। तैस्त्रित्वाख्या तत्सङ्ख्या लक्ष्यते। तेन शिखिभिर्गुणितास्त्रिगुणीकृता ये दश लघवस्तैः रचितमेकं शकलमित्यध्याहारः, अपरमित्यग्रेऽभिधानात्। तच्चाऽपगतं न्यूनं लघुद्वयं यस्मात्तादृक्कार्यम्। अपरं द्वितीयं शकलमित्यर्थः। इदं पूर्वोक्तमखिलं समग्रं लघुद्वयान्न्यूनं त्रिंशल्लघुकं भवति। शकलयुगलकमर्धद्वयमपि सगुरु अन्तेऽधिकैकगुरुयुक्तम्। सुष्ठु परिघटिता रचिता ललिता पदवितितिः पदरचना यत्र तत् तादृशं च भवति शकलयुगलं यस्यां सा शिखेति, यत्तच्छब्दाऽध्याहारेणार्थः। अयं भावः—पूर्वार्धेऽष्टाविंशतिर्लघव एको गुरुरिति एकोनत्रिंशदक्षराणि, उत्तरार्धे त्रिंशल्लघव एकश्च गुरुरित्येकत्रिंशदक्षराणि यत्र सा शिखेति। सुपरिघटितेतिपदेन श्रुतिसुकर्त्री यतिः कार्येति सूचयति॥ ४०॥

तारा—मात्रा छन्दों के निरूपण-क्रम में ही अब दो खण्ड वाले छन्दों का निरूपण करते हैं। तीन संख्या से गुणा किये गये दश लघुवर्ण हों जिस दो खण्ड वाले छन्द में हो, परन्तु जिसके प्रथम खण्ड में से दो लघु वर्ण निकाल लिये गये हों अर्थात् जिसके प्रथम खण्ड में अट्ठाइस लघु वर्ण हों और द्वितीय खण्ड में तीस लघु वर्ण हों और अन्त में दोनों खण्डों में एक-एक गुरु वर्ण हो,—इस प्रकार के मनोरम पदों वाले छन्द को **शिखा** छन्द के नाम से छन्दःशास्त्र में जाना जाता है।

उपर्युक्त छन्द का उदाहरण भी लक्षणश्लोक ही है। इसके पूर्वार्द्ध (प्रथम खण्ड) में अट्ठाइस लघु मात्रायें और अन्त में एक गुरु है तथा उत्तरार्ध (द्वितीय खण्ड) में तीस लघु-मात्रायें और एक गुरु वर्ण है। अतः यह लक्षण-श्लोक ही **शिखा** छन्द का उदाहरण भी है॥ ४०॥

ल० गु०
३० ऽ

विनिमयविहितशकलयुगललघुललितपदवितितिरचितगुणनिचया।

ल० गु०
२८ ऽ

श्रुतिसुखकृदियमपि जगति त्रिजशिर उपगतवति सति भवति खजा॥ ४१॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी—इयमेव शिखा यदि विनिमयेन व्यत्यासेन विनिहितं निवेशितं यच्छकलयुगलं तेन कलिता घटिता पदसमुदायकृतसौकुमार्यादिगुणसमुदायवती च, कलितान्तस्य पदादिना कर्मधारयः। श्रुतिसुखकारिणी वेति पूर्ववद्यति कार्येति सूचितम्। ञि ञकारे। जशिर इति जकारात् प्रागुच्चारणे प्राप्ते सति खजा भवति। खञ्जेति यावत्। गुरुद्वयस्य छन्दसि प्रवेशयितुमशक्यत्वादुक्तिप्रकारोऽयम्। विनिमयविनिहितशकलयुगललघुललितपदविततिरचितेति पाठे युगलान्तस्य लघ्विवत्यादिना कर्मधारयः। यद्यपि सूत्रकारेण 'अर्धे' (पिं. सू. ५-३१) इत्यधिकृत्य 'शिखैकान्नत्रिंशदेकत्रिंशदन्तग्'(पिं. सू. ५-४४) इति च वदता पूर्वोक्तनियमवदेकोनत्रिंशदक्षरैकत्रिंशदक्षररचितक्रमवद्व्युक्रमवत्पादद्वयघटितार्ध-द्वयवत्यौ विंशत्यधिकशताक्षरे शिखाखञ्जे उक्ते। अत्र तु षष्टयक्षरे एवेति विरोधस्तथापि ग्रन्थान्तरपर्यालोचनयैवमुक्तिः। यद्वा सूत्रकारोक्तशिखाखञ्जाभ्यामेते अन्ये एव सूत्रानुक्ते एवात्रोक्ते। सूत्रोक्ते तु चतुर्थेऽध्याये अर्धसमत्वात्स्वयमूह्ये। अथवोभयत्रापि शकलशब्दावयववचनत्वात्पादरूपावयवपरौ कृत्वा मूलोदाहरणे चार्धविषये मत्वार्धसमत्वेऽपि च मात्रानियमात्मकत्वान्मात्रावृत्तप्रकारेणोक्तिं समाधाय सूत्रानुसारः कार्य इति सर्वं सुस्थम्॥ ४१॥

तारा—पूर्वपठित शिखा छन्द को जहाँ विनिमय (उल्टा) कर दिया जाय तो उस कर्णप्रिय, मनोरम पद-विभूषित छन्द को छन्दःशास्त्र में 'खञ्जा' नाम से अभिहित किया जाता है, अर्थात् जिस छन्द के प्रथम खण्ड में शिखा के उल्टा तीस लघु वर्ण और अन्त में एक गुरु हो तथा द्वितीय खण्ड में अट्ठाइस लघु वर्ण और अन्त में एक गुरु वर्ण हो उसे 'खञ्जा' कहा जाता है।

प्रकृत छन्द 'खञ्जा' का उदाहरण भी उपर्युक्त लक्षणश्लोक ही है। इसके पूर्वार्द्ध में प्रथमतः तीस लघु मात्राओं के अनन्तर एक गुरु है तथा उत्तरार्ध में अट्ठाइस लघु मात्राओं के अनन्तर एक गुरु होने से यही लक्षणश्लोक ही 'खञ्जा' का उदाहरण भी है॥ ४१॥

गु० १६

अष्टावर्धे गा द्वयभ्यस्ता यस्याः सानङ्गक्रीडोक्ता।

ल० ३२

दलमपरमपिवसुगुणितसलिलनिधिलघुकविरचितपदवितति भवति॥ ४२॥

नारायणी—यस्या अर्धे अष्टौ गा गुरवो द्वयभ्यस्ता द्विगुणाः षोडशेत्यर्थः। अपिश्चार्थः। अपरं च दलं द्वितीयमर्धवसवोऽष्टौ तैर्गुणिताः सलिलनिधिलघवश्च-त्वारो लघवो द्वात्रिंशद्यत्र तत्तादृक्कविना रचिता पदानां विततिर्विस्तरो यत्र तादृक्

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भवति साऽनङ्गक्रीडेति संज्ञयोक्ता वृत्तज्ञैः। पूर्वार्धे षोड़श गुरवः, उत्तरार्धे द्वात्रिंशल्लघवः कार्या इति तात्पर्यार्थः। कवीत्यादिना श्रुतिसुखा यतिर्भवतीत्यसुसूचत्। पैङ्गले त्वियं सौम्येति संज्ञिता। इयमेव व्यत्यस्तार्धतायां ज्योतिराख्या भवति। उदाहरणं तु–

यदि सुखमनुपममपरमभिलषसि परिहर युवतिषु रतिमतिशयमिह।
आत्ज्योतिर्योगाभ्यासाद् दृष्ट्वा दुःखच्छेदं कुर्याः।

अनयोर्द्वयोः शिखेति सामान्यसंज्ञा पैङ्गले उक्ता॥ ४२॥

तारा–जिस वृत्त के पूर्वार्द्ध (प्रथम खण्ड) में दो से गुणित आठ (२×८ =१६) अर्थात् सोलह गुरु वर्ण हों और उत्तरार्ध (द्वितीय खण्ड) में आठ से गुणित चार (८×४=३२) अर्थात् बत्तीस लघु वर्ण हों–इस प्रकार के पदों से युक्त वृत्त को छन्दःशास्त्र में '**अनङ्गक्रीड़ा**' वृत्त के नाम से जाना जाता है। इसके उदाहरणस्वरूप भी उपर्युक्त लक्षण-श्लोक ही है। इसके पूर्वार्द्ध में सोलह गुरु मात्रायें और उत्तरार्ध में बत्तीस लघु मात्रायें हैं; अतएव यह लक्षणश्लोक ही इसका उदाहरण भी है।

विशेष–जहाँ अनङ्गक्रीड़ा का विनिमय दिखाई पड़े तो उसे आचार्यों ने '**ज्योतिराख्या**' नामक छन्द से अभिहित किया है। जैसे–

ल० ३२

यदि सुखमनुपममपरमभिलषसि परिहर युवतिषु रसभतिशयमिह।

गु० १६

आत्मज्योतिर्योगाभ्यासाद् दृष्ट्वा दुःखच्छेदं कुर्याः॥

इस उपर्युक्त उदाहरण के पूर्वार्द्ध में अनङ्गक्रीडा के विपरीत बत्तीस लघु मात्रायें और उत्तरार्ध में सोलह गुरु वर्ण हैं अतएव यह 'ज्योतिराख्या' नामाभिध छन्द का उदाहरण है॥ ४२॥

ल० गु० २७ ऽ

त्रिगुणनवलघुरवसितिगुरुरिति दलयुगकृततनुरिह रुचिरा॥ ४३॥

नारायणी–त्रिगुणा नव लघवो यत्र, सप्तविंशतिरित्यर्थः। अवसितावसाने गुरुर्यया: सा तथा इत्यमुना प्रकारेणार्धद्वयरचितशरीरातिरुचिरा संज्ञिता। पैङ्गले त्वियं चूलिकेत्युक्ता। अर्धसमत्वेऽप्यस्या मात्रामात्रघटितत्वादत्रोक्तिः। 'चूलिकैकोनविंशदन्ते ग्' (पिं. सू. ४-५२) इति सूत्रपाठपक्षेणैवमुक्तम्। 'चूलिकाऽर्धमेकोनत्रिंशदन्ते ग् इति पाठे तु प्रथमं द्वितीयं चार्धं क्रमेणैकोनत्रिंशदेकत्रिंशन्मात्रं भवति, अन्ते च मात्राद्वयस्थाने गुरुरेकः स्यात्सा चूलिकेति सूत्रार्थः। अस्मिन्पक्षे

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

मूलानुक्तमुदाहरणं ममैव–

रघुकुलनलिनविकासनशशभृति दशमुखमुखरिपुतिमिरहरे।
विषधरविषमविषयहरमहसि कुरु रतिमिह दशरथतनये॥

अत्र सूत्रेऽर्धग्रहणात्पादनियमो नास्ति। इह चावसितिगुरुरिति पदेन गुरावेवावसानं नान्यत्रेति सूचितम्॥ ४३॥

इति श्रीमद्भट्टरामेश्वरसूनुनारायणभट्टविरचितायां वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां मात्रावृत्ताधिकारो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥

तारा–छन्दःशास्त्र में जिस वृत्त के दोनों खण्डों में त्रिगुणित नव (३×९=२७) अर्थात् सत्ताइस लघु और तत्पश्चात् अन्त में एक गुरु हो, ऐसे दोनों खण्डों से युक्त छन्द को 'रुचिरा' नाम से अभिहित किया जाता है। प्रकृत रूचिरा छन्द का उदाहरण भी यह लक्षण-श्लोक ही है। इसमें प्रथमतः सत्ताइस लघु मात्राओं के पश्चात् अन्त में एक गुरु है अतएव यही 'रुचिरा' का उदाहरण भी है॥ ४३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

ऽ ऽ

(१) उक्ता। गुः श्रीः ॥ १ ॥

नारायणी—एवं मात्रावृत्तान्यभिधायाऽधुना वर्णवृत्तेषु समवृत्तानि कीर्त्तयति—उक्ता इति। अधिक्रियत इति शेषः। सप्तम्यन्तपाठे तु भेदा अभिधीयन्त इति। एवमत्युक्तादिष्वपि व्याख्येयम्॥

अथोक्ता (१)— गुः श्रीरिति।

एकाक्षरपादायामुक्तायां गुरुरेकश्चेत्पादस्तदा श्रीर्नाम। लक्ष्यलक्षणयोरेकाक्षरेण पादेनासङ्ग्रहादर्धोदाहरणमेतत्।

नोक्ता उक्तादिभेदा ये ग्रन्थगौरवभीतितः।
तांस्तथा शब्दचिह्नेन वदामोऽन्यत्र दर्शनात्॥

यथा—

अस्मत्पिकृते नव्ये काव्ये रामकुतूहले।
उक्ता उक्तादयो व्यक्ता विवेक्तव्याः सुयुक्तिभिः॥

अत्र वक्ष्यमाणसङ्ख्याऽऽख्यानप्रकारेण वृत्तभेदौ २। न च सुप्रतिष्ठान्तानां पञ्चानां जातीनां सूत्रेऽनुक्तत्वान्निर्मूलतेति शङ्क्यम्। 'द्विकौ ज्लौ' (पिं. सू. ८-२०) इति प्रस्तारकथने, 'परे पूर्णम्' (पिं. सू. ८-३३) इति मेरुप्रस्तारकथने च सूत्रकारेणाऽपि दर्शितत्वात्। बहुतरप्रचाराभावात्तु गाथाभेदवल्लक्षणानुक्तेरुपपत्तिः॥ १॥

तारा—प्रथम अध्याय में कथित '**मात्रावर्णविभेदेन**' के अनुसार द्वितीय अध्याय में मात्रा-वृत्तों का उल्लेख कर क्रमप्राप्त अब इस तृतीय अध्याय में वर्ण-वृत्तों के उपक्रम में सर्वप्रथम समवृत्तों का उल्लेख कर रहे हैं।

समवृत्तों के प्रथम भेद एक अक्षर वाला '**उक्ता**' छन्द के नाम से कहा जाता है। जिस उक्ता छन्द के प्रत्येक पाद में एक गुरु वर्ण हो, उसे '**श्रेणी**' नामक छन्द कहते हैं॥ १॥

विशेष—इस वृत्तरत्नाकार छन्दोग्रन्थ में उदाहरणों का निर्देश पृथक् से नहीं किया गया है। लक्षण ही उदाहरण-समन्वित हैं। प्रत्येक लक्षणकारिका में ही छन्द का लक्षण घटित हो जाता है। अतः लक्षण-सूत्र को ही उदाहरण भी समझें।

ग्रन्थान्तर से कुछ पृथक् उदाहरण भी छात्रों के अवबोधन हेतु दिये जा रहे हैं। यथा—छन्दोमञ्जरी में—

ऽ ऽ ऽ ऽ

श्रीस्ते। सास्ताम्

यह उद्धृत है। इसके चारों चरणों में एक-एक गुरु है॥१॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ

(२) अत्युक्ता। **गौ स्त्री॥ २॥**

नारायणी–अथाऽत्युक्ता २–द्वौ गुरू यदि पादे स्तस्तदा स्त्री नाम। अत्र वृत्तसंख्या ४॥ २॥

तारा–दो अक्षरों वाला समवृत्त छन्द 'अत्युक्ता' कहलाता है। जिस अत्युक्ता छन्द के प्रत्येक पाद में दो गुरु हों वह 'स्त्री' नामक छन्द कहा जाता है। यह अत्युक्ता छन्द का प्रथम भेद है। इन अत्युक्ता छन्दों की संख्या चार है। सभी उद्धृत नहीं किये गये हैं। मात्र प्रथम भेद ही मूल में उदाहृत है।

विशेष–इस अत्युक्ता के स्त्री छन्द का उदाहरण भी मूल सूत्र ही है। इसमें 'गौ स्त्री' इस दो गुरु वर्ण वाले प्रथम चरण के समान चारों चरणों को जाने। उदाहरणान्तर चारों चरणों को इस प्रकार समझें–

"गोपस्त्रीभिः। कृष्णः रेमे॥" (छन्दो०)

इस उदाहरण में चारों चरण दो-दो गुरु वर्ण वाले हैं। अतः यह अत्युक्ता के स्त्री नामक भेद का उदाहरण हुआ॥ २॥

मगण	रगण
ऽ ऽ ऽ	ऽ । ऽ
(३) मध्या। **मो नारी॥ ३॥**	**रो मृगी॥ ४॥**

नारायणी–अथ मध्या (३)–मो मगणश्चेत्पादस्तदा नारी नाम॥ ३॥ रगणश्चेत्पादस्तदा मृगी। अत्र सङ्ख्या ८॥ ४॥

तारा–समवृत्तों में तीन अक्षर वाले छन्द को 'मध्या' कहते हैं। जिस मध्या छन्द के प्रत्येक पाद में तीनों वर्ण गुरु हों उसे 'नारी' छन्द के नाम से कहते हैं। यह तीन अक्षर वाले मध्या छन्द का प्रथम भेद है। इन मध्या छन्दों की संख्या आठ है।

विशेष–इस मध्या छन्द के नारी नाम के भेद का उदाहरण भी मूल कारिका ही है। इसी में प्रथम पाद के तीन गुरु वर्ण निर्दिष्ट हैं। इसी के समान तीन गुरुवर्ण वाले चारों पादों को समझना चाहिए। उदाहरणान्तर–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

"गोपानां नारीभिः। श्लिष्टोऽव्यात् कृष्णो वः॥" (छन्दो०)

इस उदाहरण-श्लोक में चारों पाद तीन-तीन गुरु वर्ण के हैं। इससे यह मध्या छन्द के नारी नामक भेद का उदाहरण है॥ ३॥

म० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ

(४) प्रतिष्ठा। **म्गौ चेत् कन्या॥ ५॥**

नारायणी–अथ प्रतिष्ठा (४)–म्गौ मगणगुरू चेत्पादश्चतुर्गुरुरित्यर्थस्तदा कन्या। अत्र सङ्ख्या १६॥ ५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–समवृत्तक चार वर्णों वाले छन्द को '**प्रतिष्ठा**' छन्द कहते हैं। जिस प्रतिष्ठा छन्द के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक गुरु हो उसे '**कन्या**' छन्द कहते हैं। इस प्रतिष्ठा छन्द के सोलह भेद हैं॥

विशेष–यह लक्षणकारिका 'कन्या' छन्द का उदाहरण भी है। इसमें एक मगण व एक गुरु प्रथम चरण में निर्दिष्ट है। इसी प्रकार चारों चरणों को जानें। उदाहरणान्तर छन्दोमञ्जरी का चारों चरणों वाला उदाहरण देखें–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

'**भास्वत्कन्या, सैका धन्या। यस्याः कूले, कृष्णो खेलत्॥**' (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य में चारों चरण चार गुरु वर्ण वाले हैं। अर्थात् इनमें एक मगण व एक गुरु प्रत्येक चरण में है। इससे यह 'कन्या' छन्द का उदाहरण हुआ॥ ५॥

भ० गु०

ऽ । । ऽ ऽ

(५) सुप्रतिष्ठा॥ भ्गौ गिति पङ्क्ति ॥ ६॥

नारायणी–अथ सुप्रतिष्ठा (५)–भगणगुरु पुनर्गुरुश्चेत्येवं पङ्क्तिः। सङ्ख्या ३२॥ ६॥

तारा–समवृत्तों में पाँच अक्षर वाले छन्द को '**सुप्रतिष्ठा**' छन्द कहते हैं। जिस पाँच अक्षर वाले सुप्रतिष्ठा छन्द के प्रति चरण में एक भगण तथा दो गुरु हों उसे '**पङ्क्ति**' छन्द कहते हैं। इस सुप्रतिष्ठा छन्द के बत्तीस भेद होते हैं। यह उसका सातवाँ भेद है॥ ६॥

विशेष–इसी लक्षण सूत्र को इस पङ्क्ति छन्द का उदाहरण भी समझें, क्योंकि इसी में लक्षण घटित है। एक भगण के बाद दो गुरु इसमें स्पष्ट निर्दिष्ट है। अतः यही उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण ग्रन्थान्तर से यह है–

ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

"**कृष्णसनाथा तर्णकपङ्क्तिः। यामुनकच्छे चारु चचार॥**"

इस उदाहृत पद्य में प्रथम चरण की भाँति चारों चरणों में एक-एक भगण तथा दो-दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह पङ्क्ति छन्द का उदाहरण है॥ ६॥

त० य०

ऽ ऽ । । ऽ ऽ

(६) गायत्री॥ त्यौ स्तस्तनुमध्या॥ ७॥

नारायणी–अथ गायत्री (६)–त्यौ=तगण-यगणौ यदि स्तो भवतस्तदा तनुमध्येति। यदि तदेत्यध्या-हार्यम्॥ ७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–समवृत्तों के भेद में छः अक्षरों वाले भेद को 'गायत्री' कहते हैं। जिस छः अक्षर वाले गायत्री छन्द के प्रत्येक पाद में एक तगण और एक यगण हो तो उसे 'तनुमध्या' छन्द के नाम से कहते हैं। इस गायत्री छन्द के चौंसठ भेद हैं। यह तनुमध्या छन्द गायत्री का तेरहवाँ भेद है। मूल में केवल एक इसी भेद को दिखाया गया है। अन्य भेद भी ग्रन्थों में देखें जा सकते हैं॥ ७॥

विशेष–मूल कारिका ही छन्द-लक्षणों से युक्त है। अतः लक्षणकारिका को ही उदाहरणस्वरूप भी समझें। इस 'तनुमध्या' का लक्षण भी उस लक्षण-कारिका में घटित है। इसमें एक तगण व एक यगण है। इसी प्रकार सभी चारों चरणों में जानें। अन्य उदाहरण देखें–

ऽ ऽ। । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

'मूर्तिर्मुरशत्रोरत्यद्भुतरूपा आस्तां मम चित्तं नित्यं तनुमध्या॥'(छन्दो)

इस गायत्री छन्द के प्रत्येक चरण में एक तगण व एक यगण है। अतः यह तनुमध्या छन्द का उदाहरण हुआ॥ ७॥

न० य०

। । । । ऽ ऽ

शशिवदना न्यौ॥ ८॥

नारायणी–नगण-यगणौ यदि पादस्तदा शशिवदना नाम॥ ८॥

तारा–जिस छः अक्षर वाले छन्द के प्रत्येक चरण में एक नगण व एक यगण हो उसे 'शशिवदना' छन्द कहते हैं। यह शशिवदना छन्द गायत्री छन्द का १६वाँ भेद है।

विशेष–इस लक्षणकारिका में ही लक्षण घटित होने से इसे ही शशिवदना छन्द का उदाहरण भी समझें। अन्य उदाहरण–

। । । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ

शशिवदनानां व्रजतरुणीनाम्। अधरसुधोर्मिः मधुरिपुरैच्छत्॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में एक-एक नगण व एक-एक यगण है। अतः यह शशिवदना का उदाहरण है॥ ८॥

म० म०

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

विद्युल्लेखा मो मः॥ ९॥

नारायणी–मगणौ चेत्पादस्तदा विद्युलेखा नाम॥ ९॥

तारा–जिस समवृत्त छः अक्षर वाले छन्द के प्रत्येक चरण में दो मगण हों उसे 'विद्युल्लेखा' छन्द कहते हैं। यह विद्युल्लेखा छन्द गायत्री छन्द का प्रथम भेद है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष—लक्षण सूत्र में ही छन्द लक्षण घटित कर लें। इसी प्रकार चारों चरण समझें तो यही 'विद्युल्लेखा' का उदाहरण भी हो जायगा॥ ९॥

त० स०
ऽ ऽ ।।। ऽ

त्सौ चेद् वसुमती ॥ १०॥

नारायणी—तगण-सगणौ चेत्पादस्तदा वसुमती। गायत्र्यन्तेषु पादेषु पादान्त-यतिरित्याम्नायः। तत्र सङ्ख्या ६४॥ १०॥

तारा—जिस छः अक्षर वाले समवृत्तक 'गायत्री' छन्द के प्रत्येक चरण में एक तगण व एक सगण हो उसे '**वसुमती**' छन्द कहते हैं। यह वसुमती छन्द गायत्री छन्द का उनतीसवाँ भेद है।

विशेष—यही लक्षणसूत्र वसुमती छन्द का उदाहरण भी है। इसमें एक तगण व एक सगण है। इसी प्रकार चारों चरणों को समझें। अन्य उदाहरण अन्यत्र देख लें॥ १०॥

म० स० गु०
ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ

(७) उष्णिक्। म्सौ गः स्यान् मदलेखा॥ ११॥

नारायणी—अथोष्णिक् (७)—मगणसगणगुरुभिर्मदलेखा नाम। तथा—

सरगैर्हसमाला॥ मधुमति ननगाः॥

कुमारललिता ज्सौ ग्॥ चूड़ामणिस्तभगात्॥

अत्र द्वाभ्यां पञ्चभिश्च यतिमाहुः केचित्। अन्ये तु पादान्त एव। अत्र सङ्ख्या १२८॥ ११॥

तारा—सात अक्षरों वाले समवृत्त छन्द को '**उष्णिक्**' छन्द कहते हैं। जिस सात अक्षरों वाले '**उष्णिक्**' छन्द के प्रत्येक पाद में एक मगण, एक सगण और एक गुरु वर्ण हो उसे '**मदलेखा**' छन्द कहते हैं। यह उष्णिक् छन्द एक सौ अट्ठाइस भेद वाला है।

विशेष—लक्षण सूत्र में ही छन्द लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी समझ लें। इसी प्रकार चारों चरण रहेंगे। अन्य उदाहरण—

ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ
रङ्गे बाहुर्विरुग्णाद् दन्तीन्द्रान्मदलेखा।
ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ
लग्नाऽभून्मुरशत्रौ कस्तूरीरसचर्चा॥ (छन्दो०)

इस पद्य के चारों चरणों में एक-एक मगण, सगण तथा एक-एक गुरु वर्ण हैं। अतः यह 'मदलेखा' का उदाहरण है॥ ११॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

।।ऽऽ।ऽऽ ।।।। ।।ऽ
सरगैर्हंसमाला॥ मधुमति ननगा॥
।ऽ।।।ऽ ऽ ऽऽ।। ।।ऽ
कुमारललिता ज्सौ ग्ः॥ चूडामणि तभगात्॥

तारा—जिस सात अक्षर वाले समवृत्त 'उष्णिक्' छन्द के प्रत्येक पाद में सगण, रगण तथा एक गुरु हो उसे 'हंसमाला'। जिसके प्रत्येक पाद में दो नगण तथा एक गुरु हो उसे 'मधुमती'। जिसमें जगण, सगण व एक गुरु रहे उसे 'कुमारललिता' तथा जिसके तगण, भगण व एक गुरु होगा उसे 'चूड़ामणि' छन्द कहा जायगा।

विशेष—मूल कारिकाएँ ही उन छन्दों के उदाहरण भी हैं। ग्रन्थकार ने मूल में इन भेदों को नहीं दिया है। नारायणी में उष्णिक् छन्द के इन चार भेदों का भी उल्लेख है। अन्यत्र इनके उदाहरण इस प्रकार हैं—

।।।।।।ऽ।।।।।।ऽ

मधुमति—रविदुहितृतटे वनकुसुमततिः।
व्यधितमधुमती मधुमथनमुदम्॥ (छन्दो०)

।ऽ।।।ऽऽ ।ऽ।।।ऽ ऽ

कुमारललिता—मुरारितनुवल्ली कुमारललिता सा।
व्रजैणनयनानां ततान मुदमुच्चैः॥ (छन्दो०)

इन उदाहरणों में छन्द-लक्षण स्वयमेव घटित कर लें। ये सब समवृत्त 'उष्णिक्' छन्द के भेद हैं॥ ११॥

भ० भ० गु० गु०
ऽ ।। ऽ।। ऽ ऽ

(८) अनुष्टुप्॥ **भौ गिति चित्रपदा गः॥ १२॥**

नारायणी—अथानुष्टुप् (८)—भगणौ गुरू च यत्र पादे सा चित्रपदा। पादान्ते यतिः॥ १२॥

तारा—अब समवृत्तों के प्रसंग में आठ अक्षर वाले अनुष्टुप् छन्द का उपक्रम कर रहे हैं। जिस समवृत्त के सभी चरणों में आठ अक्षर हों उसे अनुष्टुप् छन्द कहते हैं। इसके दो सौ छप्पन भेद होते हैं। प्रस्तुत छन्द अनुष्टुप् का पचपनवाँ भेद है।

जिस समवृत्त 'अनुष्टुप्' छन्द के प्रत्येक चरण में दो भगण और दो गुरु होते हैं उसे 'चित्रपदा' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

विशेष—चित्रपदा छन्द का लक्षण मूल सूत्र में ही घटित हो जाने से मूल-कारिका चित्रपदा छन्द का उदाहरण भी हो गया। अन्य उदाहरण है—

ऽ।।ऽ।।ऽऽ ऽ।।ऽ।।ऽऽ
यामुनसैकतदेशे गोपवधूजलकेलौ।
कंसरिपोर्गतिलीला चित्रपदा जगदव्यात्॥ (छन्दो०)

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस अनुष्टुप् के चारों चरणों में दो-दो भगण एवं दो-दो गुरु हैं। अतः इसे 'चित्रपदा' का उदाहरण जानें॥ १२॥

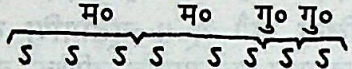

मो मो गो गो विद्युन्माला॥ १३॥

नारायणी—श्चतुर्भि मगणौ द्वौ च गुरू विद्युन्मालेति। चतुर्भिश्च यतिरिति सम्प्रदायः॥ १३॥

तारा—जिस समवृत्त '**अनुष्टुप्**' छन्द के चारों चरणों में दो-दो मगण तथा दो-दो गुरु हों उसे '**विद्युन्माला**' छन्द कहते हैं। यह 'अनुष्टुप्' छन्द का प्रथम भेद है॥

विशेष—'विद्युन्माला' छन्द का उदाहरण भी मूलकारिका ही है। इसी में छन्द का लक्षण भी घटित है। इसके प्रत्येक पाद में दो-दो मगण तथा दो-दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह विद्युन्माला का उदाहरण हुआ। अन्य उदाहरण—

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

वासोवल्ली विद्युन्माला बर्हश्रेणी शाक्रश्चापः।
यस्मिन्नास्तां तापोच्छित्त्यै गोमध्यस्थः कृष्णाम्भोदः॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत अनुष्टुप् के चारों चरणों में समान रूप से दो-दो मगण तथा दो-दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह विद्युन्माला अनुष्टुप् छन्द का उदाहरण है॥ १३॥

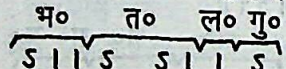

माणवकं भात्तलगाः॥ १४॥

नारायणी—भाद् गणात्तलगास्तगणलघुगुरवो यदि तदा माणवकम्। 'माणवकाक्रीडितकम्' इति पैङ्गले संज्ञा। पूर्ववद्यतिः॥ १४॥

तारा—जिस समवृत्त '**अनुष्टुप्**' छन्द के प्रत्येक पाद में एक भगण, एक तगण, एक लघु व एक गुरु वर्ण हो उसे '**माणवक**' छन्द कहते हैं। यह अनुष्टुप् छन्द का एक सौ तीनवाँ छन्द-भेद है।

विशेष—मूल कारिका में ही छन्द लक्षण घटित हो जाने से इसे ही छन्द का उदाहरण भी जानें। अन्य उदाहरण यह है—

ऽ।। ऽऽ ।।ऽऽ।। ऽ ऽ।। ऽ

चञ्चलचूडं चपलैर्वत्सकुलैः केलिपरम्।
ध्याय सखे स्मेरमुखं नन्दसुतं माणवकम्॥ (छन्दो०)

प्रस्तुत 'अनुष्टुप्' छन्द के प्रत्येक चरण में एक भगण, एक तगण, एक लघु व एक गुरु वर्ण है। अतः यह 'माणवक' नामक 'अनुष्टुप्' छन्द का उदाहरण हुआ॥ १४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

म० न० गु० गु०
ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ

म्नौ गौ हंसरुतमेतत्॥ १५॥

नारायणी–मगण-नगणौ गुरू च द्वावेतत् हंसरुतं नाम॥ १५॥

तारा–जिस समवृत्त '**अनुष्टुप्**' के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक नगण तथा दो गुरु वर्ण हों उसे '**हंसरुतम्**' अनुष्टुप् छन्द कहते हैं। यह अनुष्टुप् छन्द का सन्तावनवाँ भेद है।

विशेष–लक्षण-सूत्र में ही छन्द लक्षण घटित है। इससे इसे ही हंसरुतम् छन्द का उदाहरण भी समझ लें। उदाहरणान्तर अन्यत्र देख लें॥ १५॥

र० ज० गु० ल०
ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।

जौ समानिका गलौ च॥ १६॥

नारायणी–रेफ-जकारौ गुरुलघू च समानिका नाम॥ १६॥

तारा–जिस समवृत्त '**अनुष्टुप्**' छन्द के प्रत्येक चरण में एक रगण एक जगण, एक लघु तथा एक गुरु वर्ण हो वह '**समानिका**' नामक अनुष्टुप् छन्द कहलाता है। यह अनुष्टुप् छन्द का एक सौ एकहत्तरवाँ भेद है।

विशेष–उपर्युक्त लक्षण सूत्र में ही इसका लक्षण घटित हो जाने से यह उदाहरणस्वरूप भी है। अन्य उदाहरण यह है–

ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।

यस्य कृष्णपादपद्ममस्ति हृत्तडागसद्म।
धीः समानिका परेण नोचिताऽत्र मत्सरेण॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में एक-एक रगण, एक-एक जगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह 'समानिका' 'अनुष्टुप्' छन्द का उदाहरण हो गया॥ १६॥

ज० र० ल० गु०
। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

प्रमाणिका जरौ लगौ ॥ १७॥

नारायणी–जगणरेफो लघुगुरू च प्रमाणिका। समान्येव समानिका, प्रमाण्येव प्रमाणिका। स्वार्थे कश्छन्दोऽनुरोधात्कृतः॥ १७॥

तारा–जिस समवृत्त 'अनुष्टुप्' छन्द के चारों चरणों में एक-एक जगण, रगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण हों उसे '**प्रमाणिका**' छन्द कहते हैं। यह प्रमाणिका छन्द अनुष्टुप् छन्द का छियासिवाँ भेद है।

विशेष–यह लक्षण-कारिका ही छन्द लक्षण घटित हो जाने से इस प्रमाणिका छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर यह देखें–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

।ऽ। ऽ।ऽ।ऽ ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

पुनातु भक्तिरच्युता सदाच्युताङ्घ्रिपद्मयोः।
श्रुतिस्मृतिप्रमाणिका भवाम्बुराशितारिका॥ (छन्दो०)

इस उद्धृत उदाहरण के चारों चरणों में एक-एक जगण, रगण तथा एक-एक लघु, गुरु वर्ण हैं। अतः यह पद्य **'प्रमाणिका'** छन्द का उदाहरण हुआ॥ १७॥

ज० त० गु० गु०

।ऽ।ऽऽ ।ऽऽ

वितानमाभ्यां यदन्यत्॥ १८॥

नारायणी—आभ्यां समानीप्रमाणीभ्यामन्यद्यदनुष्टुब्जातीयं छन्दो वितान-संज्ञकम्। आभ्यामन्यदित्युक्तलक्षणनियमाऽभावोपलक्षणम्। केचित्तु-'समानिकायां गुरुलघुक्रमेण समाप्तिः, प्रमाणिकायां लघुगुरुक्रमेण, विताने तु द्वौ गुरू द्वौ लघू, द्वौ लघू द्वौ गुरू वा, द्वौ गुरू एको लघुः पुनरेको गुरुरिति वा, द्वौ लघू एको गुरुरेको लघुरिति वा, इत्येवं वा नियमः' इत्याहुः। तत्र द्वौ गुरू द्वौ लघू इत्यत्रोदाहरणम्-

तृष्णां त्यज धर्मं भज पापे हृदयं मा कुरु।
इष्टा यदि लक्ष्मीस्तदि शिष्टाननिशं संश्रय॥

द्वौ लघू द्वौ गुरू इत्यत्रोदाहरणम्-

हृदयं यस्य विशालं गगनाभोगसमानम्।
लभतेऽसौ मणिचित्रं नृपतिर्मूर्ध्नि वितानम्॥

एवमन्यत्राप्युदाहार्यम्। वयं तु गृह्णीम एतत्, एतेषां वितानतेति न तु नियमः। अत एवोक्तनियमातिक्रमेणैवोदाहरणं मूले। सूत्रमपि 'वितानमन्यत्' (पिं० सू० ५-८) इति सामान्यत एव, न तु नियमं कंचिदाह। वृत्तिकृदपि 'सूत्रकारो वितान-स्याऽनेकप्रकारतां दर्शयति' इति वदन्ननेकतामात्रमाह, न तु नियममिति। तथा-

नाराचिका तरौ लगौ।

अत्र सङ्ख्या २५६॥ १८॥

तारा—समवृत 'अनुष्टुप्' छन्द के 'समानिका' 'प्रमाणिका' छन्दों से भिन्न छन्द को **'वितान'** छन्द के नाम से कहा जाता है। अर्थात् जैसे समानिका छन्द में एक गुरु, एक लघु का क्रम है तथा प्रमाणिका छन्द में एक लघु एक गुरु क्रम से है। इसी प्रकार दो गुरु दो लघु का क्रम अथवा दो लघु दो गुरु का क्रम भी हो सकता है। या इससे भिन्न क्रम भी रखा जा सकता है। इस क्रम के अनुष्टुप् छन्द को **'वितान'** छन्द कहते हैं।

विशेष—उपर्युक्त मूल कारिका भी वितान का उदाहरण है। इसमें एक लघु एक गुरु के बाद एक लघु, दो गुरु, एक लघु, दो गुरु क्रम से हैं। इसी क्रम से चारों चरणों में रहने पर यह 'वितान' छन्द का उदाहरण होगा। इससे भिन्न क्रम 'वितान' छन्द के उदाहरण अधोनिर्दिष्ट देखें-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

दो गुरु दो लघु–

ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ। । ऽ ऽ । ।

तृष्णां त्यज धर्मं भज, पापे हृदयं मा कुरु।

ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ। ।

इष्टा यदि लक्ष्मीस्तव शिष्टाननिशं संश्रयः॥

दो लघु दो गुरु–

। । ऽ ऽ। । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ

हृदयं यस्य विशालं गगनाभोगसमानम्।

। । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ

लभतेऽसौ मणिचित्रं नृपतिर्मूर्ध्नि वितानम्॥ १८॥

र० न० स०

ऽ । ऽ। । । । । ऽ

(६) बृहती॥ रान्नसाविह हलमुखी॥ १६॥

नारायणी–अथ बृहती (६)–रगणानन्तरं नगणसगणौ चेदिह छन्दःशास्त्रे हलमुखी नाम। त्रिभिः षड्भिश्च यतिरिति सम्प्रदायः॥ १६॥

तारा–अब समवृत 'बृहती' नामक नौ अक्षर वाले छन्द का उल्लेख किया जा रहा है। जिस समवृत्त में नौ अक्षर का छन्द हो उसे 'बृहती' छन्द कहते हैं। इस बृहती छन्द के पाँच सौ बारह भेद होते हैं।

जिस नौ अक्षर वाले समवृत्त 'बृहती' छन्द के प्रत्येक पाद में रगण, नगण, सगण क्रम से हों, उसे 'हलमुखी' नामक छन्द कहते हैं। यह छन्द 'बृहती' छन्द का दो सौ एक्कावनवाँ भेद है।

विशेष–मूल कारिका को ही उदाहरणस्वरूप भी समझें। इसी में क्रम से रगण, नगण, सगण हैं। इसी प्रकार चारों चरणों में रहेगा। अन्य उदाहरण ग्रन्थान्तरों में देख लें॥ १६॥

न० न० म०

। । । । । । । ऽ ऽ ऽ

भुजगशिशुभृता नौ मः॥ २०॥

नारायणी–द्वाभ्यां नगणाभ्यामेकेन च मगणेन भुजगशिशुभृता। सप्तभिर्द्वाभ्यां च यतिः। तथा–

भद्रिकेति रनैरियम्॥

वृत्तसङ्ख्या ५१२॥ २०॥

तारा–जिस समवृत्त नौ अक्षर वाले 'बृहती' छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण एक मगण हो उसे 'भुजगशिशुभृता' छन्द कहते हैं। यह 'बृहती' छन्द का चौंसठवाँ भेद है। इसमें सात और दो पर यति होती है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–लक्षण सूत्र में ही छन्द लक्षण घटित हो जाने से इसे ही उदाहरण भी जानें। उदाहरणान्तर उद्धृत किया जा रहा है–

। । । । । । ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

ह्रदतटनिकटक्षौणी भुजगशिशुभृता याऽऽसीत्।
मुररिपुदलिते नागे व्रजजनसुखदा साऽभूत्॥ (छन्दो०)

इस उद्धृत पद्य में भी क्रमशः दो नगण तथा एक मगण चारों चरणों में है। अतः यह 'भुजगशिशुभृता' छन्द का उदाहरण है॥ २०॥

म० स० ज० गु०

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

(१०) पङ्क्तिः॥ म्सौ ज्गौ शुद्धविराडिदं मतम्॥ २१॥

नारायणी–अथ पङ्क्तिः (१०)–मगण-सगणौ जगणगुरू च तच्छुद्धविराण्मतं छन्दोविदाम्। पादान्तेऽत्र यतिः॥ २१॥

तारा–क्रमप्राप्त दस अक्षर वाले '**पङ्क्ति**' छन्द का उल्लेख किया जा रहा है। जिस समवृत्त छन्द के प्रत्येक पाद में दस अक्षर हों उसे '**पङ्क्ति**' छन्द कहते हैं। इस पङ्क्ति छन्द के दस सौ चौबीस भेद होते हैं।

जिस '**पङ्क्ति**' छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण और एक गुरु हो उसे '**शुद्धविराड्**' छन्द कहते हैं। यह पङ्क्ति छन्द का तीन सौ पैंतालीसवाँ छन्द है॥

विशेष–उपर्युक्त मूल कारिका में छन्द लक्षण घटित हो जाने से यही इस 'शुद्धविराड्' छन्द का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः मगण, सगण, जगण तथा एक गुरु वर्ण है। अन्य उदाहरण अन्यत्र देखें॥ २१॥

म० न० य० गु०

ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ

म्नौ य्गौ चेति पणवनामेदम्॥ २२॥

नारायणी–मगणनगणौ जगण-गुरु चेति पणवनामकम्। पञ्चभिः पञ्चभिश्च यतिः॥ २२॥

तारा–जिस समवृत्त दस अक्षर वाले '**पङ्क्ति**' छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, नगण, यगण तथा एक गुरु वर्ण हो उसे '**पणवनाम**' छन्द कहते हैं। यह पङ्क्ति छन्द का एक सौ एक्कीसवाँ भेद है॥

विशेष–मूल लक्षण-सूत्र में ही छन्द-लक्षण घटित है। अतः इसे ही उदाहरणस्वरूप भी समझें। इसमें क्रमशः मगण, नगण, यगण तथा एक गुरु वर्ण है। अतः यह 'पणवनाम' छन्द का उदाहरण है। इसी प्रकार चारों पादों में भी क्रमशः यही क्रम रहेगा॥ अन्य उदाहरण अन्यत्र देख लें॥ २२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

र० ज० र० गु०
ऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽ ऽ

जौ रगौ मयूरसारिणी स्यात्॥ २३॥

नारायणी—रगण-जगण-रगण-गुरुभिर्मयूरसारिणी। पादान्ते यतिः॥ २३॥

तारा—जिस समवृत्त दस अक्षर वाले '**पङ्क्ति**' छन्द के प्रत्येक पाद में रगण, जगण, रगण और एक गुरु वर्ण हो उसे '**मयूरसारिणी**' छन्द कहते हैं। यह पङ्क्ति छन्द का एक सौ एकहत्तरवाँ भेद है।

विशेष—लक्षण-कारिका में छन्द लक्षण समन्वित है। अतः इसे ही उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः रगण, जगण, रगण तथा एक गुरु वर्ण है। अतः यह '**मयूरसारिणी**' छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण अन्यत्र देखें॥ २३॥

म० म० स० गु०
ऽ ।। ऽऽ ऽ। ।ऽऽ

भ्मौ सगयुक्तौ रुक्मवतीयम्॥ २४॥

नारायणी—भ-म-स-गणै-र्गुरुणा च रुक्मवती नाम। चम्पकमालेत्यन्ये। पादान्ते यतिः॥ २४॥

तारा—समवृत्त दस अक्षर वाले जिस '**पङ्क्ति**' छन्द के प्रत्येक पाद में एक भगण, मगण, एक सगण तथा एक गुरु क्रम से हों उसे '**रुक्मवती**' छन्द कहते हैं। यह पङ्क्ति छन्द का एक सौ निन्यानवेवाँ भेद है।

विशेष—उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही है। इसी प्रकार जिसके चारों चरणों में समानता हो उसे छन्द का उदाहरण समझें। इसमें भगण, मगण, सगण तथा एक गुरु वर्ण क्रमशः है॥ अतः यह '**रुक्मवती**' छन्द का उदाहरण हुआ। अन्य उदाहरण निम्न निर्दिष्ट है—

ऽ ।।ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ ऽ। ।ऽ ऽ ऽ।। ऽ ऽ

कायमनोवाक्यैः परिशुद्धैर्यस्य सदाकंसद्विषि भक्तिः।
राज्यपदे हर्म्यालिरुदारा रुक्मवती विघ्नः खलु तस्य॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, मगण, सगण तथा एक गुरु वर्ण है। अतः यह दस अक्षर पाद रुक्मवती छन्द का उदाहरण हुआ॥ २४॥

म० भ० स० गु०
ऽऽ ऽऽ ।।।ऽऽ

मत्ता ज्ञेया मभसगयुक्ता॥ २५॥

नारायणी—म-भ-स-गणगुरुयुता मत्ता। चतुर्भिः षड्भिश्च यतिः॥ २५॥

तारा—जिस दस अक्षर पाद '**पङ्क्ति**' छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण,

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भगण, सगण तथा एक गुरु वर्ण हो उसे 'मत्ता' नामक छन्द कहते हैं। यह छन्द 'पङ्क्ति' छन्द का चौबीसवाँ भेद है॥

विशेष—मूल कारिका में छन्द लक्षण घटित है। अतः इसे ही 'मत्ता' छन्द का उदाहरण भी जानें। इसमें क्रमशः मगण, भगण, सगण तथा एक-एक गुरु वर्ण है। इसी प्रकार चारों पाद रहेंगे। उदाहरणान्तर निम्नलिखित समझें—

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ

पीत्वा मत्ता मधु मधुपाली, कालिन्दीये तटवनकुञ्जे।
उद्दीव्यन्ती व्रजजनरामाः कामासक्ता मधुजिति चक्रे॥ (छन्दो०)

इस उद्धरण के चारों पादों में समान रूप से मगण, भगण, सगण तथा एक गुरु वर्ण क्रमशः है। अतः मत्ता नामक छन्द का यह उदाहरण हुआ॥ २५॥

न० र० ज० गु०
। । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

नरजगैर्भवेन्मनोरमा॥ २६॥

नारायणी—न-र-जगणगुरुभिर्मनोरमा। पादान्ते यतिः॥ २६॥

तारा—जिस समवृत्त दस अक्षर वाले 'पङ्क्ति' छन्द के प्रत्येक पाद में एक नगण, एक रगण, एक जगण तथा एक गुरु वर्ण हो, उसे 'मनोरमा' नामक छन्द कहते हैं। यह मनोरमा छन्द पङ्क्ति छन्द का तीन सौ चवालीसवाँ भेद है।

विशेष—इस लक्षण सूत्र को ही मनोरमा छन्द का उदाहरण भी जानें, क्योंकि छन्द का लक्षण इसी में घटित हो जाता है। इसमें क्रमशः नगण, रगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण है। अतः यही 'मनोरमा' छन्द का उदाहरण भी है। इसी प्रकार चारों पाद रहेंगे॥ उदाहरणान्तर यह है—

। । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

तरणिजातटे विहारिणी व्रजविलासिनीविलासतः।
मुररिपोस्तनुः पुनातु वः सुकृतशालिनां मनोरमा॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत उद्धरण के चारों पादों में क्रमशः नगण, रगण, जगण तथा एक गुरु वर्ण है। अतः इसे मनोरमा छन्द का उदाहरण समझें॥ २६॥

त० ज० ज० गु०
ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

त्जौ जो गुरुणेयमुपस्थिता॥ २७॥

नारायणी—त-ज-जगण-गुरुभिरुपस्थिता नाम। पादान्ते यतिः। द्वाभ्यामष्ट-भिश्चेत्येके॥ अत्र सङ्ख्या १०२४॥ २७॥

तारा—जिस दस अक्षरा पङ्क्ति छन्द के प्रत्येक पाद में एक तगण दो जगण तथा एक गुरु वर्ण हो वह 'उपस्थिता' छन्द कहा जाता है। यह पङ्क्ति छन्द का तीन सौ पैंसठवाँ छन्द है॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–मूलकारिका में ही छन्द-लक्षण समन्वित है; अतः यही कारिका उपस्थिता छन्द का उदाहरण भी मानें। इसमें क्रमशः एक तगण दो जगण तथा एक गुरु वर्ण अन्त में है। अतः यह 'उपस्थिता' छन्द का उदाहरण भी हो गया। ग्रन्थान्तर में अन्य उदाहरण देख लें॥ २७॥

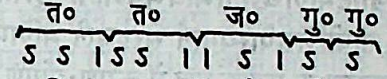

(११) त्रिष्टुप्॥ स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः॥ २८॥

नारायणी–अथ त्रिष्टुप् (११)–त-त-जगणैर्गुरुभ्यां चेन्द्रवज्रा नाम। पादे यतिः॥ २८॥

तारा–अब क्रमप्राप्त 'त्रिष्टुप्' छन्द का उल्लेख है। जिस समवृत्त में एकादश अक्षर हों उसे 'त्रिष्टुप्' छन्द कहते हैं। इस त्रिष्टुप् छन्द के बीस सौ बाइस भेद हैं॥

जिस एकादश अक्षर वाले उष्णिक् समवृत्त के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो तगण, एक जगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे इन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं। यह इन्द्रवज्रा छन्द त्रिष्टुप् छन्द का तीन सौ सत्तावनवाँ भेद है॥

विशेष–लक्षण-सूत्र सभी छन्द-लक्षण से युक्त है। इससे प्रकृत कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः दो तगण, एक जगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण है। अतः यही इन्द्रवज्रा छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण इस प्रकार देखें–

ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।।ऽ। ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ।।ऽ।ऽ ऽ

गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ।
यो गोकुले गोपकुलञ्च सुस्थं चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य में इन्द्रवज्रा छन्द का लक्षण सम्यग् घटित है। इसके प्रत्येक पाद में दो तगण, एक जगण तथा दो गुरु वर्ण है। अतः यह इन्द्रवज्रा छन्द का उदाहरण है॥ २८॥

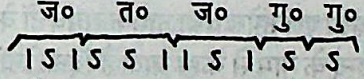

उपेन्द्रवज्रा जतजास्तस्तो गौ॥ २९॥

नारायणी–ज-त-जगणा गुरू चोपेन्द्रवज्रा नाम। पूर्वोक्तैव यतिः॥ २९॥

तारा–जिस एकादस अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण हों, उसे उपेन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं। यह त्रिष्टुप् छन्द का तीन सौ अठावनवाँ भेद है।

विशेष–मूल कारिका को ही उदाहरण भी मान लें. क्योंकि इसी कारिका में छन्द का लक्षण घटित है। इसमें क्रमशः जगण, तगण. जगण तथा अन्त में

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

दो गुरु वर्ण है। अतः यही उपेन्द्रवज्रा छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण इस प्रकार समझें–

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

उपेन्द्रवज्रादिमणिच्छटाभिर्विभूषणानां छुरितं वपुस्ते।
स्मरामि गोपीभिरुपास्यमानं सुरद्रुमूले मणिमण्डपस्य॥ (छन्दो०)

इस उदाहरण के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण तथा दो गुरु वर्ण अन्त में है। अतः यह उपेन्द्रवज्रा छन्द का उदाहरण है॥ २६॥

ज० त० ज० गु० गु० त० त० ज० गु० गु०

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः॥ ३०॥

नारायणी–अव्यवहितोक्तेन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रालक्षणवन्तौ पादौ यत्सम्बन्धिनौ ता उपजातयो नाम। अत्र पूर्वोक्तलक्षणेन पादद्वयेन यथायोगमेकद्विवारावृत्त्या निष्पतिर्विवक्षिता, न तु द्वाभ्यामेव वृत्तपूर्तिः। पादद्वयमात्रघटितस्य वृत्तस्याभावात्। द्विवचनं लक्षणद्वययोगेन लक्षणया नेयम्। ताश्चतुरक्षरप्रस्तारवत्प्रस्तारे सत्याद्यन्तभेदयोः केवलेन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रात्यागे चतुर्दश भवन्ति। यथा–उइइइ १ इउइइ २ उउइइ ३ इइउइ ४ उइउइ ५ इउउइ ६ उउउइ ७ इइइउ ८ उइइउ ९ इउइउ १० उउइउ ११ इइउउ १२ उइउउ १३ इउउउ १४ इति। तथा च वृद्धाः–

एकत्र पादे चरणद्वये वा पादत्रये वान्यतरः स्थितश्चेत्।
तयोरिहान्यत्र तदोहनीयाश्चतुर्दशोक्ता उपजातिभेदाः॥ इति।

तत्राद्यभेदोदाहरणम्–

दैत्याधिपप्राणमुषां नखानामुपेयुषां भूषणतां क्षतेन।
प्रकाशकार्कश्यगुणौ दधानाः स्तनौ तरुण्यः परिवब्रुरेनम्॥ (शि. ३,१४)

मूलश्लोकस्तु पृष्ठभेदोदाहरणम्। एवमन्यभेदेष्वप्युदाहरणानि काव्येषु च विवेचनीयानि॥ ३०॥

तारा–पूर्वोक्त इन्द्रवज्रा एवं उपेन्द्रवज्रा नामक समवृत्तों के मेल से जो छन्द बनते हैं, उन्हें उपजाति छन्द के नाम से कहा जाता है। इन दोनों छन्दों के परस्पर लोम-विलोम से चारों पादों की पृथक्-पृथक् रचना करने पर चौदह प्रकार के उपजाति भेद इन दोनों इन्द्रवज्रा व उपेन्द्रवज्रा के मेल से बन जाते हैं। यथा–

१. उ. इ. इ. इ.	५. उ. इ. उ. इ.	९. उ. इ. इ. उ.
२. इ. उ. इ. इ.	६. इ. उ. उ. इ.	१०. इ. उ. इ. उ.
३. उ. उ. इ. इ.	७. उ. उ. उ. इ.	११. उ. उ. इ. उ.
४. इ. इ. उ. इ.	८. इ. इ. इ. उ.	१२. इ. इ. उ. उ.

१३. उ. इ. उ. उ.
१४. इ. उ. उ. उ.

सं. प्र. द्वि. तृ. च. सं. प्र. द्वि. तृ. च. सं. प्र. द्वि. तृ. च. सं. प्र. द्वि. तृ. च.

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष—प्रस्तुत मूलकारिका का प्रथम पाद **उपेन्द्रवज्रा** तथा द्वितीय पाद **इन्द्रवज्रा** छन्द के लक्षणों से युक्त है। अर्थात् प्रथम पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण तथा अन्त में दो गुरु है—यह **उपेन्द्रवज्रा** हुआ। और द्वितीय पाद में क्रमश तगण, तगण, जगण तथा अन्त में दो गुरु है यह **इन्द्रवज्रा** है। इस प्रकार दोनों पाद भिन्न-भिन्न लक्षणों से युक्त होने के कारण उपेन्द्रवज्रा-इन्द्रवज्रा के मेल से बना यह उपजाति का उदाहरण हो गया। उपजाति के चौदह भेद, जो इन दोनों के मेल से बनते हैं; उनके पृथक्-पृथक् उदाहरण ग्रन्थों में मिलते हैं। इन भेदों का उल्लेख इस प्रकार से है—

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

एकत्र पादे चरणद्वये वा पादत्रये वान्यतरः स्थितश्चेत्।
तयोरिहान्यत्र तदोहनीयाश्चतुर्दशोक्ता उपजातिभेदाः॥ (नारायणी)

इसके चौदहवें भेद का उदाहरण देखें—

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

दैत्याधिपप्राणमुषां नखानामुपेयुषां भूषणतां क्षतेन।
प्रकाशकार्कश्यगुणौ दधानाः स्तनौ तरुण्यः परिवब्रुरेनम्॥

इस उद्धृत पद्य में प्रथम पाद इन्द्रवज्रा का है और शेष तीनों पाद उपेन्द्रवज्रा का है। अतः यह अन्तिम चौदहवें भेद (इ.उ.उ.उ.) का उदाहरण है। अन्य उदाहरण भी इसी प्रकार ग्रन्थान्तरों में उपलब्ध है॥ ३०॥

इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम॥ ३१॥

नारायणी—अन्यास्वपि जगत्यादिजातिष्वित्थं सामान्यसङ्ख्याऽक्षरत्वसमानयतिकत्वादिप्रकारेण मिश्रितास्विदमेवोपजातिर्नाम वृद्धाः स्मरन्ति। ग्रन्थान्तरेभ्यो ज्ञात्वा वदन्तीत्यर्थः। इत्थमित्यनेन विषमवर्णसङ्ख्यानां विषमयतिकानां च जातीनां त्र्यादीनां च मिश्रणे उपजातिर्नाम नास्तीति सूचितम्। स्मरन्तीत्यनेन च कविप्रयोगे दर्शनानुरोधः सूचितः। तत्रेन्द्रवंशावंशस्थाभ्यामुदाहरणम्—

इत्थं रथाश्वेभनिषादिनां प्रगे
गणो नृपाणामथ तोरणाद्बहिः॥
प्रस्थानकालक्षमवेषकल्पना—
कृतक्षणक्षेपमुदैक्षताच्युतम्॥ (शि. १२-१)

एवमन्यत्राऽपि प्रयोगवशादुदाहरणं ज्ञेयम्। सर्वासामुपजातीनामुक्ततया दिशा चतुर्दश भेदा भवन्ति। विषमार्धसमरूपत्वेऽप्युपजातीनां समवृत्तेषूपन्यासः समवृत्तघटिततया प्रासङ्गिकः॥ ३१॥

तारा—कुछ विद्वान् कविप्रयोगदर्शनवशात् समान अक्षर संख्या, समान यति वाले अन्य इन्द्रवंशा वंशस्थ आदि छन्दों के मिश्रण से भी उपजाति छन्द मानते हैं। यथा-'इन्द्रवंशा-वंशस्थ' पादभेद का उदाहरण—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।।ऽ ।ऽ ।ऽ

इत्थं रथाश्वेभनिषादिनां प्रजा-
गणो नृपाणामथ तोरणाद् बहिः।
प्रस्थानकालक्षमवेषकल्पना-
कृतक्षणक्षेपमुदैक्षताच्युतम्॥ (शि० १२-१)

वंशस्थ-उपेन्द्रवज्रा मिश्रित का उदाहरण-

।ऽ । ऽ ऽ ।।ऽ ।ऽ ।ऽ

नमोऽस्तु वाचस्पतये सचक्रिणे
स्वयंभुवे चापि हुताशनाय।
अनेन चोक्तं यदिदं ममाग्रतो
वनौकसां तच्च तथाऽस्तु नान्यथा॥

इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-वंशस्थ मिश्रित का उदाहरण-

ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।।ऽ ।ऽ ।ऽ

तावत्प्रविष्टास्त्वसुरोदरान्तरे,
परं न गीर्णाः शिशवः सवत्साः।
प्रतीक्षमाणेन बकारिवेशनं
हृतश्च कान्ताभरणेन रक्षसा॥

इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-इन्द्रवंशा-वंशस्थ मिश्रित का उदाहरण-

ऽ ऽ । ऽ ऽ ।।ऽ ।ऽ ऽ

विद्याप्रबोधादयजन्मभूमि
र्वाराणसी मुक्तिपुरी निरत्यया।
अतः कुलोच्छेदविधिं विधित्सुभि-
र्निवस्तुमत्रेच्छति नित्यमेव सः॥

इसी प्रकार अन्य अनेक भेदों की कल्पना स्वयं कर सकते हैं। ग्रन्थों में अनेकशः प्रयोग देखे भी जा सकते हैं॥ ३१॥

न० ज० ज० ल०गु०

।।। ।ऽ।ऽ ।।ऽ

न ज ज ल गैर्गदिता सुमुखी॥ ३२॥

नारायणी-न-ज-जैर्गणैर्लघुगुरुभ्यां च सुमुखी नाम। पञ्चभिः षड्भिश्च यतिः॥ ३२॥

तारा-जिस समवृत्त एकादश अक्षर वाले त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में एक नगण (।।।) दो जगण (।ऽ।) तथा एक लघु एक गुरु हो उसे 'सुमुखी' नामक छन्द कहते हैं। यह सुमुखी छन्द त्रिष्टुप् छन्द का आठ सौ अस्सीवाँ छन्द है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष—कारिका भाग ही छन्द लक्षण के एक पाद का उदाहरण है। इसी प्रकार चारों पादों के एक समान रहने पर छन्द का उदाहरण समझें। अर्थात् प्रस्तुत भाग में एक नगण, दो जगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण है। अतः यह सुमुखी छन्द का उदाहरण हुआ। उदाहरणान्तर देखें—

।।।ऽ।। ऽ।ऽ

तरणिसुतातट-कुञ्जगृहे,
वदनविधुस्मितदीधितिभिः।
तिमिरमुदस्य वृतं सुमुखी
हरिमवलोक्य जहास चिरम्॥ (छन्दो०)

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में एक-एक नगण (।।।) दो-दो जगण (।ऽ।) तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण है। अतः यह सुमुखी छन्द का उदाहरण है॥ ३२॥

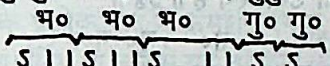

दोधकवृत्तमिदं भभभाद्गौ॥ ३३॥

नारायणी—भगणत्रयाद् गुरुद्वयं चेद्दोधकं नाम। भभभादिति समाहारद्वन्द्वैकवद्भावः। 'दोधकनामनि भत्रयतो गौ' इति वा पाठः। पादान्ते यतिः॥ ३३॥

तारा—जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त के प्रत्येक पाद में तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे 'दोधकवृत्त' कहते हैं। यह दोधकवृत्त त्रिष्टुप् छन्द का चार सौ उनतालीसवाँ भेद है।

विशेष—उदाहरण के लिए कारिका भाग ही है। इसमें तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। इसी प्रकार चारों पाद रहेंगे। अन्य उदाहरण देखें—

ऽ। ।ऽ। ।ऽ ।।ऽ ऽ

देव! सदोध! कदम्बतलस्थ!,
श्रीधर! तावकनामपदं मे।
कण्ठतलेऽसुविनिर्गमकाले,
स्वल्पमणि क्षणमेष्यति योगम्॥ (छन्दो०)

इस उद्धरण के चारों चरणों में तीन-तीन भगण तथा दो-दो गुरु वर्ण है। अतः यह दोधक वृत्त का उदाहरण है।

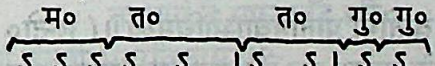

शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोब्धिलोकैः॥ ३४॥

नारायणी—म-त-तै-र्गुरुभ्यां च शालिनी। अब्धिभिश्चतुर्भिर्लोकैः सप्तभिश्च यतिरिति शेषः। एवमुत्तरत्रापि॥ ३४॥

तारा—जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में एक मगण (ऽऽऽ) दो तगण (ऽऽ।) दो गुरु (ऽऽ) वर्ण हों उसे शालिनी छन्द कहते हैं। यह शालिनी छन्द त्रिष्टुप् छन्द का दो सौ उननव्वेवाँ भेद है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष—मूल कारिका ही उदाहरण भी समझें। इसमें एक मगण, दो तगण, तथा दो गुरु वर्ण हैं। इसी क्रम से चारों चरण रहने पर दोधकवृत्त का उदाहरण होगा। उदाहरणान्तर निम्ननिर्दिष्ट पद्य है—

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ।ऽ ऽ

अंहो हन्ति ज्ञानवृद्धिं विधत्ते
धर्मं दत्ते काममर्थं च सूते।
मुक्तिं दत्ते सर्वदोपास्यमाना
पुंसां श्रद्धाशालिनी विष्णुभक्तिः॥ (छन्दो०)

इस उद्धरण के प्रत्येक पाद में एक मगण, दो तगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। इससे यह शालिनी छन्द का उदाहरण है॥ ३४॥

म० भ० त० गु० गु०
ऽ ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ ।ऽ ऽ

वातोर्मीयं गदिता म्भौ तगौ गः॥ ३५॥

नारायणी—म-भ-त-गु-गुरुभिर्वातोर्मी। इयमिति शालिन्युक्तयतिमतीत्यर्थः॥ ३५॥

तारा—जिस एकादशाक्षरक समवृत्त त्रिष्टुप् के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक मगण, एक भगण, एक तगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे **वातोर्मी** छन्द कहते हैं। यह वातोर्मी छन्द त्रिष्टुप् का तीन सौ पाँचवाँ भेद है।

विशेष—मूल कारिका में ही छन्दोलक्षण घटित हो जाने से इसे ही उदाहरणस्वरूप भी जानें। इसमें एक मगण, एक भगण, एक तगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह वातोर्मी छन्द का उदाहरण भी हुआ। अन्य उदाहरण देंखे—

ऽ ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ।ऽ ऽ

ध्याता मूर्तिः क्षणमप्यच्युतस्य
श्रेणी नाम्ना गदिता हेलयापि।
संसारेऽस्मिन् दुरितं हन्ति पुंसां
वातोर्मी पोतमिवाम्भोधिमध्ये॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक मगण, एक भगण, एक तगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह वातोर्मी छन्द का उदाहरण है॥ ३५॥

भ० त० न० गु० गु०
ऽ।।ऽ ऽ ।।।।ऽ ऽ

पञ्चरसैः श्रीर्भतनगगैः स्यात्॥ ३६॥

नारायणी—भ-त-न-ग-गुरुभिः पञ्चभिः षड्भिश्च यतौ श्रीर्नाम॥ ३६॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, तगण, नगण तथा दो गुरु वर्ण हों और इसी क्रम से छन्द के चारों चरण हों तो उसे 'श्री' नामक छन्द कहा जाता है। यह श्री नामक छन्द त्रिष्टुप् छन्द का छः सौ तिरासिवाँ भेद है॥ ३६॥

विशेष–उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही जानें। इसमें क्रमशः भगण, तगण, नगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। अतः यह ही श्री छन्द का उदाहरण भी हो गया। उदाहरणान्तर निम्न पद्य देखें–

ऽ।।ऽऽ ।।।।ऽऽ ।।।ऽऽ।।।।ऽऽ

वल्लववेशा मुररिपुमूर्ति-र्गोपमृगाक्षीकृतरतिपूर्तिः।
वाञ्छितसिद्धचै प्रणतिपरस्य स्यादनुकूला जगति न कस्य॥

इस उद्धरण के प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, तगण, नगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह श्री छन्द का उदाहरण हो गया॥ ३६॥

म० भ० न० ल० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।।।।ऽ

म्भौ न्लौ गः स्याद् भ्रमरविलसिताम्॥ ३७॥

नारायणी–म-भ-न-लघुगुरुभिर्भ्रमरविलसितम्। चतुर्भिः सप्तभिश्च यतिः॥ ३७॥

तारा–जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, भगण, नगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण हो, वह भ्रमरविलसित वृत्त कहा जाता है। यह भ्रमरविलसित छन्द त्रिष्टुप् छन्द का भेद है।

विशेष–भ्रमरविलसित छन्द का उदाहरण मूल कारिका ही समझें, इसमें क्रमशः मगण, भगण, नगण तथा एक लघु व एक गुरु है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह भ्रमरविलसित छन्द का उदाहरण भी हो गया। चार चरण युक्त उदाहरणान्तर निम्न निर्दिष्ट देखें–

ऽऽ ऽऽ।।।। । ।ऽ

मुग्धे! मानं परिहर न चिरात्
तारुण्यं ते सफलयतु हरिः।
फुल्ला वल्ली भ्रमरविलसिताऽ-
भावे शोभां कलयति किमु ताम्॥ (छन्दो०)

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, भगण, नगण तथा एक लघु व एक गुरु वर्ण हैं। अतः यह भ्रमरविलसित छन्द का उदाहरण है।

र० न० र० ल० गु०

ऽ।ऽ।। ।ऽ।ऽ ।ऽ

रान्नराविह रथोद्धता लगौ॥ ३८॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–र-न-र-ल-गैरिह च्छन्दःशास्त्रे रथोद्धता। पादे यतिः॥ ३८॥

तारा–जिस समवृत्त एकादश अक्षर वाले त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः रगण, नगण, रगण तथा एक लघु व एक गुरु वर्ण हो उसे '**रथोद्धता**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूलकारिका ही इस छन्द का उदाहरणस्वरूप भी है। क्योंकि इसमें क्रमशः रगण, नगण, रगण तथा एक लघु व एक गुरु वर्ण निबद्ध है। अतः रथोद्धता छन्द का लक्षण घटित हो जाने के कारण इसे ही उदाहरण भी समझें। अन्य उदाहरण ग्रन्थान्तर से देखें–

ऽ।ऽ ।।।ऽ।ऽ।ऽ

राधिका दधिविलोडनास्थिता
कृष्णवेणुनिनदै रथोद्धता।
यामुनं तटनिकुञ्जमञ्जसा
सा जगाम सलिलाहृतिच्छलात्॥ (छन्दो०)

इस उद्धृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः रगण, नगण, रगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण है। अतः रथोद्धता छन्द का लक्षण घटित हो जाने से यह छन्द का उदाहरण है॥ ३८॥

र० न० भ० गु०गु०
ऽ।ऽ। ।।ऽ ।।ऽऽ

स्वागतेति रनभाद् गुरुयुग्मम्॥ ३९॥

नारायणी–र-न-भ-गणेभ्यः परं गुरुयुग्मं यदि तदेत्येवं स्वागता। न-न-भादित्येकवद्भावः। पूर्ववद्यतिः॥ ३९॥

तारा–जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा दो गुरु वर्ण हों उसे '**स्वागता**' छन्द कहते हैं।

विशेष–उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही समझें। क्योंकि इसमें क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा दो गुरु वर्ण निबद्ध है। अतः लक्षण घटित हो जाने के कारण यह स्वागता छन्द का उदाहरण हुआ। उदाहरणान्तर चार चरण युक्त देखें–

ऽ।ऽ।। ।ऽ ।।ऽऽ

यस्य चेतसि सदा मुरवैरी
वल्लवीजनविलासविलोलः।
तस्य नूनममरालयभाजः
स्वागतादरकरः सुरराजः॥ (छन्दो०)

इस उदाहरण के चारों चरणों में क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा दो गुरु वर्ण है। अतः स्वागता का लक्षण घटित हो जाने से यह स्वागतार छन्द का उदाहरण हो गया॥ ३९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

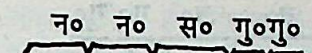

ननसगगुरुरचिता वृत्ता॥ ४०॥

नारायणी–न-न-स-ग-गुरुकृता वृत्ता नाम। चतुर्भिः सप्तभिश्च यतिः॥ ४०॥

तारा–जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण एक सगण और दो गुरु वर्ण हो उसे '**वृत्ता**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका में छन्द लक्षण घटित हो जाने से इसे वृत्ता छन्द का उदाहरण भी जानें। उदाहरणान्तर अन्यत्र देखें॥ ४०॥

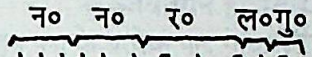

ननरलगुरुभिश्च भद्रिका॥ ४१॥

नारायणी–न-न-र-ल-गैर्भद्रिका। पादे यतिः॥ ४१॥

तारा–जिस एकादश अक्षर वाले समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में दो नगण, एक रगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण क्रमशः हों, उसे '**भद्रिका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका लक्षणसूत्र में लक्षण घटित हो जाने के कारण इस कारिका को ही भद्रिका छन्द का उदाहरण भी समझें। इसमें दो नगण, एक रगण, तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण क्रमशः है। अतः यही उदाहरण भी हो गया॥ ४१॥

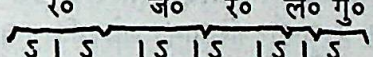

श्येनिका रजौ रलौ गुरुर्यदा॥ ४२॥

नारायणी–स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ४२॥

तारा–जिस एकादश अक्षरक समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः रगण, जगण, रगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण हों उसे '**श्येनिका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–लक्षणकारिका ही छन्दलक्षण से युक्त है। अतः यह मूल कारिका इस श्येनिका छन्द का उदाहरण भी समझें। इसी प्रकार चारों चरण होने पर श्येनिका छन्द बन जायगा। उदाहरणान्तर निम्न पद्य में देखें–

यस्य कीर्तिरिन्दुकुन्दचन्दन
श्येन्यशेषलोकपावनी सदा।
जाह्नवीव विश्ववन्द्यविभ्रमा
तं भजामि भावगम्यमच्युतम्॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों पादों में क्रमशः रगण, जगण, रगण तथा एक लघु एक गुरु वर्ण है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह श्येनिका छन्द का उदाहरण बन गया॥ ४२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

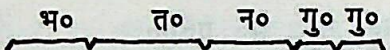

मौक्तिकमाला यदि भतनाद्गौ॥ ४३॥

नारायणी–भ-त-नादित्येकवद्भावः। पञ्चसु षट्सु च यतिः॥ ४३॥

तारा–जिस एकादशाक्षर समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, तगण, नगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे '**मौक्तिकमाला**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका ही इस मौक्तिकमाला छन्द का उदाहरण भी है। इसी कारिका में छन्द का लक्षण भी घटित हो जाता है। उदाहरणान्तर देखें–

ऽ । । ऽ ऽ । । । । ऽऽ

वल्लभवेशा मुररिपुमूर्ति-
गोपिमृगाक्षीकृतरतिपूर्तिः।
वाञ्छितसिद्धचै प्रणतिपरस्य
स्यादनुकूला जगति न कस्य॥ (छन्दो०)

इस पद्य में मौक्तिकमाला छन्द का लक्षण अक्षरशः घटित हो जाने के कारण यह मौक्तिकमाला छन्द का उदाहरण हुआ। इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण, तगण, नगण तथा दो गुरु वर्ण है॥ ४३॥

उपस्थितमिदं ज्सौ ताद् गकारौ॥ ४४॥

नारायणी–ज-स-त-ग-गैरुपस्थितम्। पादे यतिः॥ तथा–

उपचित्रमिदं ससमा लगा।
कुपुरुषजनिता ननौः गौगः॥ अनवसिता न्यौ भ्गौ गु षडन्ते॥

अत्र वृत्तानि २०४८ ॥ ४४॥

तारा–जिस एकदशाक्षर समवृत्त त्रिष्टुप् छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, सगण, तगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे '**उपस्थित**' छन्द के नाम से कहा जाता है। उदाहरणान्तर अन्यत्र देख लें॥ ४४॥

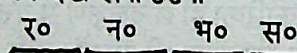

(१२) जगती। चन्द्रवर्त्म गदितन्तु रनभसैः॥ ४५॥

नारायणी–अथ जगती (१२)-र-न-भ-सैर्गणैश्चन्द्रवर्त्म। चतुर्भिरष्ट-भिश्च यतिः॥ ४५॥

तारा–द्वादशाक्षर वाले समवृत्त को '**जगती**' छन्द कहा जाता है। जिस जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा सगण हो उसे '**चन्द्रवर्त्म**' नामक छन्द कहते हैं। इसमें चतुर्थ तथा अष्टम अक्षर पर यति होती है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–लक्षणकारिका ही छन्दलक्षण संयुक्त है। अतः मूल लक्षण-कारिका को ही इस चन्द्रवर्त्म छन्द का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा सगण है। इस प्रकार लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी हो गया। उदाहरणान्तर निर्दिष्ट पद्य में देखें–

ऽ।ऽ।।।ऽ।।।।ऽ

चन्द्रवर्त्म पिहितं घनतिमिरैः
राजवर्त्म रहितं जनगमनैः।
इष्टवर्त्म तदलङ्कुरु सरसे,
कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा सगण है। अतः लक्षण घटित हो जाने के कारण यह चन्द्रवर्त्म का उदाहरण है॥ ४५॥

ज० त० ज० र०
।ऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ॥ ४६॥

नारायणी–ज-त-ज-रैर्वंशस्थम्। पादे यदिः॥ ४६॥

तारा–जिस समवृत्त द्वादशाक्षर जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण और एक रगण हो उसे 'वंशस्थ' छन्द के नाम से कहते हैं। इसमें पादान्त में यति-विधान है।

विशेष–लक्षणकारिका में छन्द-लक्षण घटित होने के कारण इस मूल कारिका को ही इस 'वंशस्थ' छन्द का उदाहरण भी मानें। इसमें क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण तथा एक रगण है। चारों चरणयुक्त उदाहरण निम्न पद्य में देखें–

।ऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

विलासवंशस्थविलं मुखानिलैः
प्रपूर्य यः पञ्चमरागमुद्गिरन्।
व्रजाङ्गनानामपि गानशालिनां
जहार मानं स हरिः पुनातु नः॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण तथा एक रगण है। अतः पूर्ण लक्षण अक्षरशः घटित हो जाने से यह पद्य वंशस्थ छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ४६॥

त० त० ज० र०
ऽऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

स्यादिन्द्रवंशा ततजै रसंयुतैः॥ ४७॥

नारायणी–त-त-जै-रसंयतैः रगणसहितैरिन्द्रवंशा। पादे यतिः॥ ४७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—जिस द्वादशाक्षर समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो तगण, एक जगण तथा एक रगण हो उसे '**इन्द्रवंशा**' छन्द कहते हैं। इसमें पादान्त में यति-विधान है।

विशेष—मूल कारिका को ही इस **इन्द्रवंशा** छन्द का उदाहरण भी जानें। इसमें क्रमशः दो तगण, एक जगण तथा एक रगण निबद्ध है। अतः छन्द लक्षण मूल कारिका में ही घटित हो जाने से यही उदाहरण भी समझें। चारों चरणयुक्त पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य में समझें—

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

दैत्येन्द्रवंशाग्निरुदीर्णदीधितिः
पीताम्बरोऽसौ जगतां तमोऽपहः।
यस्मिन्नमज्जुः शलभा इव स्वयं
ते कंसचाणूरमुखा मखद्विषः॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः दो तगण, एक जगण तथा एक रगण है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य **इन्द्रवंशा** छन्द का उदाहरण बन गया॥ ४७॥

स० स० स० स०
।। ऽ-। । ऽ-। । ऽ- । । ऽ

इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्॥ ४८॥

नारायणी—अम्बुधिसैश्चतुर्भिः सगणैः तोटकम्। पादे यतिः॥ ४८॥

तारा—जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द से प्रत्येक पाद में क्रमशः चारों सगण ही निबद्ध हों, उसे '**तोटक**' नामक छन्द कहा जाता है।

विशेष—उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही है। यह कारिका ही चार सगणों में निबद्ध है। अतः यही उदाहरण भी बन गयी। चार चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निर्दिष्ट पद्य में देखें—

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ

यमुनातटमच्युतकेलिकला लसदङ्घ्रिसरोरुहसङ्गरुचिम्।
मुदितोऽट कलेरपनेतुमघं यदि चेच्छसि जन्म निजं सफलम्॥ (छन्दो०)

इस उदाहरण के चारों चरणों में चार सगण हैं। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ४८॥

न० भ० भ० र०
। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ॥ ४९॥

नारायणी—न-भ-भ-रैर्द्रुतविलम्बितमाहाचार्यः। पूर्ववद्यतिः॥ ४९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण एक, भगण दो, तथा रगण एक हो, उसे '**द्रुतविलम्बित**' छन्द कहते हैं। पादान्त में यति-विधान है।

विशेष–छन्दलक्षण संयुक्त कारिका होने से मूल कारिका ही प्रस्तुत छन्द द्रुतविलम्बित का उदाहरण भी है। इसमें क्रमशः एक नगण, दो भगण तथा एक रगण है। लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी हो गया। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न निर्दिष्ट पद्य में देखें–

। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

तरणिजापुलिने नववल्लवी-
परिषदा सह केलिकुतूहलात्।
द्रुतविलम्बितचारु विहारिणं
हरिमहं हृदयेन सदा वहे॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक नगण, दो भगण तथा एक रगण है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य द्रुतविलम्बित छन्द का उदाहरण हुआ॥ ४९॥

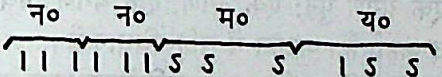

मुनिशरविरतिर्नौ म्यौ पुटोऽयम्॥ ५०॥

नारायणी–मुनिभिः सप्तभिः शरैः पञ्चभिश्च विरतिर्यत्र॥ ५०॥

तारा–जिस समवृत्त द्वादश अक्षर वाले जगती छन्द के चारों पादों में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा यगण हो उसे '**पुट**' छन्द के नाम से कहा जाता है॥ ५०॥

विशेष–लक्षण सूत्र ही प्रस्तुत छन्द पुट का उदाहरण भी समझें। इसी में छन्द-लक्षण घटित है। इसमें क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा एक यगण है। अतः यह पुट छन्द का उदाहरण भी हो गया। चारों पादों युक्त पूर्ण उदाहरण अन्यत्र देखें॥ ५०॥

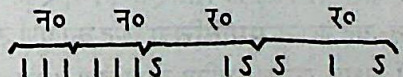

प्रमुदितवदना भवेन्नौ च रौ॥ ५१॥

नारायणी–स्पष्टम्॥ ५१॥

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के चारों चरणों में क्रमशः दो नगण तथा दो रगण हों उसे '**प्रमुदितवदना**' छन्द कहते हैं। पादान्त में यति-विधान है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–मूल कारिका ही छन्द का उदाहरण भी है। इसी में क्रमशः दो नगण तथा दो रगण निबद्ध है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी हो गया। उदाहरणान्तर चारों चरणों युक्त निम्ननिर्दिष्ट समझें–

। । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

बलिदमनविधौ बभौ सङ्गता
पदजलरुहि यस्य मन्दाकिनी।
सुरनिहितसिताम्बुजस्रङ्निभा
हरतु जगदद्यं स पीताम्बरः॥ (छन्दो०)

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः दो नगण तथा दो रगण है। अतः यह लक्षण घटित हो जाने से पूर्ण उदाहरण प्रमुदितवदना छन्द का हुआ॥ ५१॥

न० य० न० य०

। । । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ

नयसहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा॥ ५२॥

नारायणी–स्पष्टम्। द्वयोरपि पादे यतिः॥ ५२॥

तारा–द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जिस जगती छन्द के चारों चरणों में क्रमशः एक नगण, एक यगण पुनः एक नगण, एक यगण निबद्ध हो उसे **'कुसुमविचित्रा'** छन्द कहते हैं। पादान्त में यति-विधान है।

विशेष–प्रस्तुत मूल कारिका ही इस **कुसुमविचित्रा** छन्द का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः एक नगण, एक यगण पुनः एक नगण, एक यगण निबद्ध है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यही उदाहरण भी हो गया। उदाहरणान्तर चारों चरणों युक्त निम्ननिर्दिष्ट देखें–

। । । । ऽऽ । । । । ऽ ऽ

विपिनविहारे कुसुमविचित्रा
कुतुकितगोपीमहितचरित्रा।
मुररिपुमूर्तिर्मुखरितवंशा
चिरमवताद्वस्तरलवतंसा॥

उद्धृत इस पद्य के चारों चरणों में क्रमशः एक नगण, एक यगण पुनः एक नगण एक यगण है। अतः यह पद्य **कुसुमविचित्रा** छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ। क्योंकि चारों चरणों में लक्षण क्रमशः घटित होता है॥ ५२॥

ज० स० ज० स०

। ऽ । । । ऽ । ऽ । । । ऽ

रसैर्जसजसा जलोद्धतगतिः॥ ५३॥

नारायणी–जसाश्च जसाश्चेत्येकशेषे षड्भिश्च यतिः॥ ५३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस द्वादशाक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के चारों चरणों में क्रमशः ज़गण, सगण, जगण, सगण निबद्ध हों वह '**जलोद्धतगति**' नामक छन्द कहा जाता है। इसमें छः-छः अक्षरों के बाद यति-विधान है।

विशेष–प्रस्तुत लक्षणकारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः जगण, सगण, जगण, सगण निबद्ध हैं। अतः लक्षण घटित होने से यह **जलोद्धतगति** छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों युक्त सम्पूर्ण उदाहरण निम्ननिर्दिष्ट है–

।ऽ।।।ऽ ।ऽ।।।ऽ

यदीयहलतो विलोक्य विपदं
कलिन्दतनया जलोद्धतगतिः।
विलासविपिनं विवेश सहसा
करोतु कुशलं हली स जगताम्॥

इस उदाहृत पद्य के सभी पादों में क्रमशः जगण, सगण, जगण, सगण निबद्ध हैं। तथा प्रति छः अक्षर के बाद यति है। अतः पूर्ण लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य **जलोद्धतगति** छन्द का पूर्ण उदाहरण बना॥ ५३॥

ज० ज० ज० ज०
।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।

चतुर्जगणं वद मौक्तिकदाम॥ ५४॥

नारायणी–स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ५४॥

तारा–जिस द्वादशाक्षर समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक पाद में चार जगण ही निबद्ध हों उसे '**मौक्तिकदाम**' छन्द कहते हैं। इस छन्द के पादान्त में अर्थात् द्वादश अक्षर के पश्चात् यति रहती है।

विशेष–लक्षणयुक्त मूल लक्षणकारिका ही इस छन्द का उदाहरण भी समझें। क्योंकि मूल कारिका में ही चारों जगण निबद्ध हैं। अतः लक्षण घटित हो जाने के कारण यही इस छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर इस प्रकार समझें–

।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।

मया तव किञ्चिदकारि कदापि
विलासिनि! वाक्यमनुस्मरतापि।
तथापि मनस्तव नाश्वसनाय-
व्रजामि कुतो भवतीमपहाय॥

इस पद्य के चारों चरणों में चार-चार जगण प्रस्तुत हैं। अतः चारों चरणों में लक्षण घटित हो जाने के कारण यह पद्य **मौक्तिकदाम** छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ। यति भी पादान्त में है॥ ५४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

य० य० य० य०
।ऽऽ।ऽऽ ।ऽऽ।ऽऽ

भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः॥ ५५॥

नारायणी–स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ५५॥

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक पाद में चारों यगण ही निबद्ध हों, उसे '**भुजङ्गप्रयात**' छन्द कहते हैं। इसके भी पादान्त में यति-विधान है।

विशेष–उदाहरणस्वरूप मूल लक्षणकारिका ही प्रस्तुत है। इसी में चारों यगण क्रमशः हैं। अतः लक्षण पूर्ण घटित होने से छन्द का उदाहरण भी यही समझें। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्ननिर्दिष्ट है–

।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

सदारात्मजज्ञातिभृत्यो विहाय
स्वमेतं हृदं जीवनं लिप्समानः।
मया क्लेशितः कालियेत्थं कुरु त्वं
भुजङ्गप्रयातं द्रुतं सागराय॥

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में चार-चार यगण निबद्ध हैं। और पादान्त में यति भी है। अतः पूर्ण लक्षण चारों चरणों में घटित हो जाने के कारण यह पद्य भुजङ्गप्रयात छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ५५॥

र० र० र० र०
ऽ।ऽऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

रैश्चतुर्भिर्युता स्त्रग्विणी सम्मता॥ ५६॥

नारायणी–स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ५६॥

तारा–यदि द्वादश अक्षर वाले समवृत्तक जगती छन्द के चारों चरणों में क्रमशः चार-चार रगण निबद्ध रहें तो उसे '**स्त्रग्विणी**' छन्द कहा जाता है। इसमें भी पादान्त में ही यति का विधान है।

विशेष–मूल लक्षण कारिका ही इस स्त्रग्विणी छन्द का उदाहरण भी है। क्योंकि इसी लक्षण में चार रगण क्रमशः निबद्ध हैं। अन्त में यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यही कारिका इस छन्द का उदाहरण भी स्वयं है। उदाहरणान्तर अन्य ग्रन्थ से इस प्रकार है–

ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ। ऽ ऽ।ऽ

इन्द्रनीलोत्पलेनेव या निर्मिता
शातकुम्भद्रवाऽलङ्कृता शोभते।
नव्यमेघच्छविः पीतवासा हरेः
मूर्तिरास्तां जयायोरसि स्त्रग्विणी॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

छन्दोमञ्जरी से उदाहृत यह पद्य पूर्णतः स्रग्विणी छन्द का उदाहरण है। इसके प्रत्येक पाद में क्रमशः चार-चार रगण हैं तथा पादान्त में सभी में यति है। अतः यह पूर्णरूपेण चारों चरणयुक्त स्रग्विणी छन्द का उदाहरण हुआ॥ ५६॥

न० भ० ज० र०

।।। ।ऽ ।।।ऽ ।ऽ।ऽ

भुवि भवेन्नभजरैः प्रियंवदा॥ ५७॥

नारायणी—स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ५७॥

तारा—जिस द्वादशाक्षरक समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, जगण, रगण हों तथा पादान्त में यति हो उसे 'प्रियंवदा' छन्द कहते हैं।

विशेष—लक्षण घटित मूल लक्षणकारिका ही इस प्रियंवदा छन्द का उदाहरण भी समझें। क्योंकि इस कारिका में क्रमशः नगण, भगण, जगण, रगण निबद्ध हैं तथा पादान्त में यति भी है। अतः कारिका में ही लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका इस प्रियंवदा छन्द का उदाहरण भी है। अन्य ग्रन्थों से उदाहरणान्तर इस प्रकार समझें-

।।।ऽ ।।।ऽ।ऽ।ऽ

हसिततामरसनेत्रसारसा
रजनिवल्लभमुखालिकुन्तला।
स्मितवती पतिहितैकमानसा
सुकृतिनो हि दयिता प्रियंवदा॥

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः नगण, भगण, जगण, रगण प्रयुक्त हैं। चारों पादों के अन्त में यति भी है। अतः पूर्णतः चारों चरणों में लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य प्रियंवदा छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ५७॥

त० य० त० य०

ऽ ऽ ।।ऽऽ ऽऽ ।।ऽऽ

त्यौ त्यौ मणिमाला च्छिन्ना गुहवक्त्रैः॥ ५८॥

नारायणी—त-य-त-यैर्मणिमाला। गुहस्य स्कन्दस्य वक्त्रैः षड्भिः षड्भिश्च च्छिन्ना यतिमतीत्यर्थः॥ ५८॥

तारा—जिस समवृत्त के द्वादश अक्षरवाले जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः तगण, यगण, पुनः तगण, यगण निबद्ध हो और छः-छः अक्षरों के बाद यति हो तो वह मणिमाला छन्द के नाम से जाना जाता है।

विशेष—उक्त मूल लक्षणकारिका में लक्षण घटित होने से इसका उदाहरण भी मूलकारिका को ही जानें। इसमें क्रमशः तगण, यगण, तगण, यगण है। तथा छः-छः अक्षरों पर यति भी है। अन्य चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न है-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ। । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ
प्रह्लामरमौलौ रत्नोपलक्लृप्ते
जातप्रतिबिम्बा, शोणा मणिमाला।
गोविन्दपदाब्जे राजी नखराणा-
मास्तां मम चित्ते ध्वान्तं शमयन्ती॥

इस उदाहरण पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, यगण, तगण, यगण निबद्ध हैं। तथा प्रत्येक छः अक्षर पर यति है। अतः यह चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण है॥ ५८॥

त० भ० ज० र०
ऽ ऽ। ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ
धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ॥ ५९॥

नारायणी—स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ५९॥

तारा—जिस समवृत्त के द्वादशाक्षरक जगती छन्द के सभी पादों में क्रमशः तगण, भगण, जगण, रगण प्रयुक्त हों तथा पादान्त अर्थात् द्वादश अक्षर के अनन्तर सभी पादों में यति हो, उसे विद्वज्जन 'ललिता' छन्द के नाम से कहते हैं।

विशेष—लक्षणघटित मूल कारिका ही इस छन्द का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः तगण, भगण, जगण, रगण है और पादान्त में यति भी है। इसी से यही उदाहरण भी हो गया। चारों पादों सहित पूर्ण उदाहरण निम्न है-

ऽ ऽ । ऽ ।।। ऽ। ऽ। ऽ
सास्ते पुरत्रयमतीत्य सुन्दरी
गीता ततस्त्रिपुरसुन्दरी इति।
लोकानतीत्य ललिते यतो हि सा
भक्त्यैरभाणि ललिताऽभिधानतः॥

इस उदाहत पद्य के चारों पादों में क्रम से तगण, भगण, जगण, रगण हैं। तथा पादान्त द्वादश अक्षर पर सभी पादों में यति भी प्रयुक्त है। अतः पूर्ण लक्षण घटित हो जाने के कारण यह पद्य चारों पादों युक्त पूर्ण उदाहरण है॥ ५९॥

स० ज० स०. स०
। । ऽ। ऽ । । । ऽ। । ऽ
प्रमिताक्षरा सजससैरुदिता॥ ६०॥

नारायणी—स्पष्टम्। पादे यतिः॥ ६०॥

तारा—जिस द्वादशाक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण. जगण. सगण. सगण निबद्ध हों और पादान्त द्वादश अक्षर पर यति हो उसे 'प्रमिताक्षरा' छन्द कहते हैं।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–मूल में लक्षणकारिका ही लक्षणयुक्त है। अतः इसी को इस छन्द का उदाहरण भी समझ लें। इसमें क्रम से सगण जगण, सगण, सगण है। तथा पादान्त में द्वादश अक्षर पर यति भी है। इससे यही उदाहरण भी हो गया। चारों पादों से पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य है–

। । ऽ । ऽ ।।। ऽ । । ऽ

प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ
विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न
पतिष्यतः करसहस्त्रमपि॥

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में क्रम से सगण, जगण, सगण, सगण है तथा पादान्त में द्वादश अक्षर पर यति भी है। अतः यह इस छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६०॥

न० न० भ० र०
। । । । । । ऽ । । ऽ । ऽ

ननभरसहिता महितोज्ज्वला॥ ६१॥

नारायणी–महिता पूजिता। श्रेष्ठेत्यर्थः। उज्ज्वलेति नाम। पादे यतिः॥ ६१॥

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के चारों पादों में क्रमशः दो नगण, एक भगण तथा एक रगण हो और पादान्त में द्वादश अक्षर पर यति हो उसे 'महितोज्ज्वला' छन्द कहते हैं।

विशेष–छन्दलक्षण से युक्त ही मूल लक्षणकारिका है; अतः प्रकृत छन्द का उदाहरण भी यही कारिका हो गयी। इसमें क्रम से दो नगण, एक भगण तथा एक रगण निबद्ध है। पादान्त में द्वादश अक्षर पर यति भी है। इसी से यह उदाहरण बना। चारों पादों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्ननिर्दिष्ट पद्य में देखें–

। । । ।। । ऽ ।। ऽ । ऽ

अधिहृदयमनाहतसारसे
तव पदमनुचिन्तयते हि यः।
भगवति ननु तस्य यशोध्वजः
स्फुरति च धिषणा स्फटिकोज्ज्वला॥

इस प्रस्तुत पद के चारों चरणों में क्रम से दो नगण तथा एक-एक भगण, रगण है और पादान्त में द्वादश अक्षर पर यति भी है। अतः पूर्ण लक्षण चारों चरणों पर घटित हो जाने से यह प्रस्तुत पद्य उक्त छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६१॥

म० म० य० य०
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

पञ्चाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ॥ ६२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–पञ्चभिरश्वैः सप्तभिश्च छिन्ना यतिमती वैश्वदेवी नाम॥ ६२॥

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के सभी पादों में क्रमशः दो मगण, दो यगण हों तथा पाँच व सात अक्षर के बाद यति हो, उसे 'वैश्वदेवी' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत मूल लक्षण कारिका ही इस छन्द के उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रम से दो मगण, दो यगण है तथा पञ्चम व सप्तम अक्षर पर यति है। अतः लक्षण घटित हो जाने से उदाहरण भी इसे ही जानें। चार चरण युक्त अन्य पूर्ण उदाहरण निम्न है–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

अर्चामन्येषां त्वं विहायामराणा-
मद्वैतेनैकं विष्णुमभ्यर्च्य भक्त्या।
तत्राशेषात्मन्यर्चिते भाविनी ते
भ्रातः! सम्पन्नाराधना वैश्वदेवी॥

इस उदाहरण पद्य के चारों चरणों में क्रमशः दो मगण दो यगण है तथा पञ्चम व सप्तम अक्षर पर यति भी है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यह पूर्ण उदाहरण है॥ ६२॥

म० भ० स० म०
ऽ ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ ऽ ऽ

अब्ध्यष्टाभिर्जलधरमाला म्भौ स्मौ॥ ६३॥

नारायणी–अब्धिभिश्चतुर्भिरष्टाभिश्च यतिः। मगण-भगणौ सगण-मगणौ च भवतः तज्जलधरमाला नाम। चतुर्भिरष्टभिश्छिन्नेत्यनुषङ्गः। पैङ्गले त्वियमेव कान्तोत्पीडा॥ ६३॥

तारा–जिस समवृत्त के द्वादश अक्षर वाले जगती छन्द के सभी पादों में क्रमशः एक-एक मगण, भगण, सगण, मगण हों तथा चार व आठ अक्षर के बाद यति हो उसे 'जलधरमाला' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–मूल कारिका ही छन्द का उदाहरण भी है। इसी में क्रमशः मगण, भगण, सगण, मगण तथा चतुर्थ व अष्टम अक्षर पर यति निबद्ध है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही जलधारमाला छन्द का उदाहरण भी है। चार चरणयुक्त पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से निम्न निर्दिष्ट समझें–

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ ऽऽ

या भक्तानां कलिदुरितोत्तप्तानां
तापच्छेदे जलधरमाला नव्या।
भव्याकारा दिनकरपुत्रीकूले
केलिलोला हरितनुरव्यात् सा वः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, भगण, सगण तथा मगण है और प्रत्येक चरण के चतुर्थ एवं अष्टम अक्षर पर यति है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य जलधरमाला छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ६३॥

न० ज० भ० य०

।।।ऽ।ऽ ।।।ऽ ऽ

इह नवमालिका नजभयैः स्यात्॥ ६४॥

नारायणी—इह छन्दःशास्त्रेऽष्टाभिश्चतुर्भिश्च यतिरित्याहुर्वृद्धाः॥ ६४॥

तारा—द्वादश अक्षर वाले जिस समवृत्त के जगती छन्द में क्रमशः नगण, जगण, भगण तथा यगण हो, और आठ व चार अक्षर के बाद यति हो तो उसे 'नवमालिका' छन्द कहते हैं।

विशेष—उदाहरणस्वरूप मूल लक्षणकारिका ही है। इसी कारिका में क्रमशः नगण, जगण, भगण, यगण निबद्ध हैं। आठ व चार अक्षर पर यति भी है। अतः यही कारिका उक्त छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों पादों से पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से इस प्रकार है—

।।।।ऽ।ऽ ।।।ऽऽ

धवलयशोंशुकेन परिवीता

सकलजनानुरागधुसृणोक्ता।

दृढगुणबद्धकीर्तिकुसुमोघैः

तव नवमालिकेव नृपलक्ष्मीः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, जगण, भगण, यगण है तथा अष्टम व चतुर्थ अक्षर पर यति भी है। अतः यह पद्य नवमालिका छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६४॥

न० न० र० र०

।।।।।।ऽ।ऽ ऽ ।ऽ

स्वरशरविरतिर्ननौ रौ प्रभा॥ ६५॥

नारायणी—स्वरैः षड्जादिभिः सप्तभिः शरैः पञ्चभिश्च यतिर्यत्र॥ ६५॥

तारा—द्वादश अक्षर वाले समवृत्त के जगती छन्द में जब क्रमशः दो नगण तथा दो रगण हों और सात तथा पाँच अक्षर के बाद यति हो तब उसे 'प्रभा' छन्द के नाम से कहते हैं।

विशेष—लक्षणयुक्त मूल कारिका होने से यही कारिका इस छन्द का उदाहरण भी है। उक्त कारिका में क्रमशः दो नगण तथा दो रगण हैं। और सातवें व पाँचवें अक्षर पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उदाहरण भी है। अन्य ग्रन्थ से चार चरणयुक्त पूर्ण उदाहरण इस प्रकार है—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

। । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

बलिदमनविधौ बभौ सङ्गता

पदजलरुहि यस्य मन्दाकिनी।

सुरनिहितसिताम्बुजस्रङ्निभा

हरतु जगदघं स पीताम्बरा॥

इस उदाहृत पद्य में क्रमशः दो नगण, दो रगण हैं। अतः यह चारों पादों के सहित प्रभा छन्द का पूर्ण उदाहरण है।

वास्तव में क्रम संख्या ५१ प्रमुदितवदना छन्द भी दो नगण तथा दो रगण वाला ही होता है। गण की दृष्टि से दोनों में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु प्रमुदितवदना छन्द के पादान्त में द्वादश अक्षर के अनन्तर यति विधान है। तथा प्रभा छन्द में सप्तम व पञ्चम अक्षर पर यति का निर्देश है (स्वर=७ शर=५)। छन्दोमञ्जरीकार गङ्गादास ने इसी छन्द को मन्दाकिनी नाम से कहा है। मन्दाकिनी छन्द में भी क्रमशः दो नगण, दो रगण होते हैं। प्रमुदितवदना तथा प्रभा छन्द में सूक्ष्म भेद यति का ही है॥ ६५॥

न० ज० ज० र०

। । । । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

भवति नजावथ मालती जरौ॥ ६६॥

नारायणी—पञ्चभिः सप्तभिश्च यतिः॥ ६६॥

तारा—जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त के जगती छन्द में क्रमशः नगण, जगण, जगण, रगण निबद्ध हों तथा सात और पाँच अक्षर के बाद यति हो उसे 'मालती' छन्द कहते हैं।

विशेष—प्रस्तुत मूल लक्षणकारिका ही इस मालती छन्द का उदाहरण भी है। इसमें क्रमशः नगण, जगण, जगण, रगण निबद्ध है तथा सात व पाँच अक्षर के बाद यति भी है। अतः इसी में लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका इस छन्द का उदाहरण भी हो गया है। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से निम्ननिर्दिष्ट देखें–

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

इह कलयाऽच्युतकेलिकानने

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

मधुरससौरभसारलोलुपः।

। । । । ऽ । । ऽ ऽ । ऽ

कुसुमकृतस्मितचारुविभ्रमा-

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

मलिरपि चुम्बति मालतीं मुहुः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहरण पद्य के चारों चरणों में क्रमशः नगण, जगण, जगण, तथा रगण हैं। तथा सप्तम व पञ्चम अक्षर पर यति भी है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य मालती छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६६॥

ज० भ० ज० र०

।ऽ ।ऽ ।।। ऽ । ऽ । ऽ

जभौ जरौ वदति पञ्चचामरम्॥ ६७॥

तारा–जिस द्वादश अक्षर वाले समवृत्त जगती छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, भगण, जगण तथा रगण हो उसे '**पञ्चचामर**' छन्द कहते हैं। इसके पादान्त में यति होती है।

विशेष–लक्षण कारिका ही छन्द का उदाहरण भी है। मूल कारिका ही लक्षण समन्वित हैं। प्रस्तुत लक्षण कारिका में क्रमशः जगण, भगण, जगण तथा रगण निबद्ध है। पादान्त में यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही पञ्चचामर छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों सहित पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तरों में दर्शनीय हैं॥ ६७॥

न० ज० ज० य०

।। ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ऽ

अभिनवतामरसं नजजाद्यः॥ ६८॥

नारायणी–स्पष्टम्। इदमेवान्ये ललितपदमाहुः। पादे यतिः॥ तथा–

नयुगरयुगलं च गौरी मता॥
पञ्चमुनी म्भौ सात्सयुता ललना॥
ललितमभिहितं नौ म्रौ नामतः॥
द्रुतपदं भवति नभनयाश्चेत्॥

अत्र वृत्तसङ्ख्या ४०९६॥ ६८॥

तारा–जिस द्वादशाक्षर समवृत्त के जगती छन्द में क्रमशः नगण, जगण, जगण तथा यगण हो और पादान्त में यति भी हो उसे '**अभिनवतामरस**' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत मूल लक्षणकारिका छन्द लक्षण से युक्त होने के कारण इस **अभिनवतामरस** छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः नगण, जगण, जगण तथा यगण निबद्ध है तथा पादान्त में यति भी है। चारों चरणों में इसी प्रकार गणनिबन्धन होने से चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न निर्दिष्ट है–

।।।ऽ।। ऽ ।। ऽ ऽ

अभिनवतामरसं कमलायाः
करयुगवासमितं मृदुलायाः।
अहिपतितल्पगतं स्मरतातं
मदयति कामकलाकलनार्थम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः नगण, जगण, जगण, यगण निबद्ध है। तथा पादान्त में यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य अभिनवतामरस छन्द का पूर्ण उदाहरण हो गया है॥ ६८॥

न० न० त० त० गु०
।।।।।।ऽऽ।ऽ ऽ ।ऽ

(१३) अतिजगती। तुरगरसयतिर्नौ ततौ गः क्षमा॥ ६९॥

नारायणी–अथाऽतिजगती (१३)–न-न-त-त-गुरुभिः क्षमा। सप्तभिः षड्भिश्च तत्र यतिः। चन्द्रि-केत्यन्ये॥ ६९॥

तारा–यहाँ तक द्वादश अक्षर वाले समवृत्त के जगती छन्द के भेदों का वर्णन सोदाहरण किया गया। अब इसके आगे उसी समवृत्त के त्रयोदश अक्षर वाले **'अतिजगती'** छन्द के भेदों का उल्लेख सविस्तार सोदाहरण किया जा रहा है।

जिस समवृत्त के त्रयोदश अक्षर वाले **अतिजगती** छन्द के सभी पादों में क्रमशः दो नगण तथा दो तगण व एक गुरु निबद्ध हों और सातवें तथा छठे अक्षर पर यति हो तो उसे **'क्षमा'** छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–मूल लक्षणकारिका ही उक्त **क्षमा** छन्द का उदाहरण भी समझें। इस मूल कारिका में ही क्रमशः दो जगण, दो तगण व एक गुरु वर्ण निबद्ध किया गया है। सप्तम व षष्ठ वर्ण पर यति भी दिखाई गई है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से उक्त कारिका ही इस **क्षमा** छन्द का उदाहरण भी है। चारों पादों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न प्रकार से समझें–

।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

अनिशमधिमनश्चित्कलाचिन्तने
स्वमपि परशिवं भावयन्मज्जति।
स रचयितुमलं भावनामात्रतो
जगदिदमखिलं तत्परः का क्षमा॥

इस प्रस्तुत पद्य में कवि ने क्रमशः दो नगण, दो तगण व एक गुरु वर्ण निबद्ध किया है। सप्तम तथा षष्ठ वर्ण पर यति भी दिखाई है। अतः पूर्णतः चारों चरणों में छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य उक्त क्षमा छन्द का पूर्ण उदाहरण बना॥ ६९॥

म० न० ज० र० गु०
ऽ ऽ ऽ ।।।।ऽ ।ऽ।ऽ ऽ

म्नौ ज्रौ गः त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्॥ ७०॥

नारायणी–त्रिभिर्दशभिश्च यतिर्यत्र सा॥ ७०॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस समवृत्त के त्रयोदश वाले अतिजगती छन्द में क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण तथा अन्त में एक वर्ण गुरु हो और तीन व दश अक्षर के बाद यति हो उसे **'प्रहर्षिणी'** छन्द कहा जाता है।

विशेष–उक्त मूल कारिका ही छन्द-लक्षण घटित हो जाने से इस प्रहर्षिणी छन्द का उदाहरण भी मान लें। इसमें क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण तथा एक गुरु वर्ण है। तीसरे व दसवें अक्षर पर यति भी है। अतः यही कारिका इस प्रहर्षिणी छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों वाला पूर्ण उदाहरण निम्ननिर्दिष्ट है–

ऽ ऽ ऽ। ।। । ऽ। ऽ । ऽ ऽ

गोपीनामधरसुधारसस्य पानै-
रुत्तङ्गस्तनकलशोपगूहनैश्च।
आश्चर्यैरपि रतिविभ्रमैर्मुरारेः
संसारे मतिरभवत्प्रहर्षिणीह॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण है। तृतीय व दशम वर्ण पर यति भी चारों पादों में है। अतः लक्षण घटित हो जाने से उक्त पद्य प्रहर्षिणी छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ७०॥

ज० भ० स० र० गु०
। ऽ। ऽ । । । ऽ । ऽ। ऽ

चतुर्ग्रहैरतिरुचिरा जभस्जगाः॥ ७१॥

नारायणी–ज-भ-स-ज-गैश्चतुर्षु नवसु च यतावतिरुचिरा॥ ७१॥

तारा–समवृत्त के जिस त्रयोदश अक्षर वाले अतिजगती छन्द के सभी पादों में क्रमशः जगण, भगण, सगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण हो उसे **'अतिरुचिरा'** छन्द कहा जाता है। इसमें चार तथा नौ अक्षर के अन्त में यति अर्थात् विराम होता है।

विशेष–इस अतिरुचिरा छन्द का उदाहरण भी मूल कारिका में ही निबद्ध है। इसमें क्रमशः जगण, भगण, सगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण है। चतुर्थ और नवम अक्षर पर यति भी है। अतः यह कारिका ही इस अतिरुचिरा छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से निम्न है।

। ऽ। ऽ । ।। । ऽ। ऽ। ऽ

पुनातु वो हरिरतिरासविभ्रमी
परिभ्रमन् व्रजरुचिराङ्गनान्तरे।
समीरणोल्लसितलतान्तरालगो
यथा मरुत्तरलतमालभूरुहः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, भगण, सगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण भी है। और चतुर्थ व नवम वर्ण पर चारों चरणों में यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य **अतिरुचिरा** छन्द का उदाहरण हो गया॥ ७१॥

म० त० य० स० गु०
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ

वेदै रन्ध्रैर्मौ यसगा मत्तमयूरम्॥ ७२॥

नारायणी—वेदाश्चत्वारो रन्ध्राणि नव॥ ७२॥

तारा—जिस समवृत्तक त्रयोदश अक्षर वाले अतिजगती छन्द के सभी पादों में क्रमशः मगण, तगण, यगण, सगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण हो और चार तथा नौ अक्षरों के बाद यति-विधान हो उसे '**मत्तमयूर**' छन्द कहते हैं।

विशेष—उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही प्रस्तुत है। इसमें क्रमशः मगण, तगण, यगण, सगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण निबद्ध है। चतुर्थ तथा नवम अक्षर पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से उक्त लक्षणकारिका ही इस **मत्तमयूर** छन्द का उदाहरण भी हो गया। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण यह देखें—

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ ।। ऽ ऽ
लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्तं
नृत्यन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम्।
रासक्रीडाकृष्टमना गोपवधूभिः
कंसध्वंसी निर्जनवृन्दावनमाप॥

इस उदाहत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः एक-एक मगण, तगण, यगण, सगण तथा अन्त में एक गुरु वर्ण है, और चतुर्थ व नवम अक्षर पर चारों चरणों में यति भी है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यह **मत्तमयूर** छन्द का पूर्ण उदाहरण बना॥ ७२॥

ज० स० त० स० गु०
। ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ

उपस्थितमिदं ज्सौ त्सौ सगुरुकं चेत्॥ ७३॥

तारा—समवृत्त के जिस त्रयोदश अक्षर वाले अतिजगती छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, सगण, तगण, सगण व अन्त में एक गुरु वर्ण हो उसे '**उपस्थित**' छन्द के नाम से कहा जाता है। इसके पञ्चम व अष्टम वर्ण पर यति होती है।

विशेष—उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत लक्षण कारिका ही समझें। इस कारिका में क्रमशः जगण, सगण, तगण, सगण व अन्त में एक वर्ण गुरु निबद्ध है। पञ्चम व अष्टम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

जाने से यही लक्षण कारिका उक्त उपस्थित छन्द का उदाहरण भी बन गया है। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों युक्त ग्रन्थान्तरों में देखें॥ ७३॥

स० ज० स० ज० गु०

। । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

सजसा जगौ भवति मञ्जुभाषिणी॥ ७४॥

नारायणी–स्पष्टम्। पञ्चभिरष्टभिश्चात्र यतिः॥ ७४॥

तारा–जिस समवृत्त के त्रयोदश अक्षर वाले अतिजगती छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व पादान्त में एक वर्ण गुरु हो उसे मञ्जुभाषिणी छन्द कहते हैं। इसमें पञ्चम तथा अष्टम वर्ण पर यति-विधान है।

विशेष–मूलकारिका में लक्षण घटित होने के कारण उदाहरणस्वरूप भी इसे ही समझें। इसमें क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण तथा पादान्त में एक गुरुवर्ण भी निबद्ध है। पञ्चम, अष्टम वर्ण पर यति भी निर्दिष्ट है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से उदाहरण भी यही हो गया। चारों चरणों सहित उदाहरणान्तर निम्ननिर्दिष्ट समझें–

। । ऽ । ऽ । । । ऽ। ऽ । ऽ

अमृतोर्मिशीतलकरेण लालयन्
तनुकान्तिरोचितविलोचनो हरे।
नियतं कलानिधिरसीति वल्लवी-
मुदमच्युते व्याधित मञ्जुभाषिणी॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण तथा पादान्त में एक वर्ण गुरु भी चारों चरणों में विद्यमान है। पञ्चम व अष्टम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः यह पद्य पूर्णतः लक्षण समन्वित होने के कारण इस प्रस्तुत छन्द मञ्जुभाषिणी का पूर्ण उदाहरण बन गया॥ ७४॥

न० न० त० त० गु०

। । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाश्चर्तुभिः॥ ७५॥

नारायणी–अश्वाः सप्त, ऋतवः षट्। इयं क्षमैव आचार्यो मतभेदेन संज्ञान्तरार्थं पुनरूचे। तथा–

यमौ रौ विख्याता चञ्चरीकावलीगः॥
जभौ स्जगावतिरुचिराम्बुधिग्रहैः॥
भरतमतेनेयमेव पूर्वं रुचिरोक्ता॥
नसरयुगगैश्चन्द्र - लेखर्तुलोकैः॥
षड्भिः सप्तभिश्च यतिः॥
ऋतुमुनियतिर्विद्युन्नौ तौ गुरुः॥

अत्र वृत्तसङ्ख्या ८१९२॥ ७५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–समवृत्त के जिस त्रयोदश अक्षरवाले अतिजगती छन्द में क्रमशः दो नगण, दो तगण तथा पादान्त में एक गुरु वर्ण हो; साथ ही सप्तम एवं षष्ठ वर्ण पर यति हो उसे '**चन्द्रिका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत मूल लक्षणकारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः दो नगण, दो तगण तथा पादान्त में एक गुरु वर्ण भी निबद्ध है। सप्तम व षष्ठ वर्ण पर यति भी है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका इस **चन्द्रिका** छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से निम्न देखें–

।। ।। ।। ऽ ऽ। ऽ ऽ । ऽ

इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः
सततमसुतरं वर्णयन्त्यन्तरम्।
अमुमतिविपिनं वेद दिग्व्यापिनं
पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, दो तगण तथा पादान्त में एक गुरु वर्ण है। सप्तम व षष्ठ वर्ण पर यति भी है। अतः यह पद्य लक्षण घटित हो जाने से **चन्द्रिका** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ७५॥

म० त० न० स० गु० गु०
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

(१४) शक्वरी। म्तौ न्सौ गावक्षग्रहविरतिरसम्बाधा॥ ७६॥

नारायणी–अथ शक्वरी (१४)–म-त-न-स-गणैर्गुरुभ्यां चासम्बाधा नाम। अक्षैर्बाह्येन्द्रियैः पञ्चभिः, ग्रहैर्नवभिश्च यतिर्यत्र सा तथा॥ ७६॥

तारा–अब चतुर्दश अक्षर वाले **शक्वरी** छन्द का प्रकरण प्रारम्भ होता है। जिसके प्रत्येक पाद में चतुर्दश अक्षर हों उसे **शक्वरी** छन्द कहते हैं।

समवृत्त के चतुर्दश अक्षर वाले **शक्वरी** छन्द के प्रत्येक पाद में यदि क्रमशः मगण, तगण, नगण, सगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण हों, और पञ्चम व नवम अक्षर पर यति हो तो उसे '**असम्बाधा**' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष–मूल लक्षणकारिका ही उदाहरणस्वरूप भी समझें। इसी में क्रमशः मगण, तगण, नगण, सगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण हैं। पञ्चम व नवम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर निम्न निर्दिष्ट चारों चरणों से युक्त है–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ ऽ

वीर्याग्नौ येन ज्वलति रणवशात् क्षिप्ते
दैत्येन्द्रे जाता धरणिरियमसम्बाधा।
धर्मस्थित्यर्थं प्रकटिततनुसम्बन्धः
साधूनां बाधां प्रशमयतु स कंसारिः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उद्धृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, तगण, नगण, सगण तथा अन्त में दो वर्ण गुरु हैं। पञ्चम व नवम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण इस **असम्बाधा** वृत्त का है॥ ७६॥

न० न० र० स० ल० गु०

।।।।।।ऽ ।ऽ।।ऽ।ऽ

ननरसलघुगैः स्वरैररपराजिता॥ ७७॥

नारायणी–स्वराश्च स्वराश्चेत्येकशेषे सप्तभिः सप्तभिश्च यतिर्भवति॥ ७७॥

तारा–जिस समवृत्त चतुर्दश अक्षर वाले शक्वरी छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण, एक रगण, एक सगण तथा अन्त में एक वर्ण लघु व एक गुरु हो और प्रति सप्तम वर्ण पर यति हो उसे '**अपराजिता**' छन्द कहते हैं।

विशेष–उदाहरणस्वरूप इस छन्द की भी मूल कारिका ही प्रस्तुत है। इसमें क्रमशः दो नगण, एक-एक रगण, सगण व एक-एक लघु-गुरु वर्ण निबद्ध हैं। लक्षण घट जाने से यही कारिका इस **अपराजिता** छन्द का उदाहरण भी समझें। उदाहरणान्तर चारों चरणों से युक्त निम्न देखें–

।।।।।।ऽ ।ऽ।।ऽ।ऽ

यदनवधिभुजप्रतापकृतास्पदा

यदुनिचयचमूः परैररपराजिता।

व्यजयत समरे समस्तरिपुव्रजं

स जयति जगतां गतिर्गरुडध्वजः॥

इस पद्य के चारों चरणों में क्रमशः दो नगण, एक-एक रगण, सगण व एक-एक लघु-गुरु वर्ण अन्त में है। सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य उक्त अपराजिता छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ७७॥

न० न० भ० न० ल० गु०

।।।।।।ऽ ।।।।।।ऽ

ननभनलघुगैः प्रहरणकलिका॥ ७८॥

नारायणी–पूर्वोक्तैव यतिः॥ ७८॥

तारा–समवृत्त के चतुर्दश अक्षर वाले जिस शक्वरी छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण, एक-एक भगण, नगण तथा अन्त में एक-एक वर्ण लघु-गुरु निबद्ध हो और प्रति सप्तम वर्ण पर यति भी हो तो उसे '**प्रहरणकलिका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–लक्षणकारिका ही लक्षण से युक्त है। इसमें क्रमशः दो नगण, एक-एक भगण, नगण तथा अन्त में एक-एक वर्ण लघु-गुरु है। प्रत्येक सप्तम

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

वर्ण पर यति भी है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से मूल कारिका ही इस छन्द का उदाहरण भी समझें। उदाहरणान्तर चारों चरणों से युक्त निम्न निर्दिष्ट समझें–

। । । । । । ऽ । । । । । । ऽ

व्यथयति कुसुमप्रहरण कलिका
प्रमदवनभवा तव धनुषि तता।
विरहविपदि मे शरणमिह ततो
मधुमथनगुणस्मरणमविरतम्॥

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः दो नगण, एक-एक भगण, नगण तथा अन्त में एक-एक वर्ण लघु-गुरु है। प्रति सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य इस **प्रहरणकलिका** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ७८॥

त० भ० ज० ज० गु० गु०

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ-ऽ

उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौगः॥ ७९॥

नाराणयी–त-भ-ज-जा-गणा गुरू चेति वसन्ततिलका॥ ७९॥

तारा–समवृत्त के जिस चतुर्दश अक्षर वाले शक्वरी छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण तथा अन्तिम दो वर्ण गुरु हों, अष्टम व षष्ठ वर्ण पर यति भी हो उसे '**वसन्ततिलका**' छन्द कहते हैं।

विशेष–लक्षण-समन्वित मूलकारिका होने से यही कारिका इस वसन्ततिलका छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः तगण, भगण, दो जगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण हैं। अष्टम व षष्ठ वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उदाहरणस्वरूप भी है। उदाहरणान्तर इस प्रकार समझें, जिसमें चारों चरण समन्वित हैं–

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौ गः
सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन।
उद्धर्षिणीति गदिता मुनिसैतवेन
रामेण सेयमुदिता मधुमाधवीति॥

यह उदाहृत पद्य मूल में ही **वसन्ततिलका** छन्द के भिन्न-भिन्न नामों को पुरातन आचार्यों ने कहा है। यही चारों चरणों युक्त इस **वसन्ततिलका** छन्द का पूर्ण उदाहरण भी है। इसके प्रत्येक पाद में क्रमशः एक-एक तगण, भगण व दो जगण हैं, अन्त में दो गुरु वर्ण भी है। अष्टम व षष्ठ वर्ण पर चारों चरणों में यति-विधान भी है। अतः यह पद्य लक्षण घटित हो जाने के कारण इस **वसन्ततिलका** छन्द का पूर्ण उदाहरण हो गया है॥ ७९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

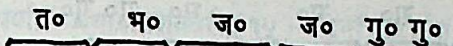

सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन॥ ८०॥

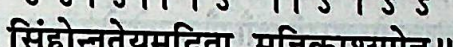

उद्धर्षिणीयमुदिता मुनिसैतवेन॥ ८१॥

नारायणी—काश्यपेन मुनिनेयं वसन्ततिलकैव सिंहोन्नतोक्तेति संज्ञान्तरोक्तिः। सैतवेन त्वाचार्येणेयमुद्धर्षिणीत्युक्ता॥ ८०-८१॥

तारा—आचार्य मुनि काश्यप ने इसी वसन्ततिलका छन्द को '**सिंहोन्नता**' नाम से कहा है। और आचार्य मुनि सैतव ने इसी को '**उद्धर्षिणी**' नाम से कहा है। इस प्रकार यह केवल नामान्तर मात्र है। लक्षण-उदाहरण सब वसन्ततिलका के ही समान उसी प्रकार हैं। इससे इनका पृथक् उदाहरण प्रस्तुत करना व्यावहारिक नहीं है॥ ८०-८१॥

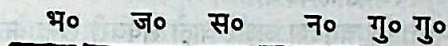

इन्दुवदना भजसनैः सगुरुयुग्मैः॥ ८२॥

नारायणी—गुरुयुगलसहितैर्भ-ज-स-नैः॥ ८२॥

तारा—जिस समवृत्त के चतुर्दश अक्षर वाले शक्वरी छन्द में क्रमशः भगण, जगण, सगण तथा अन्त में दो गुरुवर्ण हों, उसे '**इन्दुवदना**' छन्द के नाम से कहा जाता है।

विशेष—लक्षण-घटित छन्द-लक्षण की उक्त मूल कारिका ही प्रस्तुत छन्द इन्दुवदना का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः भगण, जगण, सगण तथा अन्त में दो गुरु वर्ण निबद्ध हैं। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका इस **इन्दुवदना** छन्द का उदाहरण भी बना। चारों चरणों युक्त उदाहरणान्तर इस प्रकार समझें-

ऽ। । । ऽ । । । ऽ। । । ऽ ऽ

इन्दुवदना कमलकोमलशरीरा
मञ्जुवचना मदनमोहनविलासा।
कं न वसयेन्मुनिवरं नयनलीला
वीक्षणलवैरपि हठाच्चतुरवाचा॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः एक भगण, एक जगण, एक सगण है, अन्त में दो गुरु वर्ण भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उस इन्दुवदना छन्द का चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण है॥ ८२॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

म० स० म० भ० गु० गु०

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

द्विःसप्तच्छिदलोला म्सौ म्भौ गौ चरणे चेत्॥ ८३॥

नारायणी—द्विर्द्विवारं सप्तसु छित् छेदो यतिर्यस्याः साऽलोला नाम॥ तथा—

ननतजगुरुगैः सप्तयतिर्नंदी स्यात्।
लक्ष्मीरन्तविरामा म्सौ तमौ गुरुयुग्मम्॥
त्रिननगगिति वसुयति सुपवित्रम्।
मध्यक्षामा युगदशविरामा म्मौ न्यौ गौ॥

इदमेव कुटिलमित्यन्ये।

नजभजला गुरुश्च भवति प्रमदा॥
सजसा यलौ गिति शरग्रहैर्मञ्जरी।
नजभजगैर्गुरुश्च वसुषट् कुमारी॥
ननरैर्लगौ च रचितं सुकेशरम्॥

अत्र वृत्तसङ्ख्या १६३८४॥ ८३॥

तारा—जिस समवृत्त के चतुर्दश अक्षर वाले शक्वरी छन्द के सभी पादों में क्रमशः मगण, सगण, मगण, भगण तथा अन्त में दो वर्ण गुरु हों। सप्तम-सप्तम वर्ण पर यति हो उसे '**अलोला**' छन्द कहते हैं।

विशेष—लक्षण-समन्वित मूलकारिका को ही छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में ही क्रमशः मगण, सगण, मगण, भगण तथा दो गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध हैं। सप्तम-सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से मूल कारिका को ही इस **अलोला** छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरणों से युक्त उदाहरण निम्न है—

ऽऽ ऽ। । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ। । ऽ ऽ

मुग्धे यौवनलक्ष्मीर्विद्युद्विभ्रमलोला
त्रैलोक्याद्भुतरूपी गोविन्दोऽतिदुरापः।
तद्वृन्दावनकुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गसनाथे
श्रीनाथेन समेता स्वच्छन्दं कुरु केलिम्॥

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, सगण, मगण, भगण तथा अन्त में दो वर्ण गुरु है। सप्तम-सप्तम अक्षर पर यति भी है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य **अलोला** छन्द का उदाहरण है।

ल०
१४ गु०

। । । । । । । । । । । । । । ऽ

(१५) अतिशक्वरी। द्विहतहयलघुरथ गिति शशिकला॥ ८४॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–अथाऽतिशक्वरी (१५)–द्विगुणिता हयाः सप्त लघवो यत्र सा तथा। अथ तदनन्तरं गुरुर्गुर्वन्ताश्चतुर्दश लघवः शशिकलेत्यर्थः। इयमेव पैङ्गले नननसैश्चन्द्रावर्ता नामोक्ता। अत्र सप्तभिरष्टभिश्च यतिरिति सम्प्रदायः॥ ८४॥

तारा–जिस समवृत्त के पञ्चदश अक्षर वाले अतिशक्वरी छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः चौदह वर्ण लघु तथा अन्तिम एक वर्ण गुरु हो उसे '**शशिकला**' छन्द कहते हैं। इसमें सप्तम, अष्टम वर्ण पर यति-विधान है।

विशेष–लक्षण युक्त होने के कारण मूल कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः चौदह वर्ण लघु तथा अन्तिम वर्ण गुरु है। सप्तम एवं अष्टम वर्ण पर यति भी है। इस प्रकार लक्षण घटित हो जाने से उक्त कारिका उदाहरण-स्वरूप भी है। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न देखें–

।।।।।।।।।।।।।।ऽ

मलयजतिलकसमुदितशशिकला
व्रजयुवतिलसदलिकगगनगता।
सरसिजनयनहृदयसलिलनिधिं
व्यतनुत विततरभसपरितरलम्॥

इस उदाहृत पद्य में क्रमशः चौदह वर्ण तथा अन्तिम गुरुवर्ण चारों चरणों में है। सप्तम, अष्टम पर यति भी है। अतः लक्षण घटित होने से यह पद्य शशिकला छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ८४॥

ल० १४ गु०

।।। ।।। ।।।।।।।।ऽ

स्त्रगिति भवति रसनवकयतिरियम्॥ ८५॥

नारायणी–इयं शशिकलैव रसेषु षट्सु नवसु यतौ स्त्रगिति संज्ञिता मालेत्यर्थः॥ ८५॥

तारा–उपर्युक्त समवृत्तक पञ्चदशाक्षर अतिशक्वरी के शशिकला छन्द में जब छः तथा नव अक्षरों पर यति-विधान होता है तो उसे '**स्त्रग्**' नामक छन्द से कहा जाता है। अर्थात् स्त्रग् छन्द में भी चौदह वर्ण लघु तथा अन्तिम एक वर्ण गुरु होता है। छः, नव वर्ण पर यति होती है।

विशेष–उदाहरणस्वरूप मूल कारिका ही प्रस्तुत है। क्योंकि इसमें क्रमशः चौदह वर्ण लघु एवं अन्तिम वर्ण गुरु निबद्ध है। छः, नव वर्ण पर यति भी है। लक्षणघटित कारिका होने से यही उदाहरण भी है। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों वाला निम्न है–

।।।।।।।।।।।।।।ऽ

अयि सहचरि रुचिरतरगुणमयी
मृदिमवसतिरनपगतपरिमला।
स्त्रगिव निवस विलसदनुपमरसा
सुमुखि मुदितदनुजदलनहृदये॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उद्धृत पद्य में क्रमशः चौदह वर्ण लघु एवं अन्तिम एक वर्ण गुरु चारों चरणों में समान रूप से निबद्ध है। छः, नव वर्ण पर यति भी सभी चरणों में है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य **स्रग्** नामक छन्द का पूर्ण उदाहरण बना॥ ८५॥

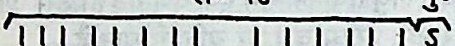

वसुहययतिरिह मणिगुणनिकरः॥ ८६॥

नारायणी–अष्टसु सप्तसु च यतावियमेव शशिकला मणिगुणनिकर-संज्ञितेति। यतिभेदेन संज्ञान्तरद्वयमुक्तम्॥ ८६॥

तारा–जिस समवृत्त पञ्चदशाक्षर **अतिशक्वरी** छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः चौदह वर्ण लघु एवं अन्तिम एक वर्ण गुरु हो तथा आठवें व सातवें वर्ण पर यति हो उसे '**मणिगुणनिकर**' नामक छन्द से कहा जाता है।

विशेष–मूल कारिका में लक्षण समन्वित होने से उक्त छन्द का उदाहरण भी इसे ही समझें। इसमें क्रमशः चौदह वर्ण लघु तथा अन्तिम एक वर्ण गुरु है। अष्टम व सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही उक्त छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण ग्रन्थान्तर से निम्ननिर्दिष्ट है–

।।।।।।।।।।।।।।ऽ

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति-
रमितमहिमभर-सहजनिवसतिः।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचितः
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभवः॥

इस पद्य में क्रमशः चौदह अक्षर लघु तथा अन्तिम एक अक्षर गुरु है। अष्टम व सप्तम अक्षर पर यति भी है। इस प्रकार लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य मणिगुणनिकर का पूर्ण उदाहरण है॥ ८६॥

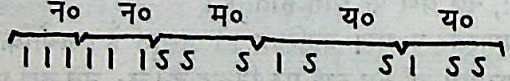

ननमययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः॥ ८७॥

नारायणी–भोगिभिर्नागैरष्टभिर्लोकैर्भूरादिभिः सप्तभिर्यताविति शेषः। 'नागलोकैः' इति रुचिरः पाठ॥ ८७॥

तारा–जिस समवृत्त के पञ्चदशाक्षर **अतिशक्वरी** भेद के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण, एक मगण, दो यगण हों तथा अष्टम व सप्तम वर्ण पर यति हो उसे '**मालिनी**' छन्द कहते हैं।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–लक्षणघटित मूल कारिका होने से इसी को इस मालिनी छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न है–

। । । । । । ऽऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

मृगमदकृतचर्चा पीतकौशेयवासा
रुचिरशिखिशिखण्डाऽऽबद्धधम्मिल्लपाशा।
अनृजुनिहितमंसे वंशमुत्क्वाणयन्ती
धृतमधुरिपुलीला मालिनी पातु राधा॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा दो यगण हैं। अष्टम और सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य मालिनी छन्द का पूर्ण उदाहरण हुआ॥ ८७॥

न० ज० भ० ज० र०

। । । । ऽ । । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

भवति नजौ भजौ रसहितौ प्रभद्रकम्॥ ८८॥

नारायणी–रसहितौ रगणयुक्तौ। सप्तस्वष्टसु च यतिः॥ ८८॥

तारा–जिस समवृत्तक पञ्चदशाक्षर भेद के अतिशक्वरी छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, जगणं, भगण, जगण तथा रगण हो और सप्तम व अष्टम वर्ण पर यति हो उसे '**प्रभद्रक**' कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका लक्षण घटित होने के कारण प्रस्तुत **प्रभद्रक** छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों से समन्वित पूर्ण उदाहरण देखें–

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

भज भज शङ्करं गिरिजया समन्वितं
त्यज भवबन्धनं विरसतावसानकम्।
उपनिबद्धं मतं मनसि धेहि सन्ततं
गुरुकृपया सदा भवतु ते प्रभद्रकम्॥

इस पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, रगण हैं तथा सप्तम व अष्टम वर्ण पर यति है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **प्रभद्रक** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ८८॥

स० ज० न० न० य०

। । ऽ । ऽ । । । । । । । ऽ ऽ

सजना नयौ शरदशकविरतिरेला॥ ८९॥

नारायणी–शरेषु पञ्चसु दशसु च यतौ स-ज-न-न-यैरेला नाम॥ ८९॥

तारा–जिस पञ्चदशाक्षर समवृत्त के अतिशक्वरी भेद के प्रत्येक पाद में क्रमशः सगण, जगण, नगण, नगण एवं यगण हो उसे '**एला**' छन्द के नाम से कहा जाता है। इसके प्रत्येक पाद में पञ्चम व दशम अक्षर पर यति होती है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–मूल कारिका को ही लक्षण समन्वित होने से प्रस्तुत एला छन्द का उदाहरण भी मान लें। क्योंकि इसमें क्रमशः सगण, जगण, नगण, नगण व यगण है। पञ्चम व दशम अक्षर पर यति-विधान भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। उदाहरणान्तर चारों चरण से युक्त पूर्णरूपेण निम्न पद्य है–

। । ऽ । ऽ । । । । । । । । ऽ ऽ

यदि कोपिनी प्रभवसि मदुपरि कान्ते
दृढबन्धनं घटय भुजलतिकया मे।
सहसा कुरु प्रखरनयनशरघातं
रदनच्छदावथ दशसुमुखि यथेच्छम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः सगण, जगण, नगण, नगण व यगण है। पञ्चम व दशम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त एला छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ८९॥

म० र० म० य० य०

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

म्रौ म्यौ यान्तौ भवेतां सप्ताष्टभिश्चन्द्रलेखा॥ ९०॥

नारायणी–यान्तावन्ते यगणयुक्तौ। तथा–

मा बाणा स्युर्यस्यां सा कामक्रीडासंज्ञा ज्ञेया॥
नजभजरैर्विराजितमिदं सुकेसरम्॥
चन्द्रलेखाभिधा रौ म्यौ यो विरामः स्वराऽष्टौ॥
ननतभरकृताङ्गैः स्वैरुपमालिनी॥

अत्र वृत्तानि ३२७६८॥ ९०॥

तारा–पञ्चदशाक्षर समवृत्त के अतिशक्वरी भेद के जिस छन्द में क्रमशः मगण, रगण, मगण, यगण, यगण हों तथा सप्तम व अष्टम वर्ण पर यति हो उसे **'चन्द्रलेखा'** छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका ही लक्षण समान्वित है, अतः प्रस्तुत चन्द्रलेखा छन्द के उदाहरणस्वरूप भी यह मूलकारिका ही समझें। अर्थात् इसमें क्रमशः मगण, रगण, मगण व दो यगण है। साथ ही सप्तम व अष्टम वर्ण पर यति भी है। इससे यही उदाहरण भी है। चारों चरणों सहित पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य देखें–

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

विच्छेदे ते मुरारे पाण्डुप्रकाशा कृशाङ्गी
म्लानच्छायं दुकूलं न भ्राजते विभ्रती सा।
राधाम्भोदस्य गर्भे लीना यथा चन्द्रलेखा
किञ्चार्ता त्वां स्मरन्ती धत्ते धृतं जीवयोगम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उद्धृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, रगण, मगण व दो यगण हैं। प्रत्येक पाद के सप्तम तथा अष्टम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण पूर्ण घटित हो जाने से यह पद्य उपर्युक्त चन्द्रलेखा छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ९०॥

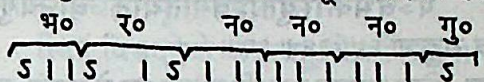

(१६) अष्टिः। भ्रत्रिनगैः स्वरात्खमृषभगजविलसितम्॥ ९१॥

नारायणी–अथाऽष्टिः (१६)–भ्रौ च त्रयो नश्च गुरुश्च तैरिति विग्रहः, स्वरात्सप्तमात्परं खं विरामो यदि तदेति शेषः। सप्तसु यतिः। पादान्ते च यतिः प्राप्तवति सा नोक्ता। स्वरात्परं खं शरीरच्छिद्रनवकं यतिस्थानमिति शेष इति वार्थः। ऋषभेत्यादि सर्वं नाम॥ ९१॥

तारा–समवृत्त के सोलहवें भेद का नाम **अष्टि** है। जिस अष्टि छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक भगण, एक रगण, तीन नगण व अन्त में एक गुरु वर्ण हो तथा सप्तम वर्ण के बाद यति हो उसे '**ऋषभगजविलसितम्**' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत कारिका लक्षणयुक्त होने के कारण उक्त छन्द का उदाहरण भी है। अर्थात् इस मूल कारिका में ही क्रमशः एक भगण, एक रगण व तीन नगण निबद्ध हैं तथा अन्त में गुरु है। तथा सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका उक्त छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चारों पादों वाला निम्न प्रकार से समझें–

ऽ ।।ऽ । ऽ। ।। ।। । । ।।ऽ

यो हरिरुच्चखान खरतरनखशिखरै-
र्दुर्जयदैत्यसिंहसुविकटहृदयतटम्।
किन्त्विह चित्रमेष यदखिलमपहृतवान्
कंसनिदेशदृप्यदृषभगजविलसितम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक भगण, एक रगण, तीन नगण व अन्त में गुरु है। सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह उक्त छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ९१॥

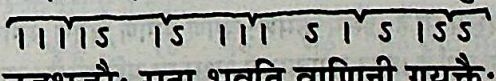

नजभजरैः सदा भवति वाणिनी गयुक्तैः॥ ९२॥

नारायणी–गयुक्तैर्गुरुयुक्तैः॥ तथा–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

चित्रसंज्ञमीरितं रजौ रजौ रगौ च वृत्तम्।
जरौ जरौ ततो जगौ च पञ्चचामरं वदेत्॥
सङ्कथिता भरौ नरनगाश्च धीरललिता।
पञ्चभकाररयुताश्वगतिर्यदि चान्त्यगुरुः॥

अत्र सङ्ख्या ६५५३६॥ ९२॥

तारा–जिस समवृत्त के अष्टि नामक भेद में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, रगण और एक गुरु वर्ण हो तो उसे '**वाणिनी**' छन्द कहते हैं। इसके अन्त में यति होती है।

विशेष–उपर्युक्त मूल लक्षण-कारिका ही लक्षण समन्वित होने से उक्त **वाणिनी** छन्द का उदाहरणस्वरूप भी है। अर्थात् इस कारिका में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण है। अन्त में यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चार पादों वाला निम्न पद्य है–

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

स्फुरतु ममाननेऽद्य ननु वाणि! नीतिरम्यं
तव चरणप्रसादपरिपाकतः कवित्वम्।
भवजलराशिपारकरणक्षमं मुकुन्दं
सततमहं स्तवैः स्वरचितैः स्तवानि नित्यम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, रगण व एक-एक गुरु वर्ण है। पादान्त में यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य पूर्ण उदाहरण है॥ ९२॥

य० म० न० स० भ० ल० गु०
। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । । । ऽ

(१७) अत्यष्टिः। रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी॥ ९३॥

नारायणी–अथाऽत्यष्टि (१७)–रसैः षड्भिः रुद्रैरेकादशभिश्छिन्ना यतिमती॥ ९३॥

तारा–जिस सत्रह अक्षर वाले समवृत्त के अत्यष्टि भेद में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण व एक लघु एक गुरु वर्ण हों तथा षष्ठ व एकादश अक्षर पर यति हो उसे '**शिखरिणी**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल लक्षणकारिका लक्षण-समन्वित है। अतः उक्त शिखरिणी छन्द के उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण व एक लघु, एक गुरु वर्ण है। षष्ठ व एकादश अक्षर पर यति भी है। अतः लक्षण घटित होने से यह कारिका ही उक्त छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चारों पादों सहित निम्न पद्य देखें–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।। ।।।ऽ ऽ ।। ।ऽ

करादस्य भ्रष्टे ननु शिखरिणी दृश्यति शिशो-
र्विलीनाः स्मः सत्यं नियतमवधेयं तदखिलैः।
इति त्रस्यद् गोपाऽनुचितनिभृतालापजनितं
स्मितं विभ्रद्देवो जगदवतु गोवर्धनधरः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण व एक लघु, एक गुरु वर्ण है। तथा षष्ठ व एकादश अक्षर पर चारों चरणों में यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उपर्युक्त शिखरिणी छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६३॥

ज० स० ज० स० य० ल० गु०

।ऽ ।। ।ऽ ।ऽ।।। ऽ। ऽऽ ।ऽ

जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः॥ ६४॥

नारायणी—वसुभिरष्टभिर्ग्रहैर्नवभिश्च यतिमती॥ ६४॥

तारा—जिस सत्रह अक्षर वाले समवृत्त के अत्यष्टि भेद में क्रमशः जगण, सगण, जगण, सगण, यगण व एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में हों तथा अष्टम व नवम वर्ण पर यति हो उसे 'पृथ्वी' छन्द कहते हैं।

विशेष—उक्त मूल कारिका छन्द-लक्षण युक्त होने से इस पृथ्वी छन्द के उदाहरणस्वरूप भी है। इसमें क्रमशः जगण, सगण, जगण, सगण, यगण व अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उक्त पृथ्वी छन्द का उदाहरण भी समझें। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों युक्त निम्न-निर्दिष्ट पद्य है—

।ऽ।। ।ऽ।ऽ।।। ऽ ।ऽऽ।ऽ

दुरन्तदनुजेश्वरप्रकरदुःस्थपृथ्वीभरं
जहार निजलीलया यदुकुलेऽवतीर्याशु यः।
स एष जगतां गतिर्दुरितभारमस्मादृशां
हरिष्यति हरिः स्तुतिस्मरणचाटुभिस्तोषितः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, सगण, जगण, सगण, यगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण है। अष्टम व नवम अक्षर पर यति भी है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त पृथ्वी छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६४॥

भ० र० न० भ० न० ल० गु०

ऽ ।।ऽ।ऽ।। ।ऽ ।।।।।। ऽ

दिङ्मुनिवंशपत्रपतितं भरनभनलगैः॥ ६५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी–दिशो दश, मुनयः सप्त। दिशो मुनयश्चेति समाहारे छन्दोविशेषणम्। यतिस्थानत्वेन च तत्सङ्ख्याकाक्षररूपता विवक्षिता। दिङ्मुनिभिर्वंशपत्रपतितमिति एकं वा पदम्। यतिपदस्य मध्यमस्य लोपेन वा समासः। तत्र यतिस्थानमिति वाऽध्याहारः। दिङ्मुनियतीति पदेऽन्त्यपदलोप इति केचित्। लुप्तविभक्त्यन्तमित्यन्ये। तदुभयं चिन्त्यम्॥ ६५॥

तारा–जिस समवृत्तक सत्रह वर्ण वाले अत्यष्टि भेद में क्रमशः भगण, रगण, नगण, भगण, नगण हो तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण हो और सप्तम व दशम वर्ण पर यति होती है, उस छन्द को 'वंशपत्रपतित' कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका ही छन्द-लक्षण समन्वित है। अतः उस छन्द के उदाहरणस्वरूप भी इसी कारिका को समझें। इसमें क्रमशः भगण, रगण, नगण, भगण, नगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण है। सप्तम व दशम वर्ण पर यति भी है। इससे पूर्ण लक्षण घटित हो जाने से यह उदाहरणस्वरूप भी है। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरणान्तर निम्न पद्य देखें–

ऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।।।।।ऽ

नूतनवंशपत्रपतितं रजनिजललवं
पश्य मुकुन्द मौक्तिकमिवोत्तममरकतगम्।
एव च तं चकोरनिकरः प्रपिबति मुदितो
वान्तमवेत्य चन्द्रकिरणैरमृतकणमिव॥

इस उद्धृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः भगण, रगण, नगण, भगण, नगण व एक लघु, एक गुरु वर्ण हैं। सप्तम व दशम वर्ण पर यति भी चारों चरणों में है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त वंशपत्रपतित छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६५॥

न० स० म० र० स० ल० गु०

।।।।।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ ।।ऽ ।ऽ

रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा॥ ६६॥

नारायणी–षट्सु चतुर्षु सप्तसु च त्रिषु स्थानेषु यतौ हरिणी नाम॥ ६६॥

तारा–जिस सप्तदशाक्षरक समवृत्त के अत्यष्टि भेद में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण हों और क्रमशः षष्ठ, चतुर्थ, सप्तम वर्ण पर यति हो उसे 'हरिणी' छन्द कहते हैं।

विशेष–उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत मूल कारिका ही समझें। क्योंकि लक्षण समन्वित इसी में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण एवं एक-एक लघु-गुरु वर्ण भी निबद्ध है। षष्ठ, चतुर्थ व सप्तम वर्ण पर क्रमविधान भी क्रमशः है। अतः लक्षण घटित कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी प्रस्तुत है। उदाहरणान्तर निर्दिष्ट पद्य में चारों चरणों युक्त देखें–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

। । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ

व्यथितं स विधिनेत्रं नीत्वा ध्रुवं हरिणीगणात्,
व्रजमृगदृशां सन्दोहस्योल्लसन्नयनश्रियम्॥
यदयमनिशं दूर्वाश्यामे मुरारिकलेवरे,
व्यकिरदधिकं बद्धाकांक्षे विलोलविलोचनम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण हैं। साथ ही क्रमशः षष्ठ, चतुर्थ व सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह **हरिणी** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६६॥

म० भ० न० त० त० गु० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्भौ नतौ ताद् गुरू चेत्॥ ६७॥

नारायणी–म-भ-न-त-त-ग-गैर्मन्दाक्रान्ता। जलधिषड्गैश्चतुर्भिः षड्भिरगैः पर्वतैः सप्तभिः॥ ६७॥

तारा–जिस समवृत्त के सप्तदशाक्षर भेद वाले अत्यष्टि छन्द में क्रमशः मगण, भगण, नगण, दो तगण तथा दो गुरु वर्ण अन्त में हों और चतुर्थ, षष्ठ व सप्तम वर्ण पर यति हो उसे '**मन्दाक्रान्ता**' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत मूल लक्षण-कारिका ही लक्षण घटित होने के कारण उदाहरणस्वरूप भी है। इस प्रकार इस कारिका में क्रमशः मगण, भगण, नगण व दो तगण तथा दो गुरु वर्ण निवद्ध है। चतुर्थ, षष्ठ व सप्तम वर्ण पर क्रमशः यति-विधान भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही मूल कारिका **मन्दाक्रान्ता** छन्द का उदाहरण भी हो गया। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य में समझें–

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

प्रेमालापैः प्रियवितरणैः प्रीणितालिङ्गनाद्यै-
र्मन्दाक्रान्ता तदनु नियतं वश्यतामेति बाला।
एवं शिक्षावचनसुधया राधिकायाः सखीनां
प्रीतः पायात् स्मितसुवदनो देवकीनन्दनो नः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, भगण, नगण, दो तगण तथा अन्त में दो वर्ण गुरु हैं। चतुर्थ, षष्ठ व सप्तम वर्ण पर क्रमशः यति भी है। अतः समग्र लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य **मन्दाक्रान्ता** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

न० ज० भ० ज० ज० ल० गु०

। । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ

यदि भवतो नजौ भजजलागुरु नर्कुटकम्॥ ६८॥

नारायणी–सप्तभिर्दशभिश्च यतिः॥ ६८॥

तारा–जिस समवृत्त के सप्तदशाक्षरक अत्यष्टि छन्द में क्रमशः नगण, जगण, भगण व दो जगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण हो और सप्तम, दशम वर्ण पर यति होती है उसे '**नर्कुटक**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका लक्षण समन्वित होने से उदाहरणस्वरूप भी हैं। इसी लक्षणकारिका में क्रमशः नगण, जगण, भगण व दो जगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण भी है और सप्तम, दशम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यहाँ कारिका उदाहरण भी है। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों युक्त निम्न पद्य है–

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ

व्रजवनितावसन्तलतिका विलसन्मधुपं
मधुमथनं प्रणम्रजनवाञ्छितकल्पतरुम्।
विभुमभिनौति कोऽपि सुकृती मुदितेन हृदा
रुचिरपदावलीघटितनर्दटकेन कविः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, जगण, भगण व दो जगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध हैं। सप्तम एवं दशम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य उक्त नर्कुटकम् छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ६८॥

न० ज० भ० ज० ज० ल० गु०

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ

मुनिगुहकार्णवैः कृतयति वद कोकिलकम्॥ ६९॥

नारायणी–मुनयः सप्त, गुहस्य स्कन्दस्य कानि मुखानि षट्, अर्णवाश्चत्वारस्तैः कृता यतिर्यत्र तन्नर्कुटकमेव कोकिलकं वद ब्रूहीति शिष्योपदेशः। यतिभेदेन तस्यैवान्या संज्ञेति ज्ञेयम्। तथा–

रसयुगहययुङ्नौ म्रौ सौ लगौ हि यदा हरिः॥
यदिह नयुगलं ततो वेदरेफैर्महामालिका॥
पञ्चभकारकृताश्वगतिर्यदि चान्तसरर्चिता॥
सुधा तर्कैस्तर्कैर्भवति ऋतुभिर्यो मो नसतसाः॥

अत्र वृत्तसङ्ख्या १३१०७२॥ ६९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस समवृत्त के सप्तदशाक्षरक अत्यष्टि छन्द में क्रमशः पूर्वोक्त नर्कुटकम् छन्द के समान गणविन्यास हो अर्थात् क्रमशः नगण, जगण, भगण तथा दो जगण और अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध हो, किन्तु यति-विधान नर्कुटकम् से भिन्न क्रमशः सप्तम, षष्ठ एवं चतुर्थ वर्ण पर हो तो उसे **'कोकिलक'** छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल छन्दोलक्षणकारिका में लक्षण घटित होने के कारण इसे ही उदाहरणस्वरूप भी समझें। इसी कारिका में नगण, जगण, भगण जगण, जगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध है। सप्तम, षष्ठ एवं चतुर्थ वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने के कारण यही कारिका उक्त कोकिलक छन्द का उदाहरण है। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्नांकित पद्य है–

। ।।। ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ

लसदरुणे क्षणं मधुरभाषणमोदकरं
मधुसमयागमे सरसकेलिभिरुल्लसितम्।
अलिललितद्युतिं रविसुतावनकोकिलकम्
ननु कलयामि तं सखि! सदा हृदि नन्दसुतम्॥

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, जगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध है। सप्तम, षष्ठ एवं चतुर्थ वर्ण पर यति-विधान भी चारों चरणों पर क्रमशः है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य उक्त कोकिलक छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ९९॥

(१८) धृतिः

म० त० न० य० य० य०

ऽ ऽऽ ऽ ऽ । ।।। ।ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

स्याद् भूतर्त्वश्वैः कुसुमितलता वेल्लिता म्तौ नयौ यौ॥ १००॥

नारायणी–भूतामि पञ्च, ऋतवः षट्, अश्वाः सप्त॥ तथा–

मात्सो जौ भरसंयुतौ करिबाणकैर्हरिणप्लुतम्॥
यदिह नयुगलं ततो वदेरैफैर्महामालिका॥
पञ्चभकारकृताश्वगतिर्यदि चान्तसरचिता॥
सुधा तर्कैस्तर्कैर्भवति ऋतुभिर्यो नसतसाः॥

तर्काः षड्।

वर्णाश्चैर्मननततमकैः कीर्तिता चित्रलेखेयम्॥

वर्णाश्चत्वारः।

भाद्रननासौ भ्रमरपदकमिदमभिहितम्॥
शार्दूलं वद मासषट्कयति मः सो जसौ रो मश्चेत्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

मासा द्वादश।

अर्थाश्वाश्वैर्मैभ्नयरयुगैर्वृत्तं मतं केशरम्॥

अर्थाश्चत्वारः।

म्भौ न्जौ भ्रौ चेच्चलमिदमुदितं युगैर्मुनिभिः स्वरैः।

अत्र वृत्तानि २६२१४४॥ १००॥

तारा–समवृत्त के अष्टादशाक्षरात्मक छन्द का नाम धृति है। समवृत्त के जिस अष्टादशाक्षरक धृति नामक भेद के जिस छन्द में क्रमशः मगण, तगण, नगण व तीन यगण हों तथा पञ्चम, षष्ठ, सप्तम वर्ण पर यति-विधान हो उसे **'कुसुमितलतावेल्लिता'** नामक छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल लक्षणकारिका को ही लक्षणसमन्वित होने से उपर्युक्त **'कुसुमितलतावेल्लिता'** का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः मगण, तगण, नगण व तीन यगण तथा पञ्चम, षष्ठ, सप्तम वर्ण पर यति है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उक्त छन्द का उदाहरण भी मान लें। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण पद्य निम्नाङ्कित है–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

क्रीडत्कालिन्दी ललिततलहरी वारिभिर्दाक्षिणात्यै-
र्वातैः खेलद्भिः कुसुमितलतावेल्लिता मन्दमन्दम्।
भृङ्गालीगीतैः किसलयकरोल्लासितैर्लास्यलक्ष्मीं
तन्वाना चेतो रभसतरलं चक्रपाणेश्चकार॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, तगण, नगण व तीन यगण निबद्ध हैं। क्रमशः चारों चरणों में पञ्चम, षष्ठ एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह उपर्युक्त **कुसुमितलतावेल्लिता** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १००॥

(१९) अतिधृति

म० स० ज० स० त० त० गु०

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्॥ १०१॥

नारायणी–अथाऽतिधृतिः (१९)–द्वादशभिः सप्तभिश्च यतिः। तथा–

नयुगललगुरु निरन्तरं यदा स पञ्चचामरः॥
रसर्त्वश्वैर्म्यौ न्सौ ररगुरुयुता मेघविस्फूर्जिता स्यात्॥
भूताश्वाश्वान्तं मतनसररगैः कीर्तितं पुष्पदाम॥
वृत्तं बिम्बाख्यं शरमुनितुरगैर्म्तौ न्सौ ततौ चेद् गुरुः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इयं छाया ख्याता ऋतुरसहयैर्यो मनसा भ्तौ गुरुः॥
रसैः षड्भिर्लोकैर्यमनसजजा गुरुर्मकरन्दिका॥
इनाश्वैर्यायभनयजजगाः कीर्तिता मणिमञ्जरी॥
गजाब्धितुरगैर्जसौ जसतभा गश्चेत्समुद्रतता॥
अत्र वृत्तानि ५२४२८८॥ १०१॥

तारा—समवृत्त के उन्नीस अक्षर वाले छन्द का नाम **अतिधृति** छन्द है। इस अतिधृति नामक छन्द के जिस भेद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तथा दो तगण व एक गुरु वर्ण हो तो वह '**शार्दूलविक्रीडित**' छन्द कहलाता है। इस छन्द के द्वादश व सप्तम वर्ण पर यति-विधान है।

विधान—मूल कारिका छन्द लक्षण से समन्वित होने के कारण यही लक्षण कारिका उक्त **शार्दूलविक्रीडित** छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्नाङ्कित पद्य है—

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

गोविन्दं प्रणमोत्तमाङ्ग! रसने! तं घोषयाऽहर्निशम्
पाणी! पूजयतं मनः! स्मर पदे तस्यालयं गच्छतम्।
एवं चेत् कुरुताखिलं मम हितं शीर्षादयस्तद् ध्रुवं
न प्रेक्षे भवतां कृते भवमहाशार्दूलविक्रीडितम्॥

इस उदाहत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तथा दो तगण व एक गुरु वर्ण निबद्ध है। चारों चरणों में द्वादश एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य उक्त **शार्दूलविक्रीडित** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १०१॥

य० म० न० स० र० र० गु०
।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।।।ऽ ऽ।ऽ ऽ ।ऽ ऽ

रसत्वश्वैर्यौ न्सौ ररगुरुयुतौ मेघविस्फूर्जिता स्यात्॥ १०२॥

तारा—जिस समवृत्त के ऊनविंशति अक्षरात्मक **अतिधृति** नामक भेद में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण तथा दो रगण व एक गुरु वर्ण अन्त में हो तो उसे '**मेघविस्फूर्जिता**' छन्द कहते हैं। इस छन्द के षष्ठ-षष्ठ एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान है।

विशेष—मूल कारिका छन्द-लक्षण ही लक्षण घटित होने के कारण उक्त छन्द **मेघविस्फूर्जिता** का उदाहरण भी है। इस मूल कारिका में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण तथा दो रगण व एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध है। षष्ठ-षष्ठ एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने के कारण यही कारिका उक्त **मेघविस्फूर्जित** छन्द का उदाहरण भी समझें। चारों चरण युक्त पूर्ण उदाहरण निम्नाङ्कित पद्य है—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।।।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ

कदम्बामोदाढ्या विपिनपवनाः केकिनः कान्तकेकाः
विनिद्राः कन्दल्यो दिशि दिशि मुदा दर्दुरा दृप्तनादाः।
निशा नृत्यद्विद्युद्विलसितलसन्मेघविस्फूर्जिता चेत्
प्रियः स्वाधीनोऽसौ दनुजदलनो राज्यमस्मात्किमन्यत्॥

इस उदाहरण पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण तथा दो रगण व अन्त में एक गुरु वर्ण निबद्ध है। षष्ठ-षष्ठ एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त मेघविस्फूर्जित छन्द का पूर्ण उदाहरण हो गया॥ १०२॥

(२०) कृति

म० र० भ० न० य० भ० ल० गु०

ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।।।।।ऽ ऽ ऽ ।।।ऽ

ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुता भ्लौ गः सुवदना॥ १०३॥

नारायणी–अथ कृतिः (२०)–सप्तभिः सप्तभिः षड्भिश्च यतिः॥ १०३॥

तारा–जिस समवृत्त में विंशति अक्षर हों उसे 'कृति' छन्द के नाम से कहा जाता है। विंशति अक्षर वाले कृति छन्द के जिस भेद में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, भगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध हों उसे 'सुवदना' वृत्त कहते हैं। इस सुवदना छन्द में सप्तम-सप्तम एवं षष्ठ वर्ण पर यति-विधान है।

विशेष–छन्द लक्षण वाली मूल कारिका ही छन्द लक्षण समन्वित है। इससे उपर्युक्त सुवदना छन्द की यह लक्षणकारिका ही उदाहरण भी समझ लें। क्योंकि इस कारिका में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, भगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण भी निबद्ध है। सप्तम-सप्तम एवं षष्ठ वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से उक्त लक्षण कारिका ही इस सुवदना छन्द का उदाहरण भी हो गया। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्ननिर्दिष्ट पद्य है–

ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ।।।।।ऽ ऽ ऽ।।।ऽ

प्रत्याहृत्येन्द्रियाणि त्वदितरविषयान्नासाग्रनयना
त्वां ध्यायन्ती निकुञ्जे परतरपुरुषं हर्षोत्थपुलका।
आनन्दाश्रुप्लुताक्षी वसति सुवदना यौगैकरसिका
कामार्ति त्यक्तुकामा ननु नरकरिपो! राधा मम सखी॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, भगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध है। सप्तम-सप्तम एवं षष्ठ वर्ण पर चारों चरणों में यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य उक्त सुवदना छन्द का चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण है॥ १०३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

र० ज० र० ज० र० ज० गु० ल०

ऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽ।ऽ।ऽ। ऽ।ऽ। ऽ। ऽ।

त्री रजौ गलौ भवेदिहेदृशेन लक्षणेन वृत्तं नाम॥ १०४॥

नारायणी–त्रिवारं रगणजगणौ गुरुलघू चेदेतादृशेन लक्षणेन वृत्तं नाम। गुरुलघुक्रमेणेत्यर्थः। अत्र पादान्ते यतिः। 'द्व्लोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' (पा० सू० ६-३-१११) इति त्रिरित्यत्र दीर्घः॥ तथा–

रसैश्वैरश्वैर्यमनननततगैर्गेन शोभेयमुक्ता॥

अत्र सङ्ख्या १०४८५७६॥ १०४॥

तारा–जिस समवृत्त के विंशति अक्षर वाले **कृति** नामक भेद में क्रमशः रगण, जगण, रगण, जगण, रगण जगण तथा एक गुरु, एक लघु वर्ण अन्त में हो उसे '**वृत्त**' नामक छन्द कहते हैं। इस छन्द के पादान्त में ही यति होती है।

विशेष–मूल छन्द लक्षणकारिका ही लक्षण घटित होने के कारण उक्त **वृत्त** छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः रगण, जगण, रगण, जगण, रगण जगण तथा अन्त में एक गुरु, एक लघु वर्ण भी निबद्ध है। यति-विधान भी पादान्त में है। इससे छन्दलक्षण घटित हो जाने से यही लक्षणकारिका उक्त **वृत्त** छन्द का उदाहरण भी बन गया। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य है–

ऽ।ऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽ।ऽ।ऽ ।ऽ।ऽ।ऽ।

चित्तवृत्तिलीलया निसर्गरम्यदेहरूपविभ्रमेण
राजमानसद्वयोविलाससम्पदा कलाकुतूहलेन।
यः समं व्रजाङ्गनाजनैः सुराङ्गनानिभैः सुखं समेत्य
विष्णुरुल्ललास चित्तपद्मकोषषट्पदः स मे सदाऽस्तु॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः रगण, जगण, रगण, जगण, रगण, जगण तथा अन्त में एक गुरु, एक लघु वर्ण भी निबद्ध है। चारों चरणों के अन्त में यति भी है। अतः उक्त छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **वृत्त** छन्द का पूर्ण उदाहरण बन गया॥ १०४॥

(२१) प्रकृतिः

म० र० भ० न० य० य० य०

ऽऽ ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।।।।। ।ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।ऽऽ

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्त्रग्धरा कीर्तितेयम्॥ १०५॥

नारायणी–अथ प्रकृतिः (२१)–म-र-भ-नै-र्यगणत्रयेण च स्त्रग्धरा त्रिवारं मुनिषु यतियुक्ता। सप्तसु सप्तसु सप्तसु यतिमतीत्यर्थः। तथा–

सलिलनिधिर्भवेदिह नजौ भगणो जगणास्त्रयश्च रः॥ अन्येषां मते सिद्धकमिति संज्ञितमेतत्। अत्र सङ्ख्या २०९७१५२॥ १०५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–समवृत्त के एकविंशति अक्षर वाले भेद का नाम '**प्रकृति**' है। जिस एक विंशति अक्षर वाले प्रकृति नामक छन्द में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण हों और प्रत्येक पाद में सप्तम-सप्तम वर्ण पर तीन वार यति विधान हो उसे '**स्रग्धरा**' नामक छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका छन्द लक्षण समन्वित होने से उक्त छन्द का उदाहरण भी है। इसमें क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण निबद्ध हैं। सप्तम-सप्तम वर्ण पर यति भी है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह उक्त **स्रग्धरा** छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य है–

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

व्याकोषेन्दीवराभा कनककमलसत्पीतवासाः सुहासा
बर्हैरुच्चन्द्रकान्तैर्वलयितचिकुरा चारुकर्णावतंसा।
अंसव्यासक्तवंशीध्वनिसुखितजगद्वल्लवीभिर्लसन्ती
मूर्तिर्गोपस्य विष्णोरवतु जगति नः स्रग्धरा हारिहारा॥

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण निबद्ध हैं। चारों चरणों में सप्तम-सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य स्रग्धरा छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १०५॥

(२२) आकृतिः

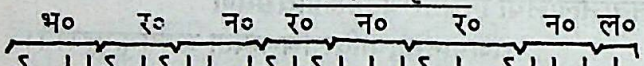

भ्रौ नरना रनावथ गुरुर्दिगर्कविरमं हि भद्रकमिति॥ १०६॥

नारायणी–अथाकृतिः (२२)–तथा–

सप्तभकारकृतावसिती सगुरुः कविभिः कथिता मदिरा॥

अत्र वृत्तानि ४१६४३०४॥ १०६॥

तारा–जिस समवृत्त में द्वाविंशति अक्षर हों उसे '**आकृति**' नामक छन्द कहा जाता है। समवृत्त के द्वाविंशति वाले आकृति छन्द के जिस भेद में क्रमशः भगण, रगण, नगण, रगण, नगण, रगण, नगण तथा अन्त में एक वर्ण गुरु निबद्ध हो और दशम एवं द्वादश अक्षर पर यति-विधान हो उसे '**भद्रक**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल कारिका ही छन्द लक्षण समन्वित होने से इसी लक्षण कारिका को उक्त '**भद्रक**' छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः भगण, रगण, नगण, रगण, नगण, रगण, नगण तथा अन्त में एक वर्ण गुरु निबद्ध है। दशम एवं द्वादश वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द लक्षण घटित हो जाने से मूल कारिका ही उक्त छन्द भद्रक का उदाहरण भी है। चारों चरणों से समन्वित पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य है–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ।।ऽ।ऽ ।।।ऽ।ऽ। ।।ऽ।ऽ।।।ऽ

भद्रकगीतिभिः सकृदपि स्तुवन्ति भवये भवन्तमनघं
भक्तिभरावनम्रशिरसः प्रणम्य तव पादयोः सुकृतिनः।
ते परमेश्वरस्य पदवीमवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुलं
मर्त्यभुवं स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुराङ्गनापरिवृत्ताः॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण, रगण, नगण, रगण, नगण, रगण, नगण तथा अन्त में एक वर्ण गुरु निबद्ध है। दशम एवं द्वादश वर्ण पर यति-विधान भी चारों चरणों में है। अतः छन्द लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **भद्रक** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १०६॥

(२३) विकृतिः

न० ज० भ० ज० भ० ज० भ० ल०गु०

।।।ऽ।ऽ ।।।ऽ।ऽ।। ।ऽ।ऽ।।।ऽ

यदिह नजौ भजौ भ्जभलगास्तदाश्वललितं हरार्कयतिमत्॥१०७॥

नारायणी—अथ विकृतिः (२३)-हराः ११-अर्काः १२॥ १०७॥

तारा—त्रयोविंशति अक्षरात्मक समवृत्त को '**विकृति**' नामक छन्द कहा जाता है। इस त्रयोविंशति-अक्षरात्मक विकृति छन्द के जिस भेद में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, भगण, जगण, भगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध हो और एकादश एवं द्वादश अक्षर पर यति-विधान हो तो उसे '**अश्वललित**' छन्द कहते हैं।

विशेष—मूल लक्षणकारिका लक्षण-समन्वित होने के कारण उक्त अश्वललित छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, भगण, जगण, भगण तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण भी निबद्ध है। एकादश एवं द्वादश वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह मूल कारिका उक्त छन्द अश्वललित का उदाहरण भी समझें। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों से समन्वित निम्नाङ्कित पद्य है-

।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ

विलुलितपुष्परेणुकपिशं प्रशान्तकलिकापलाशकुसुमं
कुसुमनिपातचित्रवसुधां सशब्दनिपतद्द्रुमोत्कशकुनम्।
शकुननिनादनादितककुब्विलोलविपलायमानहरिणां
हरिणविलोचनावधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम्॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, जगण, भगण, जगण, भगण, जगण, भगण तथा अन्त में एक लघु एक गुरु वर्ण निबद्ध है। चारों चरणों में एकादश एवं द्वादश वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्दलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **अश्वललित** छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १०७॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

म० म० त० न० न० न० न० ल०गु०
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ।।। ।।।।।।।।।।ऽ

मत्ताक्रीडा मौ त्रौ नौ न्त्रौ गिति भवति वसुशरदशयतियुता ॥ १०८॥

नारायणी—वसवोऽष्टौ पञ्चदश च तेषु यतिमती। अष्टमे पञ्चदशे च वर्णे यतिः कार्येत्यर्थः। न तु पञ्चसु दशसु चेत्यर्थः। "मत्ताक्रीडा मौ त्रौ नौ न्त्रौ ग् वसुपञ्चदशकौ" (पिं० सू० ७-२८) इति सूत्रे द्विवचननिर्देशात्। अन्यथा हि बहुवचनं स्यात्। अन्यैस्तु वाजिवाहनमेतदुक्तम्॥ अत्र सङ्ख्या ८३८८६०८॥१०८॥

तारा—जिस समवृत्त के त्रयोविंशति अक्षरात्मक विकृति छन्द में क्रमशः मगण, मगण, तगण, नगण, नगण, नगण, नगण, तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध हो और अष्टम एवं पञ्चदश वर्ण पर यति-विधान हो उसे 'मत्ताक्रीडा' नामक छन्द कहते हैं।

विशेष—मूल लक्षणकारिका छन्द-लक्षण समन्वित होने के कारण उक्त छन्द मताक्रीडा का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः मगण, मगण, तगण, नगण, नगण, नगण, नगण तथा अन्त में एक वर्ण लघु, एक वर्ण गुरु भी निबद्ध है। अष्टम एवं पञ्चदश वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से उक्त मूलकारिका प्रस्तुत छन्द मत्ताक्रीडा का उदाहरण भी हुआ। पूर्ण उदाहरण चारों चरणों से युक्त निम्न पद्य है—

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ।। । । ।। । ।।। । । ऽ
मुग्धोन्मीलन्मत्ताक्रीडं मधुसमयसुलभमधुरमधुरलसो
द्गाने याने किञ्चत्स्यन्दत्पदमरुणनयनयुगलसरसिजम्।
रासोल्लासक्रीडत्कम्रव्रजयुवतिवलयविहितभुजरसं
सान्द्रानन्दं वृन्दारण्ये स्मरत हरिमनघचरणपरिचयम्॥

इस उदाहृत पद्य के चारों चरणों में क्रमशः मगण, मगण, रगण, नगण, नगण, नगण, नगण, तथा अन्त में एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध है। सभी चरणों में अष्टम एवं पञ्चदश वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त छन्द मत्ताक्रीडा का पूर्ण उदाहरण है॥ १०८॥

(२४) संकृतिः

म० त० न० स० भ० भ० न० य०
ऽ।।ऽऽ। ।।। ।।ऽ ऽ ।।ऽ। ।। ।। ।ऽऽ

भूतमुनीनैर्यतिरिह भतनाः स्भौ भनयाश्च यदि भवति तन्वी॥ १०९॥

नारायणी—अथ सङ्कृतिः (२४)—भूतानि पञ्च, मुनयः सप्त, इनाः सूर्या द्वादश। अत्र पैङ्गले द्वादशसु द्वादशसु च यतिरुक्ता॥ अत्र सङ्ख्या १६७७७२१६॥ १०९॥

तारा—समवृत्त के चतुर्विंशति अक्षरात्मक भेद का नाम 'संकृति' छन्द है। इस चतुर्विंशति अक्षर वाले समवृत्त के जिस संकृति छन्द में क्रमशः भगण,

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तगण, नगण, सगण, भगण, भगण, नगण, यगण हो तथा पञ्चम, सप्तम एवं द्वादश अक्षर पर यति-विधान हो उसे 'तन्वी' छन्द कहते हैं।

विशेष—मूल लक्षणकारिका ही छन्द-लक्षण से युक्त होने के कारण उक्त तन्वी छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका में क्रमशः भगण, तगण, नगण, सगण, भगण, भगण, नगण, यगण है तथा पञ्चम, सप्तम एवं द्वादश अक्षर पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह मूल कारिका उक्त तन्वी छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न निर्दिष्ट पद्य है—

ऽ।। ऽऽ ।।।।।ऽ ऽ।।ऽ।।।।।।ऽऽ

माधव! मुग्धैर्मधुकरविरुतैः कोकिलकूजितमलयसमीरैः
कम्पमुपेता मलयजसलिलैः प्लावनतोऽप्यविगततनुदाहा।
पद्मपलाशैर्विरचितशयना देहजसंज्वरभरपरिदूनै-
र्निश्वसती सा मुहुरतिपरुषं ध्यानलये तव निवसति तन्वी॥

इस उदाहृत पद्य के सभी पादों में क्रमशः भगण, तगण, नगण, सगण, भगण, भगण, नगण, यगण है। तथा सभी पादों में क्रमशः पञ्चम, सप्तम एवं द्वादश वर्णों पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त छन्द तन्वी का पूर्ण उदाहरण है॥ १०९॥

(२५) अतिकृतिः

भ० म० स० भ० न० न० न० न० गु०

ऽ।।ऽ ऽ ऽ।।ऽ ऽ।।।।।।।।।।।।ऽ

क्रौञ्चपदा भ्मौ स्भौ ननना नाविषुशरवसुमुनिविरतिरिह भवेत्॥ ११०॥

नारायणी—अथाऽतिकृतिः (२५)—इषवः पञ्च, शराः पञ्च, वसवोऽष्टौ, मुनयः सप्त। एतेषु विरतिर्यस्याः सा तथा। अत्र सङ्ख्या ३३५५३४३२॥ ११०॥

तारा—समवृत्त के पञ्चविंशति अक्षरात्मक भेद का नाम 'अतिकृति' है। इस पञ्चविंशति अक्षरात्मक समवृत्त के जिस अतिकृति छन्द में क्रमशः भगण, मगण, सगण, भगण तथा चार नगण एवं एक गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध हो उसे 'क्रौञ्चपदा' छन्द कहते हैं। इस छन्द के क्रमशः पञ्चम-पञ्चम एवं अष्टम, सप्तम वर्ण पर यति-विधान रहता है।

विशेष—मूल कारिका ही छन्द लक्षण से समन्वित होने से उक्त क्रौञ्चपदा छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका में क्रमशः भगण, मगण, सगण, भगण तथा चार नगण एवं अन्त में एक गुरु वर्ण निबद्ध है। पञ्चम-पञ्चम, अष्टम एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण घटित हो जाने से यह मूल कारिका ही उक्त क्रौञ्चपदा छन्द का उदाहरण भी है। चारों पादों वाला पूर्ण उदाहरण निम्नलिखित पद्य है—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ।।ऽ ऽ ऽ ।।ऽ ऽ ।।।।।।।।।।।।।।ऽ
क्रौञ्चपदाली चित्रिततीरा मदकलखगकुलकलकलरुचिरा
फुल्लसरोजश्रेणिविलासा मधुमुदितमधुपरवरभसकरी।
फेनविलासप्रोज्ज्वलहासा ललितलहरिभरपुलकितसुतनुः
पश्य हरेऽसौ कस्य न चेतो हरति तरलगतिरहिमकिरणजा॥

इस उदाहृत पद्य के प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, मगण, सगण, भगण तथा चार नगण है। अन्त में एक गुरु वर्ण निबद्ध है। क्रमशः पञ्चम-पञ्चम, अष्टम एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **क्रौञ्चपदा** छन्द का पूर्ण उदाहरण हो गया॥ ११०॥

(२६) उत्कृतिः

म० म० त० न० न० न० र० स० ल०गु०

ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽऽऽ ।।।।।।।।।।ऽ।ऽ।।ऽ ।ऽ
वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं ममतनयुगनरसलगैर्भुजङ्गविजृम्भितम्॥ १११॥

नारायणी–अथोत्कृतिः (२६)–वसवः ८, ईशाः ११, अश्वाः सप्त। एतैच्छेदेन यत्या युक्तम्॥ १११॥

तारा–समवृत्त के षड्विंशति-अक्षरात्मक भेद का नाम उत्कृति छन्द है। इस षड्विंशति अक्षर वाले उत्कृति छन्द के जिस भेद में क्रमशः दो मगण, एक तगण और तीन नगण, एक रगण, एक सगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध हो; अष्टम, एकादश एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान हो उसे '**भुजङ्गविजृम्भित**' छन्द कहते हैं।

विशेष–मूल लक्षणकारिका को ही छन्द-लक्षण से युक्त होने के कारण उक्त भुजङ्गविजृम्भित छन्द का उदाहरण भी समझें। इस कारिका में क्रमशः दो मगण, एक तगण, तीन नगण, रगण, सगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण निबद्ध है। अष्टम, एकादश एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह कारिका उक्त भुजङ्गविजृम्भित छन्द का उदाहरण हो गया। चारों पादों सहित पूर्ण उदाहरण निम्न पद्य है–

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।।।।।।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ
हेलोदञ्चन्नञ्चत्पादप्रकटविकटनटनभरो रणत्करतालक-
श्चारुप्रेङ्खच्चूडाबर्हः श्रुतितरलनवकिसलयस्तरङ्गितहारधृक्।
त्रस्यन्नागस्त्रीभिर्भक्त्या मुकुलितकरकमलयुगं कृतस्तुतिरच्युतः
पायाद्वश्छिन्दन् कालिन्दीह्रदकृतनिजवसतिबृहद्भुजङ्गविजृम्भितम्॥

इस उदाहृत पद्य के सभी पादों में क्रमशः दो मगण, एक तगण, तीन नगण, एक-एक रगण, सगण तथा एक-एक लघु, गुरु वर्ण अन्त में निबद्ध है। अष्टम, एकादश एवं सप्तम वर्ण पर यति-विधान भी है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य उक्त '**भुजङ्गविजृम्भित**' छन्द का पूर्ण उदाहरण बन गया॥ १११॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

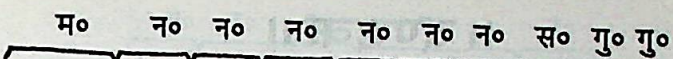
म० न० न० न० न० न० स० गु० गु०
ऽ ऽ ऽ । । ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ दण्डक ॥

न० न० र० र० र० र० र० र० र०

।।।।।।ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ ऽ।ऽऽ।ऽऽ ।ऽ ऽ।ऽ

यदिह नयुगलं ततः सप्तरेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रपातो भवेद् दण्डकः॥ ११३॥

नारायणी—इदानीं समवृत्तप्रसङ्गेन समवृत्तरूपान्दण्डकानाह—**यदीति**। यदेत्यर्थेऽव्ययम्। हेति प्रसिद्धार्थेऽव्ययं वा। नयुगलं नगणद्वयं ततस्तदनन्तरं सप्त रगणाः, स चण्डवृष्टिप्रपातो नाम दण्डकः। इदमेवोदाहरणं पादे। इयं च संज्ञा रातमाण्डव्यव्यतिरिक्तपिङ्गलादिमतेन। ताभ्यां त्वेतस्य संज्ञान्तरमकारि॥ ११३॥

तारा—जिस समवृत्त के प्रत्येक पाद में छब्बीस से अधिक वर्ण हों उसे '**दण्डक**' छन्द के नाम से कहा जाता है। इनके पादाक्षरों की कोई नियत संख्या भी नहीं है। दण्डक शब्द का शब्दार्थ खण्डरहित है। अतः इसके पादान्त में ही यति-विधान रहता है। पादाक्षरों के संख्यानुपात से पृथक्-पृथक् दण्डकों का नामोल्लेख ग्रन्थों में मिलता है। दण्डकों का प्रचलन-क्रम सीमित होने के कारण सामान्यतया दिग्दर्शनमात्र ही प्रस्तुत ग्रन्थ में भी किया जा रहा है।

जिस समवृत्त के सप्तविंशति-अक्षरात्मक दण्डक छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण के पश्चात् सात रगण हों तो वह '**चण्डवृष्टिप्रपात**' नाम दण्डक छन्द कहा जाता है। इसमें पादान्त में यति-विधान है।

विशेष—मूल लक्षणकारिका ही लक्षण-घटित है। अतः उदाहरण भी इसे ही समझें। इस कारिका में क्रमशः दो नगणों के पश्चात् सात रगण निबद्ध हैं। पादान्त में यति-विधान भी है, अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उक्त **चण्डवृष्टिप्रपात** नामक दण्डक छन्द का उदाहरण भी है। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न दण्डक है—

।। । ।। । ऽ। ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ

प्रलयघनघटामहारम्भमेघावलीचण्डवृष्टिप्रपाताकुलं गोकुलं
सपदि समवलोक्य सव्येन हस्तेन गोवर्द्धनं नाम शैलं दधल्लीलया।
कमलनयन! रक्ष रक्षेति जल्पत्रसन्मुग्धगोपाङ्गनाऽऽलिङ्गनानन्दितो
गलदभिनवधातुधाराविचित्राङ्गरागो मुरारातिरस्तु प्रमोदाय नः॥

इस उदाहृत दण्डक छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगण एवं सात रगण निबद्ध हैं। पादान्त में यति-विधान भी है। अतः लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह उक्त **चण्डवृष्टिप्रपात** नामक दण्डक छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ११३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

न० न० र० र० र०
। ।।। ।। ऽ। ऽ ऽ ।ऽ ऽ।ऽ

प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णार्णव-

र० र० र० र० र०
ऽ। ऽऽ। ऽ ऽ। ऽऽ।ऽ ऽ !ऽ

व्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशङ्खादयः॥ ११४॥

नारायणी—यद्यपि प्रतिचरणं विवृद्धो रेफो रगणो येषु ते तथेति व्युत्पत्त्या प्रथमे पादे नौ ततोऽष्टौ रेफाः, द्वितीये नव, तृतीये दश, चतुर्थे एकादशेति वृद्धिरित्यर्थः प्रतीयते, तथापि ग्रन्थान्तरविरोधात्प्रतिदण्डकं चरणेषु विवृद्धा रेफा येष्विति विग्रहेणोत्तरोत्तरदण्डकेषु चरणचतुष्टयेऽप्येकैकरेफवृद्धिरित्यर्थाश्रयणेन ग्रन्थान्तराऽविरोधः कार्यः। ततश्च नाभ्यां रगणाष्टकेन च घटितपादोऽर्णाख्यो दण्डकः, रगणनवकेनाऽर्णवः, दशभिर्व्यालः, एकादशभिर्जीमूतः, द्वादशभिर्लीलाकरः, त्रयोदशभिरुद्दामः, चतुर्दशभिः शङ्खः। सर्वत्रादौ नगणद्वयं कार्यम्। आदिशब्दात्पञ्चदशादिरगणैराराम-सङ्ग्राम-सुराम-वैकुण्ठ-सोत्कण्ठ-सार-कासार-विस्तार-संहार-नीहार-मन्दार-केदार-साधार-सत्कार-संस्कार-माकन्द-गोविन्द-सानन्द-सन्दोह-नन्देत्येवमादिनामका एकैकरगणवृद्ध्या नद्व-योत्तरैकत्रिंशदधिकशतत्रयरगणघटितैकोनसहस्राक्षरपादपर्यन्तं कविप्रयोगानुसारेण दण्डका ज्ञेयाः। यदाहुः—

एकोनसहस्राक्षरपर्यन्ता दण्डकाङ्घ्रयः प्रोक्ताः।
वर्णत्रिकगणवृद्ध्या नद्वितयाद्या महामतिभिः॥ इति।

तथा च रगणघटितदण्डकाः पञ्चविंशत्यधिकशतत्रय (३२५) सङ्ख्या-का भवन्ति। एवं यगणादिघटितदण्डका अपि। तत्र रीतिप्रदर्शनायोदाहरणं ममैष यथा—

त्रिभुवनसुखहेतवे धातृमुख्यामरप्रार्थनासार्थनादर्थिचिन्तामणे!
दशरथकृतयागसौभाग्यतस्तत्तनूजन्मतास्थापितश्रौतमार्गार्गल!॥
मुनिवनगततेाटकाकण्टकीमूलकुद्दालितस्वीयबाणावले! राघव!
कुशिकयजनसिद्धये व्योम कृत्वा शरैश्चण्डवृष्टिप्रपातोऽसि हन्तुं रिपून्॥

एवमर्णादिष्वप्युदाहार्यम्॥ ११४॥

तारा—जिस समवृत्त के सप्तविंशति अक्षरात्मक दण्डक छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः पूर्वकथित चण्डप्रपातदण्डक के समान गणक्रम हो और नगण के पश्चात् एक-एक रगण की वृद्धि होती जाय तो यथाक्रम निम्न भेद '**यमक**' के बनेगें। यथा—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, आठ रगण रहने पर '**अर्ण**' नामक दण्डक होगा। यदि दो नगण नव रगण होंगे तो '**अर्णव**' नामक दण्डक कहलायेगा। इसी प्रकार दो नगण दस रगण होंगे तो '**व्याल**' नामक दण्डक कहेंगे। और दो नगण ग्यारह रगण होंगे तो '**जीमूत**' दण्डक हो जायगा। दो नगण बारह रगण रहने पर '**लीलाकर**' नामक दण्डक कहा जाता है। दो नगण तेरह रगण होने से '**उद्दाम**' नामक दण्डक होता है। और दो नगण चौदह रगण हो जायेंगे तो उसे '**शंख**' नामक दण्डक कहा जायगा। यति-विधान सब के पादान्त में ही होता है। उदाहरणस्वरूप अर्णाख्य दण्डक का उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है-

।।।।।।ऽ।ऽऽ ।ऽ ऽ।ऽऽ।ऽ ऽ।ऽऽ।ऽऽ। ऽऽ।ऽ

जय जय जगदीश! विष्णो! हरे! राम! दामोदर! श्रीनिवासाच्युतानन्त! नारायण! त्रिदशगणगुरो! मुरारे! मुकुन्दासुरारे! हृषीकेश! पीताम्बर! श्रीपते! माधव! गरुडगमन! कृष्ण! वैकुण्ठ! गोविन्द! विश्वम्भरोपेन्द्र! चक्रायुधोक्षज! श्रीनिधे!। बलिदमन! नृसिंह! शौरे! भवाम्बाधिघोराणसि त्वं निमज्जन्तमभ्युद्धरोपेत्य माम्॥

इस उदाहृत दण्डक के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण तथा आठ रगण निबद्ध हैं। पादान्त में यति-विधान भी है। अतः यह **अर्णाख्य** दण्डक का उदाहरण समझें। इसी प्रकार अन्य दण्डकों के उदाहरण की भी कल्पना कर लें॥११४॥

न० न० य० य० य० य० य० य० य०

।।।। ।।।ऽ ऽ।ऽऽ ।ऽऽ। ऽ ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यैः॥ ११५॥

नारायणी-नगणद्वयादुत्तरभाविभिः सप्तभिर्यगणैर्धीरबुद्धिभिः कविभिः प्रचितकसंज्ञको दण्डक उक्तः। प्रचितक इति समभिधा नाम यस्येति विग्रहः। अत्रापि पूर्ववदेकैकयगणवृद्ध्या दण्डकाः कार्याः। यैरित्युपलक्षणम्। अष्टभिरपि गणैः कविप्रयोगानुरोधाद्भोगावलीबिरुदावल्यादिषु दण्डकानामिष्टत्वात् यद्यपि 'शेषः प्रचितः' (पिं. सू. ७-३६) इति सूत्रे वृत्तिकृतारेफाष्टकादिरचितदण्डकपरं शेषशब्दमङ्गीकृत्य रगणघटितानामेव चण्डवृष्टिप्रपातोर्ध्वभाविनां 'प्रचित' इति सामान्यसंज्ञाभिधानार्थतया व्याख्यातम्। अत एव चाह सः-

प्रथमकथितदण्डकश्चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुनेः पिङ्गलाचार्यनाम्नो मतः, प्रचित इति ततः परं दण्डकानामियं जातिरेकैकरेफाभिवृद्ध्या यथेष्टं भवेत्॥ स्वरुचिरचित्तसंज्ञया तद्विशेषैरशेषैः पुनः काममन्येऽपि कुर्वन्तु वागीश्वराः भवति यदि समानसङ्ख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डकः पूज्यतेऽसौ जनैः॥ इति।

तथापि यगणादिदण्डकानामपि कविप्रयुक्तत्वादुक्तरगणरचितदण्डकव्यतिरिक्तयादिकृतदण्डकानामेव शेषशब्दोदिष्टानां प्रचितकसंज्ञा ज्ञापनार्थतां सूत्रस्याभिप्रेत्य

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

व्याख्यात्रन्तरकृतव्याख्यामनुसरतैवमेवादि केदारेणेत्यदोषः। सर्वेषु दण्डकेषु पदान्ते यतिः। श्रुतिसौकर्येण अन्येऽपि दण्डका अन्यैरुक्ताः। यथा–

नयुर्गलगुरु युगावेवं प्रकाराः कवीच्छानुरोधात्तदा यत्र।
वक्ष्यन्त एषोऽपरो दण्डकः पण्डितैरीरितः सिंहविक्रान्तनामा॥
यत्र रेफान्कविः स्वेच्छया पाठसौभाग्यसापेक्षया–
रोपयत्येष धीरैः स्मृतो दण्डको मत्तमातङ्गलीलाकरः॥
लघुर्गुरुः क्रमेण यत्र बध्यते सुधीभिरिच्छया।
स दण्डकस्त्वङ्गशेखरः स्मृतः॥
स्वेच्छया रजौ क्रमेण संनिवेशयत्युदारधीः।
कविः स दण्डकः स्मृतो जगत्यशोकमञ्जरी॥
सगणः सकलः खलु यत्र भवेत्तमिह।
प्रवदन्ति बुधाः कुसुमस्तबकम्॥
यकारैः कवीच्छानुरोधान्निबद्धैः प्रसिद्धो।
विशुद्धोऽपरो दण्डकः सिंहविक्रान्तनामा॥

एवं मेघमालाकुसुमस्तरणोत्तरकामबाणादयो दण्डकाः षड्विंशत्यक्षराधिकाक्षरपादाः कविप्रबन्धानुसारेण ज्ञेयाः। षड्विंशत्यक्षरन्यूनतायां तु पूर्वोक्तासु जातिष्वेवान्तर्भावो यथायोगं भवति॥ ११५॥

इति श्रीमद्भट्टरामेश्वरसूरिसूनुनारायणभट्टविरचितायां
वृत्तरत्नाकरटीकायां समवृत्ताध्यायस्तृतीयः॥

तारा–जिस समवृत्त के सप्तविंशति अक्षरात्मक दण्डक छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः दो नगणों के अनन्तर सात यगण हो, तो वह '**प्रचितक**' नामक दण्डक-छन्द कहा जाता है। इसमें पादान्त में यति-विधान होता है।

विशेष–मूल लक्षणकारिका ही लक्षणघटित है। अतः इसे ही **प्रचितक** का उदाहरण भी समझें। इसमें क्रमशः दो नगणों के पश्चात् सात यगण निबद्ध हैं और पादान्त में यति-विधान भी है। अतएव छन्द-लक्षण पूर्णतः समन्वित है। चार चरण युक्त पूर्ण उदाहरण निम्न दण्डक है–

।। ।। ।।। ऽ ऽ। ऽऽ। ऽ ऽ।ऽऽऽ।ऽऽ। ऽ ऽ।ऽऽ
मुरहर! यदुकुलाम्भोधिचन्द्र! प्रभो! देवकीगर्भरत्न! त्रिलोकैकनाथ!
प्रचितकपटसुरारिव्रजोद्दामदन्ताबलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्र!
चरणनखरसुधांशुच्छटोन्मेषनिःशेषितध्यायिचेतोनिविष्टान्धकार!
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलोच्छेदमेघ! प्रसीद प्रसीद॥

इस उपर्युक्त उदाहृत दण्डक छन्द का प्रत्येक पाद क्रमशः दो नगण के पश्चात् सात यगण और पादान्त में यति से निबद्ध है। अतः छन्द-लक्षण के पूर्णतः समन्वित होने से यह **प्रचितक** दण्डक का सम्पूर्ण उदाहरण है॥ ११५॥

●

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

अर्धसमवृत्तप्रकरणम्

स. स. स. ल. गु. भ. भ. भ. गु.

।।ऽ ।। ऽ ।।ऽ ।ऽ ऽ ।। ऽ ।।ऽ ।।ऽऽ

विषमे यदि सौ सलगा दले, भौ युजि भाद् गुरुकावुपचित्रम्॥ १ ॥

नारायणी–एवं समवृत्तान्यभिधायाऽधुना अर्धसमान्याह–विषमे दले प्रथमे तृतीये च पादे सौ सगणद्वयं सलगाश्च सगणलघुगुरवः, युजि समे द्वितीये चतुर्थे च पादे भौ भगणौ पुनर्भगणस्ततो द्वौ गुरू तदोपचित्रं नाम। अर्धसमत्वाद् द्वितीयार्धमप्येवमेवोदाहार्यम्। एवमग्रेऽपि॥ १ ॥

तारा–पूर्व प्रतिपादित तृतीय अध्याय में समवृत्तों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। सम्प्रति क्रमप्राप्त अर्धसमवृत्तों का विवेचन इस चतुर्थ अध्याय में विस्तार से किया जा रहा है।

तदनुसार जिस छन्द के विषम (प्रथम-तृतीय) पादों में क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण हों, और सम (द्वितीय-चतुर्थ) पादों में क्रमशः तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हों, उसे '**उपचित्र**' छन्द कहते हैं।

विशेष–प्रस्तुत लक्षण-कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इस छन्द के विषम-प्रथम पाद में क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण निबद्ध है। इसी प्रकार सम-द्वितीय पाद में क्रमशः तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण भी है। अतः लक्षण-घटित हो जाने से यह कारिका **उपचित्र** अर्धसम छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चारों पादों वाला पद्य निम्न है–

।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ । ऽ ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ ऽ

मुरवैरिवपुस्तनुतां मुदं हेमनिभांशुकचन्दनलिप्तम्।

।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ । ऽ ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ ऽ

गगनं चपलामिलितं यथा शारदनीरधरैरुपचित्रम्॥

इस उदाहृत छन्द के विषम-पाद (प्रथम-तृतीय) में क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण है और इसी प्रकार समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में क्रमशः तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। अतः उक्त अर्धसम **उपचित्र** छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह छन्द उपचित्रा का उदाहरण है॥ १ ॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भ० भ० भ० गु० गु० न० ज० ज० य०

ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ ऽ ।। ।। ।ऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽऽ

भत्रयमोजगतं गुरुणी चेत्, युजि च नजौ ज्ययुतौ द्रुतमध्या॥ २॥

नारायणी—ओजगतं विषमपादगतं भगणत्रयं गुरुणी चेद् द्वे अक्षरे, युजि समपादे ज-य-गणपरौ-नगणजगणौ चेत्सा द्रुतमध्या नाम। उपचित्राऽऽपातलिका-ऽपरान्तिकेयम्। अत्रापरान्तिकासंनिवेशो भ्रान्तः॥ २॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद (प्रथम-तृतीय) में क्रमशः तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हों, और समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में क्रमशः एक नगण, दो जगण तथा एक यगण हो उसे '**द्रुतमध्या**' छन्द कहते हैं। अर्थात् '**द्रुतमध्या**' छन्द के विषम पादों में एकादश वर्ण तथा समपादों में द्वादश वर्ण होते हैं तथा गणयोजना निर्दिष्ट प्रकार से होती है।

विशेष—छन्द-लक्षण से समन्वित कारिका होने से यह कारिका ही उक्त छन्द '**द्रुतमध्या**' का उदाहरण भी समझें। इस कारिका के विषम पाद-प्रथम-तृतीय में क्रमशः तीन भगण तथा दो गुरु वर्ण हैं। और इसी प्रकार समपाद द्वितीय में क्रमशः एक नगण, दो जगण तथा एक यगण है। लक्षणानुसार विषम में एकादश वर्ण तथा सम में द्वादश वर्ण निबद्ध है। अतः छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह कारिका ही द्रुतमध्या अर्धसम छन्द का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चारों पादों से युक्त निम्न पद्य है—

ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽ ।।।। ऽ।। ऽ।। ।ऽ ऽ

यद्यपि शीघ्रगतिर्मृदुगामी, बहुधनवानपि दुःखमुपैति।

ऽ।। ऽ ।। ऽ।। ऽऽ ।।।। ऽ।। ।ऽ।। ।ऽ ऽ

नातिशया चरिता न च मृद्वी, नृपतिगतिः कथिता द्रुतमध्या॥

इस उदाहृत पद्य के विषम पादों में एकादश वर्ण हैं, जो क्रमशः तीन भगण व दो गुरु से युक्त हैं। इसी प्रकार समपादों (द्वितीय-चतुर्थ) में द्वादश वर्ण हैं और ये क्रमशः एक नगण, दो जगण व एक यगण से युक्त हैं। अतः उक्त अर्धसम छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित होने के कारण यह पद्य '**द्रुतमध्या**' छन्द का उदाहरण है॥ २॥

स० स० स० गु० भ० भ० भ० गु० गु०

।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ऽ ऽ ।। ऽ।। ऽ।। ।। ऽ ऽ

सयुगात् सगुरू विषमे चेत्, भाविह वेगवती युजि भाद् गौ॥ ३॥

नारायणी—विषमे पादे सत्रयं गुरुश्च, युजि समे पादे भगणत्रयं गुरू च, इह छन्दःशास्त्रे वेगवती नाम, आपातलिकैवेयम्॥ ३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद (प्रथम-तृतीय) में क्रमशः तीन सगण व एक गुरु वर्ण हो तथा समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में क्रमशः तीन भगण व दो गुरु वर्ण हों, उसे '**वेगवती**' अर्धसम छन्द कहते हैं। इस प्रकार इसके विषम पादों में दश वर्ण तथा समपादों में एकादश वर्ण होते हैं।

विशेष—लक्षणकारिका में ही छन्द-लक्षण घटित होने के कारण यह कारिका ही उक्त छन्द वेगवती का उदाहरण भी है। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः तीन सगण व एक गुरु वर्ण है। तथा समपाद द्वितीय में क्रमशः तीन भगण व दो गुरु वर्ण हैं। इस प्रकार लक्षण-घटित हो जाने से यह कारिका उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण चार चरणों वाला निम्न है—

।। ऽ। । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ।। ऽ ऽ
स्मरवेगवती व्रजरामा केशववंशरवैरतिमुग्धा।
। । ऽ। । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ
रभसान्न गुरून् गणयन्ती, केलिनिकुञ्जगृहाय जगाम॥

इस उद्धरण के विषम पादों प्रथम-तृतीय में क्रमशः तीन सगण व एक गुरु वर्ण है। तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में क्रमशः तीन भगण व दो गुरु वर्ण हैं। इस प्रकार इसके विषम पादों में दश वर्ण व समपादों में एकादश वर्ण हैं। अतः उक्त छन्द वेगवती का लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य वेगवती छन्द का उदाहरण है॥ ३॥

त० ज० र० गु० म० स० ज० गु० गु०

ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत् म्सौ ज्गौ भद्रविराड् भवेदनोजे॥ ४॥

नारायणी—ओजे विषमे पादे तगणात्परौ जगणरगणौ गुरुश्च, अनोजेऽविषमे समे म-स-ज-ग-गुरुश्च भद्रविराड् भवेत्। औपच्छन्दसिकस्यैवेयं गण-निवेशविशेषे संज्ञा॥ ४॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद प्रथम-तृतीय में क्रमशः तगण, जगण, रगण तथा एक गुरु वर्ण सहित कुल १० (दस) वर्ण हों, और इसी प्रकार समपाद द्वितीय-चतुर्थ में क्रमशः मगण, सगण, जगण व दो गुरु वर्ण सहित कुल एकादश वर्ण हों उसे '**भद्रविराट्**' अर्धसम छन्द कहते हैं।

विशेष—यह लक्षण-कारिका ही छन्द-लक्षण से युक्त है। अतः उक्त छन्द '**भद्रविराट्**' का उदाहरण भी इसी कारिका को समझें। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः तगण, जगण, रगण व एक वर्ण गुरु सहित कुल दस वर्ण हैं। समपाद द्वितीय में क्रमशः मगण, सगण, जगण व दो वर्ण गुरु सहित कुल एकादश हैं। अतः लक्षण घटित हो जाने से यही कारिका उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर निम्न पद्य समझें जो चारों पादों से समन्वित है—

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
यत्पादतले चकास्ति चक्रं, हस्ते वा कुलिशं सरोरुहं वा।
ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
राजा जगदेकचक्रवर्ती, स्याच्छं भद्रविराट् समश्नुतेऽसौ॥

इस उद्धरण के विषम पादों प्रथम-तृतीय में क्रमशः तगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण सहित कुल वर्ण दश हैं। समपादों द्वितीय-चतुर्थ में भी क्रमशः मगण, सगण, जगण व दो गुरु वर्ण हैं। वर्ण सब एकादश हैं। इस प्रकार उक्त छन्द भद्रविराट् का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह भद्रविराट् अर्धसम छन्द का उदाहरण है॥ ४॥

स० ज० स० गु० भ० र० न० गु० गु०
। । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ
असमे सजौ सगुरुयुक्तौ केतुमती समे भरनगाद्गः॥ ५॥

नारायणी—विषमे दले पादे सजसा गणा गुरुश्च, समे भरना गणा गुरू च केतुमती नाम। भरनगादिति समाहारैकवचनम्॥ ५॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद प्रथम-तृतीय में दश वर्ण हों, जो क्रमशः सगण, जगण, सगण व एक गुरु हों तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में एकादश वर्ण क्रमशः भगण, रगण, नगण व दो गुरु हों तो वह 'केतुमती' छन्द कहलाता है।

विशेष—यह छन्दोलक्षण कारिका लक्षण समन्वित होने से उदाहरणस्वरूप भी है। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः सगण, जगण, सगण व एक गुरु वर्ण हैं। तथा समपाद द्वितीय में क्रमशः भगण, रगण, नगण व दो गुरु वर्ण हैं। इस प्रकार विषम पाद में दश वर्ण तथा समपाद में एकादश वर्ण निबद्ध हैं। अतः छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह कारिका ही इस केतुमती छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण चारों पादों सहित निम्न निर्दिष्ट पद्य है-

। । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ
हतभूरिभूमिपतिचिह्नां युद्धसहस्रलब्धजयलक्ष्मीम्।
। । ऽ। ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ। । । ऽ ऽ
सहते न कोऽपि वसुधायां, केतुमतीं नरेन्द्र! तव सेनाम्॥

इस उद्धृत पद्य के विषम पादों प्रथम-तृतीय में दश वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण व एक गुरु हैं तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में एकादश वर्ण क्रमशः भगण, रगण, नगण व दो गुरु हैं। अतः उक्त छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य केतुमती छन्द का उदाहरण है॥ ५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

त० त० ज० गु० गु० ज० त० ज० गु० गु०
ऽ ऽ । ऽ ऽ ।। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत्॥ ६॥

नारायणी—तौ तगणौ जगणगुरू गुरुश्चौजे विषमे पादे, अनोजे समे पादे जतौ ज-त-ज-गगुरवस्तदाख्यानकी नाम॥ ६॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद प्रथम-तृतीय में दो तगण, एक जगण, व दो गुरु वर्ण हों, तथा समपाद द्वितीय-चतुर्थ में जगण, तगण, जगण व दो गुरु वर्ण क्रमशः हों तो उसे '**आख्यानकी**' अर्धसम छन्द कहते हैं। अर्थात् जिसके विषम पादों में 'इन्द्रवज्रा' छन्द का लक्षण घटित हो, तथा समपादों में 'उपेन्द्रवज्रा' छन्द का लक्षण घटित हो, इस '**उपजाति**' विशिष्ट छन्द को अर्धसम संज्ञा भेद में '**आख्यानकी**' नामक छन्द कहते हैं।

विशेष—लक्षणकारिका छन्दोलक्षण विशिष्ट है, इससे 'कारिका' को ही उदाहरण भी समझें। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः दो तगण, एक जगण, व दो गुरु वर्ण हैं। तथा समपाद द्वितीय में क्रमशः जगण, तगण, जगण व दो वर्ण गुरु हैं। अतः छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित है, इससे यही कारिका उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर चारों चरणों से युक्त निम्न पद्य है—

ऽ ऽ । ऽ ऽ। । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
भृङ्गावलीमङ्गलगीतनादोऽर्जुनस्य चित्ते मुदमादधाति।
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
आख्यानकी च स्मरजन्मपाश-महोत्सवस्याश्रवणे क्वणन्ती॥

इस उदाहृत पद्य के विषम पाद (प्रथम-तृतीय) में क्रमशः दो तगण, एक जगण व दो गुरु वर्ण हैं। तथा समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में क्रमशः जगण, तगण, जगण व दो वर्ण गुरु हैं। अतः छन्दोलक्षण घटित हो जाने से उक्त पद्य '**आख्यानकी**' अर्धसम छन्द का उदाहरण है॥ ६॥

ज० त० ज० गु० गु० त० त० ज० गु० गु०
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

जतौ जगौ गो विषमे समे चेत् तौ ज्गौ ग एषा विपरीतपूर्वा॥ ७॥

नारायणी—विषमे ज-त-ज-गगुरवः, समे त-त-ज-गगुरवस्तदैषा आख्यानकी विपरीतशब्दपूर्वा। विपरीताख्यानकीत्यर्थः। अनयोरुपजात्यन्तर्भावेऽपि विशेषसंज्ञाविधानार्थमत्र अर्धसमवृत्ताध्याये पाठः॥ ७॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पाद (प्रथम-तृतीय) में क्रमशः जगण, तगण, जगण व दो गुरु वर्ण हों, तथा समपाद (द्वितीय-चतुर्थ) में क्रमशः दो तगण, एक जगण व दो गुरु वर्ण हों उसे '**विपरीताख्यानकी**' अर्धसम छन्द कहते हैं। अर्थात् जिस छन्द में 'आख्यानकी' छन्द का लक्षण विलोम रूप में घटित होता हो उसे '**विपरीत-आख्यानकी**' छन्द कहना चाहिए।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विशेष–प्रस्तुत छन्दोलक्षणकारिका लक्षण समन्वित होने के कारण उक्त छन्द '**विपरीताख्यानकी**' का उदाहरण भी है। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः जगण, तगण, जगण व दो गुरु वर्ण हैं। समपाद द्वितीय में क्रमशः दो तगण, एक जगण व दो गुरु वर्ण हैं। अतः '**आख्यानकी**' छन्द का विपरीत लक्षण-घटित हो जाने के कारण यह कारिका ही उक्त छन्द '**विपरीताख्यानकी**' का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर निम्न निर्दिष्ट पद्य समझें, जिसमें चारों चरण निबद्ध हैं–

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
अलं तवालीकवचोभिरेभिः स्वार्थं प्रिये साधय कार्यमन्यत्।
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ। ऽ ऽ ऽ ऽ। ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
कथं कथावर्णनकौतुकं स्यादाख्यानकी चेद् विपरीतवृत्तिः॥

इस उद्धृत छन्द के विषम पादों प्रथम-तृतीय में क्रमशः जगण, तगण, जगण व दो गुरु वर्ण हैं, तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में क्रमशः दो तगण, एक जगण व दो गुरु वर्ण हैं। इस प्रकार '**आख्यानकी**' छन्द का विपरीतस्वरूप लक्षण उक्त पद्य में घटित हो जाने के कारण यह '**विपरीताख्यानकी**' अर्धसम छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ ७॥

स० स० स० ल० गु० न० भ० भ० र०
। । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ
सयुगात् सलघू विषमे, गुरुर्युजि नभौ भरकौ हरिणप्लुता॥ ८॥

नारायणी–सगणद्वयात्सगणलघू गुरुश्च विषमपादे, युजि समे पादे न-भ-भ-रा हरिणप्लुता नाम॥ ८॥

तारा–यदि अर्धसम छन्द के विषम पाद में क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण हों और समपाद में क्रमशः एक नगण, दो भगण तथा एक रगण हो। इस प्रकार विषम पादों प्रथम-तृतीय में एकादश वर्ण तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में द्वादश वर्ण हो तो उसे '**हरिणप्लुता**' नामक अर्धसम छन्द कहते हैं।

विशेष–उक्त लक्षण-कारिका छन्दोलक्षण से युक्त होने के कारण यही कारिका '**हरिणप्लुता**' छन्द का उदाहरण भी समझें। इसके विषम पाद प्रथम में क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण हैं, जो एकादश हैं। इसी प्रकार समपाद द्वितीय में द्वादश वर्ण क्रमशः एक नगण, दो भगण तथा एक रगण हैं। अतः छन्दोलक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही उक्त छन्द हरिणप्लुता अर्धसम छन्द का उदाहरण है। चार चरणों से युक्त अन्य उदाहरण निम्न है–

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ
स्फुटफेनचया हरिणप्लुता बलिमनोज्ञतटा तरणेः सुता।
। । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ। ऽ
कलहंसकुलारवशालिनी विहरतो हरति स्म हरेर्मनः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उद्धृत पद्य के विषम पाद प्रथम-तृतीय में एकादश वर्ण क्रमशः तीन सगण तथा एक-एक लघु-गुरु वर्ण है। और समपाद द्वितीय-चतुर्थ में द्वादश वर्ण क्रमशः एक नगण, दो भगण तथा एक रगण है। अतः उक्त छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य अर्धसम 'हरिणप्लुता' छन्द का उदाहरण हुआ॥ ८॥

न० न० र० ल० गु० न० ज० ज० र०

।।। ।।। ऽ। ऽ। ऽ ।।। ऽ। ऽ। ऽ। ऽ

अयुजि ननरला गुरुः समे न्जमपरवक्त्रमिदं ततो जरौ॥ ९॥

नारायणी—विषमे न-न-न-र-लगुरवः, समे न ज-ज-रा-अपरवक्त्रं नाम। अस्य वैतालीयान्तर्गतत्वेऽपि संज्ञान्तरविधानार्थमत्रोक्तिः॥ ९॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पादों प्रथम-तृतीय में एकादश अक्षर क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक-एक लघु-गुरु हों और समपादों द्वितीय-चतुर्थ में द्वादश अक्षर क्रमशः एक नगण, दो जगण, तथा एक रगण हों वह 'अपरवक्त्र' अर्धसम छन्द कहा जाता है। 'वैतालीय' छन्दों के अन्तर्गत पठित होने पर भी यह 'अर्धसम' छन्दों में भी ज्ञापित किया गया है।

विशेष—निर्दिष्ट छन्दोलक्षण कारिका लक्षण समन्वित होने से उक्त अर्धसम 'अपरवक्त्र' छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका के विषम पाद प्रथम में एकादश अक्षर क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक-एक लघु-गुरु है। समपाद द्वितीय में द्वादश अक्षर क्रमशः एक नगण, दो जगण, एक रगण है। अतः लक्षण घटित जाने से यह कारिका ही उक्त अर्धसम छन्द 'अपरवक्त्र' का उदाहरण भी है। उदाहरणान्तर निम्ननिर्दिष्ट पद्य है-

।।।।।।ऽ।ऽ।ऽ ।।।।ऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

स्फुटसुमधुरवेणुगीतिभिस्तव परवक्त्रमवेत्य माधवम्।

।।।।।।ऽ।ऽ।ऽ ।।।।ऽ ।।ऽ।ऽ।ऽ

मृगयुवतिगणैः समं स्थिता व्रजवनिता धृतचित्तविभ्रमा॥

इस उदाहृत पद्य के विषम पादों प्रथम-तृतीय में एकादश अक्षर क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक-एक लघु-गुरु है। और समपादों द्वितीय-चतुर्थ में द्वादश अक्षर क्रमशः एक नगण, दो जगण, तथा एक रगण है। इस प्रकार उक्त छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह पद्य अर्धसम अपरवक्त्र छन्द का उदाहरण है॥ ९॥

न० न० र० य० न० ज० ज० र० गु०

।।। ।।। ऽ।ऽ। ऽऽ।। । ।ऽ ।।ऽ। ऽ ।ऽ ऽ

अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा॥ १०॥

नारायणी—विषमे नयुगरेफयकाराः, युजि समे न-ज-ज-र-गुरवस्तदा पुष्पिताग्रा नाम। इयमप्यौपच्छन्दसिकान्तर्भूतैव विशेषसंज्ञार्थमिहोक्ता॥ १०॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा–जिस अर्धसम छन्द के विषम पादों प्रथम-तृतीय में द्वादश वर्ण क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक यगण हों, और समपादों द्वितीय-चतुर्थ में क्रमशः त्रयोदश वर्ण एक नगण, दो जगण, एक रगण तथा एक गुरु हो वह पुष्पिताग्रा नामक अर्धसम छन्द कहलाता है।

विशेष–छन्दोलक्षण घटित उपर्युक्त कारिका ही उक्त छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका के विषम पाद प्रथम में द्वादश वर्ण क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक यगण है। इसी प्रकार समपाद द्वितीय में त्रयोदश वर्ण क्रमशः एक नगण, दो जगण, एक रगण तथा एक गुरु है। अतः छन्दोलक्षण घटित होने से उक्त कारिका ही इस अर्धसम पुष्पिताग्रा छन्द का उदाहरण भी है। अन्य चारों चरणों सहित उदाहरण निम्न पद्य है–

। । । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । । । ऽ । । ऽ। ऽ । ऽ ऽ
कथमपि विरहः पुरा न सेहे नयननिमीलनखिन्नया ययाते।
। । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । । । ऽ। । ऽ। ऽ। ऽ ऽ
श्वसिति कथमसौ रसालशाखां चिरविरहेण विलोक्य पुष्पिताग्रा॥

इस उदाहरण के विषम पादों प्रथम-तृतीय में द्वादश वर्ण क्रमशः दो नगण, एक रगण तथा एक यगण है। समपादों द्वितीय-चतुर्थ में त्रयोदश वर्ण क्रमशः एक नगण, दो जगण, एक रगण तथा एक गुरु है। इस प्रकार छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से उक्त पद्य इस अर्धसम छन्द पुष्पिताग्रा का उदाहरण है॥१०॥

वदन्त्यपरवक्त्राख्यं वैतालीयं विपश्चितः।
पुष्पिताग्राभिधं केचिदौपच्छन्दसिकं तथा॥ ११॥

नारायणी–विपश्चितः–पण्डिता अपरवक्त्राख्यं वैतालीयमेवेदं वदन्ति। पुष्पिताग्राभिधं छन्द औपच्छन्दसिकमेव केचिदाहुः। इदं स्वस्यापि सम्मतम्। भावस्तूक्त एव॥ ११॥

तारा–छन्दःशास्त्र के विद्वज्जन अपरवक्त्र छन्द को वैतालीय छन्द कहते हैं। और कुछ विद्वज्जन पुष्पिताग्रा छन्द को औपच्छन्दसिक छन्द कहते हैं।

र० ज० र० ज० ज० र० ज० र० गु०
ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

स्यादयुग्मके रजौ रजौ समे तु जरौ जरौ गुरुर्यवात्परा मतीयम्॥१२॥

नारायणी–विषमपादे र-ज-र-याः, समे ज-र-ज-र-गाः, यवाद्यव-शब्दात्परा मती यवमतीत्यर्थः। तथा–

सौ लगौ विषमे यदि, सजजा गुरुर्ललिता समे॥
ओजे तपरौ भरौ जरौ गुरू समे जौ यौ, कीर्तिता बुधैरियं तु षट्पदाख्या॥
रो जरौ जसंयुतौ पदे पदेऽथ युग्मे तरौ जरौ गुरुर्मृगी यवानी॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अयुजि ननभभाः सभकेऽपि तु, नयुगरयुगलं तदा कौमुदी॥
यदि विषमे भवतो नजौ जरौ, सजयाः समे जगुरू मञ्जुसौरभम्।

तथाऽष्टाविंशतिर्लघव एको गुरुरिति विषमः पादः, त्रिंशल्लघव एको गुरुश्चेति समः सा शिखा नाम। इयमेव विपर्यस्तपादा खञ्जा नाम। एते द्वे अपि द्विखण्डकप्रकरणोक्तशिखाखञ्जयोश्छन्दसोः षष्टचक्षरतामङ्गीकृत्य यथाश्रुत-व्याख्यानेन तदतिरिक्ते अत्र ज्ञेये। यदा त्वस्मदुक्तप्रकारेण तत्र सकलशब्दं पादपरमाश्रित्य व्याख्यायते (तदा) तत्रैवैतयोरुक्तत्वान्नात्र वक्तव्यता भवति॥ १२॥

इति श्रीमद्भट्टरामेश्वरसूनुनारायणभट्टविरचितायां वृत्तरत्नाकर-व्याख्यायामर्धसमाध्यायश्चतुर्थः॥

तारा—जिस अर्धसम छन्द के विषम पादों प्रथम-तृतीय में द्वादश वर्ण क्रमशः रगण, जगण, रगण, यगण हों तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में त्रयोदश वर्ण क्रमशः जगण, रगण, जगण, रगण व अन्तिम वर्ण गुरु हों उसे '**यवमती**' अर्धसम छन्द कहते हैं।

विशेष—उक्त छन्दोलक्षण कारिका लक्षण समन्वित होने से इस **यवमती** छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका के विषम पाद प्रथम में क्रमशः रगण, जगण, रगण, यगण निबद्ध है। इसी प्रकार समपाद द्वितीय में क्रमशः जगण, रगण, जगण, रगण तथा अन्तिम वर्ण गुरु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका उदाहरण भी है। चारों चरणों से युक्त पूर्ण उदाहरण निर्दिष्ट पद्य है—

ऽ । ऽ। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
कामकोटिपीठवासिनी मदीये हृदम्बुजेऽम्बुजक्षणा चिरं वसन्ती।
ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ। ऽ । ऽ ऽ
दुःखजालमाशु मूलतो निहत्य स्वकीयपादपङ्कजे रतिं ददातु॥

इस उदाहृत अर्धसम छन्द के विषम पादों प्रथम-तृतीय में द्वादश वर्ण क्रमशः रगण, जगण, रगण, यगण है तथा समपादों द्वितीय-चतुर्थ में त्रयोदश वर्ण क्रमशः जगण, रगण, जगण, रगण व अन्तिम वर्ण गुरु है। अतः पूर्णतः लक्षण घटित हो जाने से यह पद्य उक्त **यवमती** अर्धसम छन्द का पूर्ण उदाहरण है॥ १२॥

●

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

विषमवृत्तप्रकरणम्

पदचतुरूर्ध्वम्

मुखपादोऽष्टभिर्वर्णैः, (८)
परेस्मान्मकरालयैः क्रमाद् वृद्धाः। (१२)
सततं यस्य विचित्रैः पादैः सम्पन्नसौन्दर्यं, (१६)
तदभिहितममलधीभिः पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तम्॥ १ ॥ (२०)

नारायणी—अर्धसमान्यत्राभिधायोद्देशक्रममनुसृत्य विषमवृत्तानि लक्षयति मुखेति। यस्य वृत्तस्य मुखपाद आद्यपादो वर्णाष्टकेन, परे द्वितीयाः पादाः मकरालयैः समुद्रैश्चतुर्भिरक्षरैः क्रमाद् वृद्धैः सततं नैरन्तर्येण स्युस्तद् वृत्तं निर्मलबुद्धिभिः पिङ्गलादिभिः पदचतुरूर्ध्वाभिधमुदितमुक्तम्। किंविशिष्टं तत्। विचित्रैर्विलक्षणैः पादैर्जातं सौन्दर्यं यस्य तत् तादृशम्। अत्र वर्णैरिति सम्पन्न-सौन्दर्यमिति च वदता गुरुलघुर्निवेशनियमो नास्ति। किं तु श्रोतृश्रोत्रसौभाग्यार्थं वर्णवैचित्र्यं विधेयमिति सूचितम्। प्रथमपादोऽष्टाक्षरः, द्वितीयो द्वादशाक्षरः तृतीयः षोडशाक्षरः, चतुर्थो विंशत्यक्षरः कार्य इति फलितोऽर्थः। अत्र चैकद्वित्रि-चतुरङ्कानां परस्परताडनया पादानां परस्परसङ्करे शङ्खचक्रगदापद्मानां परस्परसङ्करे केशवाद्या इव चतुर्विंशतिभेदा भवन्ति। तत्प्रस्तारतो यथा—

८	८	८	८	८	८	१२	१२	१२	१२	१२	१२
१२	१६	२०	१२	१६	२०	८	१६	२०	८	१६	२०
१६	१२	१६	२०	२०	१२	१६	८	१६	२०	२०	८
२०	२०	१२	१६	१२	१६	२०	२०	८	१६	८	१६
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

१६	१६	१६	१६	१६	१६	२०	२०	२०	२०	२०	२०
१२	८	२०	१२	८	२०	१२	८	१२	१६	१६	८
८	१२	८	२०	२०	१२	१६	१६	८	८	१२	१२
२०	२०	१२	८	१२	८	८	१२	१६	१२	८	१६
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अत्रैकैकपङ्क्तिस्थितकोष्ठकचतुष्टयस्थिताङ्कसमानाक्षरक्रमिकपादैरेकैको भेदो ज्ञेयः। तत्र प्रथमभेदे मूलस्थितमुदाहरणम्। द्वितीये तु ममैव यथा–

लोभं लम्भय विलयं (८)
लाभालाभावुभौ भावय समानौ भव धीरः (१६)॥
यत्नाद् गुरुजनगौरवमाचर (१२)
यदि तवास्मिन्नमुष्मिंश्च लोके यशो विशालमाशास्यं स्यात् (२०)॥

इदमेवोदाहरणं पादव्यत्ययेनेतरेषु द्वाविंशतिभेदेषु योज्यम्॥ १॥

तारा–अर्धसम छन्दों के विवेचन के अनन्तर सम्प्रति क्रमप्राप्त विषमपाद छन्दों का सविस्तृत विवेचन किया जा रहा है। जिन छन्दों के सभी पादों में भिन्न-भिन्न वर्णसंख्या हो उन्हें **विषमपाद** छन्द कहते हैं। इस क्रम में सर्वप्रथम **'पदचतुरूर्ध्वम्'** छन्द का विवेचन प्रस्तुत है।

जिस विषमवृत्त के प्रथम पाद में आठ, द्वितीय पाद में बारह, तृतीय में सोलह तथा चतुर्थ में बीस वर्ण हों उसे **'पदचतुरूर्ध्व'** विषमवृत्त कहते हैं। **'पदचतुरूर्ध्व'** अर्थात् प्रत्येक पाद में उत्तरोत्तर चतुर्वर्ण (चार-अक्षर) की वृद्धि हो। विचित्र पादों से युक्त यह वृत्त अनुपम सौन्दर्य-सम्पन्न होता है। इसमें गुरु-लघु नियम नहीं होता।

विशेष–लक्षण-कारिका के प्रत्येक पाद भिन्न-भिन्न वर्णसंख्या में निबद्ध हैं। जो चतुरूर्ध्व क्रम से चारों पादों की शोभा बढ़ा रहे हैं। अतः यह छन्दोलक्षण कारिका ही इस **'पदचतुरूर्ध्व'** छन्द का उदाहरण भी है। क्योंकि कारिका में ही लक्षण भी घटित है। लक्षण घटित होने से यही उदाहरण भी बना।

इस छन्द के वर्ण-संख्या क्रम को पूर्वापर नियोजित करने पर चौबीस प्रकार से छन्द की स्थिति बताई गयी है। यथा–

लोभं लम्भय विलयं, (८ वर्ण)
लाभालाभावुभौ वाक्यसमानौ भव धीरः। (१६ वर्ण)
यत्नाद् गुरुजनगौरवमाचर, (१२ वर्ण)
यदि तवास्मिन्नमुष्मिंश्च लोके यशो विशालमाशास्यं स्यात्॥ (२० वर्ण)

इस छन्द में चतुरूर्ध्वक्रम न होकर भिन्न क्रम है। प्रथम में आठ, द्वितीय में सोलह, तृतीय में बारह तथा चतुर्थ में बीस वर्ण निबद्ध है। अतः यह भी चतुरूर्ध्व विषम पद के अन्तर्गत माना गया है। किन्तु सामान्यतः चतुरूर्ध्व वृद्धिक्रम ही छन्द-लक्षण है॥ १॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ
प्रथममुदितेवृत्ते, (८)
ऽ ऽ
विरचितविषमचरणभाजि। (१२)
ऽ ऽ
गुरुकयुगलनिधन इह सहित आङा (१६)
ऽ ऽ
लघुविरचितपदवितितियतिरिह भवति पीडः॥ २॥ (२०)

नारायणी—एतस्यैव प्रतिपादमन्ते गुरुद्वयनियमे संज्ञान्तरमाह—प्रथममिति। विरचितान्विषमान्विषमसंख्याकाक्षरांश्चरणान्भजति, एवंभूते प्रथमोक्ते पदचतुरूर्ध्वाभिधे वृत्ते इति सर्वोऽनुवादः, गुरुयुग्मं निधनेऽन्ते यस्य तादृशे सति। स्वार्थे कः। इतीत्थं प्रकार आङा उपसर्गेण सहितः पीडः आपीडो भवतीत्यर्थः। कीदृक्। लघुकृतपदरचनया यतिर्यस्मिन्, अन्ते गुरुद्वयस्य नियतत्वादितरभागे लघुविरचितत्वम्। श्रुतिसुखकरी च स्वेच्छया यतिः कार्येति सूचनाय यतिग्रहणम्। विशिष्टानुवादश्चाष्टाद्यक्षरेष्वेव पादेष्वन्ते गुरुद्वयं कार्यम्। न तु ततोऽतिरिक्तमिति सूचनार्थः। आपीड इति संज्ञायाश्छन्दस्यप्रवेशादाङा सहित इत्युक्तिरीतिः। पूर्वोक्तरीत्यापीडे चतुर्विंशतिप्रकारप्रथमभेदोदाहरणमिदम्। आपीड इति सप्तमाष्टमैकादशान्भेदान्व्युत्पाद्यव्युत्पादनाय व्युत्पादयति प्रथमेति त्रिभिः॥ २॥

तारा—जिस विषमवृत्त **पदचतुरूर्ध्व** छन्द के प्रत्येक पाद में अन्तिम दो वर्ण गुरु हों, शेष समस्त वर्ण लघुवर्णविरचित हों तथा पादान्त में यति हो तो ऐसे '**पदचतुरूर्ध्व**' विषमवृत्त को '**आपीड**' कहा जाता है।

विशेष—छन्दोलक्षण कारिका ही उक्त लक्षण समन्वित है, अतः इस '**आपीड**' छन्द का उदाहरण भी यही कारिका समझें। इसके प्रत्येक पाद के अन्तिम दो वर्ण गुरु हैं, शेष समस्त वर्ण लघु निबद्ध हैं, यति भी पादान्त में है, चतुरूर्ध्वक्रम भी पादों में नियोजित है। अतः छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने के कारण यह कारिका उक्त '**आपीड**' छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न है—

ऽ ऽ
कुसुमितसहकार, (८)
ऽ ऽ
हतहिममहिमशुचिशशाङ्के। (१२)
ऽ ऽ
विकसितकमलसरसि मधुसमयेऽस्मिन्, (१६)
ऽ ऽ
चरणयुगलमविकृतमपरमिति कलिका सा॥ (२०)

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहृत पद्य में पदचतुरूर्ध्व क्रम है, समस्त पादों के अन्तिम दो वर्ण गुरु हैं, शेष सभी वर्ण लघु निबद्ध हैं, पादान्त में यति भी है। इस प्रकार छन्दो-लक्षण पूर्णतः घटित है। अतः उक्त पद्य आपीड विषमवृत्त का उदाहरण है॥ २॥

ऽ ऽ
प्रथममितर चरणसमुत्थं, (१२)
ऽ ऽ
श्रयति जगति लक्ष्म। (८)
ऽ ऽ
इतरदितरगदितमपि यदि च तुर्यं (१६)
ऽ ऽ
चरणयुगलकमधिकृतमपरमिति कलिका सा॥ ३॥ (२०)

नारायणी—तुर्यशब्देन श्लोकचतुर्थांशः पाद उच्यते। ततश्च प्रथमं तुर्यं प्रथमश्चरणः इतरचरणसमुत्थं स्वाऽनन्तरद्वितीयचरणस्थं लक्ष्म लक्षणं श्रयति, अवलम्बते इतरत्तुर्यं द्वितीयपादे इतरगदितं स्वाऽव्यवहितप्रथमचरणगतं लक्षणं श्रयति, अपरं चरणद्वयं तृतीयचतुर्थरूपमविकृतं यथावस्थितमित्येवंविधा स आपीड एव सा प्रसिद्धा कलिका। यद्वा स आपीडः प्रथमं प्रथमस्थाने प्रथमपादे द्वितीयपादलक्षणं श्रयति सा कलिका। द्वादशाक्षराष्टाक्षरषोडशाक्षरविंशत्यक्षरैः पादैः क्रमेण घटितेति सम्पिण्डितार्थः पैङ्गले त्वेतस्या मञ्जरीति नाम॥ ३॥

तारा—जिस विषमवृत्त 'आपीड' के प्रथम पाद में बारह वर्ण तथा द्वितीय पाद में आठ वर्ण हों, शेष तृतीय-चतुर्थ पादों में पूर्वोक्त क्रम से सोलह-बीस ही वर्ण रहें, उसे '**कलिका**' विषम वृत्त कहते हैं। अर्थात् मात्र प्रथम व द्वितीय चरणों में वर्णसंख्या का विपर्यय हो, शेष समस्त लक्षण 'आपीड' के समान-अन्तिम दो वर्ण गुरु सभी पादों में रहें, अन्य सभी वर्ण लघु रहें, तृतीय-चतुर्थ पादों में भी सोलह व बीस वर्ण रहें तो इस छन्द को '**कलिका**' विषमवृत्त कहेंगे।

विशेष—उक्त कारिका ही उदाहरणस्वरूप भी है। इसके प्रथम पाद में बारह वर्ण है अन्तिम दो वर्ण गुरु तथा शेष लघु हैं। द्वितीय पाद आठ वर्ण का है, अन्तिम दो वर्ण इसमें भी गुरु हैं, शेष सभी लघु है। तृतीय पाद व चतुर्थ पाद पूर्ववत् सोलह व बीस वर्ण के हैं, अन्तिम दो वर्ण दोनों पादों में गुरु हैं, शेष समस्त वर्ण लघु हैं, इस प्रकार **कलिका** छन्द का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह लक्षण कारिका ही उक्त **कलिका** छन्द का उदाहरण भी है। पिङ्गलसूत्र में इसी का नाम '**मञ्जरी**' है॥ ३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ऽ ऽ
द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता, (१२)
ऽ ऽ
मुखचरणरचितमनुभवति तृतीयः। (१६)
ऽ ऽ
चरण इह हि लक्ष्म, (८)
ऽ ऽ
प्रकृतमपरमखिलमपि यदि भजति लवली सा॥ ४॥(२०)

नारायणी—तृतीयश्चरणो मुखचरणगतं प्रथमचरणस्थं लक्षणमनुभवत्यव-लम्बते। अपरं पादत्रयं प्रकृतमखिलं लक्ष्म आपीडलक्षणं श्रयति तदा लवली नाम।क्रमेण द्वादशाक्षरषोडशाक्षरविंशत्यक्षरपादवतीत्यर्थः।गुरुद्वययुक्तचतुष्टयान्तेति वृत्तपूरणार्थं सामान्यलक्षणमेवानूदितम्॥ ४॥

तारा—जिस विषमवृत्त के तृतीय पाद में प्रथम पाद के समान आठ वर्ण हों तथा शेष समस्त लक्षण 'आपीड' की तरह हों अर्थात् प्रथम में १२ वर्ण, द्वितीय में १६ वर्ण, चतुर्थ में २० वर्ण रहें, अन्तिम दो वर्ण चारों पादों में गुरु रहें तथा शेष समस्त वर्ण चारों पादों में लघु रहें तो उसे 'लवली' विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—उक्त विषमवृत्त 'लवली' का उदाहरण भी कारिका ही है। इस कारिका का तृतीय पाद 'आपीड' के प्रथम पाद के समान आठ वर्ण का है, प्रथम बारह, द्वितीय सोलह और चतुर्थ पाद बीस वर्ण का है। चारों पादों के अन्तिम दो वर्ण गुरु भी हैं, शेष समस्त वर्ण चारों पादों में लघु ही हैं। इस प्रकार छन्दो-लक्षण पूर्णतः कारिका में ही घटित हो जाने के कारण यह लक्षणकारिका उक्त विषमवृत्त 'लवली' का उदाहरण भी बन गया है॥ ४॥

ऽ ऽ
प्रथममधिवसति यदि तुर्यं, (१२)
ऽ ऽ
चरमचरणपदमवसितगुरुयुग्मा। (१६)
ऽ ऽ
निखिलमपरमुपरितनसममिह ललितपादा, (२०)
ऽ ऽ
त्रितयममृतधारा॥ ५॥(८)

नारायणी—प्रथमं चतुर्थं प्रथमश्चरणश्चरमचरणपदं चतुर्थचरणस्थानं प्राप्नोति।चतुर्थो भवतीत्यर्थः। अपरं निखिलं प्रथमादिचरणत्रयमापीडप्रथमपादो-परिगतद्वितीयादिपादसमं तदिदं छन्दोऽमृतधारा नाम। अवसितौ गुरुद्वययुक्तमिति इदमित्यस्य विशेषणं सत्पूर्ववत्स्वरूपकीर्तनार्थम्। ललितपदयुक्तेति वृत्तपूरणाय

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

स्वरूपोक्तिः। द्वादशषोडशविंशत्यष्टाक्षरपादक्रमवती भवतीति सङ्कलितार्थः। यद्यपि वृत्तिकारेण प्रथमस्य तृतीयस्य च प्रथमत्वे लवली, प्रथमस्य चतुर्थत्वे चतुर्थस्य च प्रथमत्वेऽमृतधारेति षोडशद्वादशाष्टाविंत्यक्षरपादक्रमेण विंशतिद्वादशषोडशाष्टाक्षरपादक्रमेण च त्रयोदशैकोनविंशतिभेदयोरेते संज्ञे इति मञ्जर्यां विशेषाऽभावेऽपि उत्तरयोर्विशेष उक्तः, उदाहरणे च तथैव कृते, तथापि 'प्रथमस्य विपर्यासे मञ्जरीलवल्यमृतधाराः' (पिं. सू. ५-२४) इति सूत्रस्य साधारणत्वात्प्रथमपादमात्रविपर्यासोक्तेरितरेषां क्रमाऽभ्यनुज्ञया वा सूत्रस्य मूलकारोक्त एवार्थे तात्पर्यादेवमुक्तम्। आपीडवत्पदचतुरूर्ध्वेऽपि पादव्यत्यासे मञ्जर्याद्या भेदा ज्ञेयाः। यथा आदावेव सकलपादेषु गुरुद्वययुतं पदचतुरूर्ध्वं प्रत्यापीडः। यथा वृत्तौ–

चित्तं मम रमयति
कान्तं वनमिदमुपगिरिणदि॥
कूजन्मधुकरकलरवकृतजनधृति,
पुंस्कोकिलमुखरितसुरभिकुसुमचित्ततरुतति॥

आदावन्ते च गुरुद्वयसहितं तदेवोभयापीडः। पैङ्गले त्वयमपि प्रत्यापीड एव; यथा तत्रैव–

कान्तावदनसरोजं
हृद्यं घनसुरभिमधुरसाढ्यम्॥
पातुं रहसि सततमभिलषति मनो मे
किञ्चिन्मुकुलितनयनमविरमणितरमणीयम्॥

अनयोः पूर्वोक्तविधया चतुर्विंशतित्वमूह्यम्। उदाहरणानि त्वतिविस्तरभयान्नोदाहृतानि स्वयमूह्यानि॥ ५॥

इति पदचतुरूर्ध्वप्रकरणम्॥

तारा–जिस विषमवृत्त के चतुर्थ पाद में 'आपीड' के प्रथम पाद के समान आठ वर्ण हों तथा शेष प्रथम, द्वितीय, तृतीय पाद 'आपीड' के समान ही पदचतुरूर्ध्व क्रम से बारह, सोलह, बीस वर्ण के हों। अन्तिम दो वर्ण समस्त पादों में गुरु हों और शेष सभी वर्ण चारों पादों में लघु हों तो उसे **'अमृतधारा'** विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष–उदाहरणस्वरूप भी उक्त लक्षण-कारिका ही प्रस्तुत है। इस कारिका का चतुर्थ पाद 'आपीड' के प्रथम पाद के समान आठ वर्ण का है। तथा शेष प्रथम, द्वितीय, तृतीय पाद भी 'आपीड' के ही समान चतुरूर्ध्व क्रम से बारह, सोलह व बीस वर्ण के हैं, अन्तिम दो वर्ण चारों पादों में गुरु हैं, शेष समस्त वर्ण सभी पादों में लघु निबद्ध हैं। इस प्रकार छन्दोलक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से उक्त कारिका ही इस **'अमृतधारा'** विषमवृत्त का उदाहरण भी है॥ ५॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

स० ज० स० ल०
।।ऽ।ऽ।।।ऽ।
सजमादिमे सलघुकौ च (१०)

न० स० ज० गु०
।।।।।ऽ।ऽ।ऽ
नसजगुरुकेष्वथोद्गता। (१०)

भ० न० ज० ल० गु०
ऽ।।।।।।ऽ ।।ऽ
त्र्यङ्घ्रिगतभनजला गयुताः (११)

स० ज० स० ज० गु०
।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ
सजसा जगौ चरणमेकतः पठेत्॥ ६॥ (१३)

नारायणी—पाद इति शेषः। आदिमे पादे स-ज-स-लघवः अथाऽनन्तरम्, द्वितीयपादे इत्यर्थः। न-स-ज-गुरुसु सत्सु तृतीयेऽङ्घ्रौ पादे ये भ-न-ज-लघवस्ते गयुता गुरुयुक्ताः कार्या इत्यर्थः। परिशेषाच्चतुर्थे स-ज-सा गणा ज-गुरु च चरणम्। एकवचननिर्देशात्प्रथममेकं चरणमेकत एकीकृत्य द्वितीयेनैत्पठेत्। प्रथमद्वितीयौ पादावविलम्बेन पठेत्। अत्रान्तयतिं न कुर्यादित्यर्थः। सजसमिति द्वन्द्वैकवद्भावः। स्वार्थे कौ। त्रयाणां पूरणेऽङ्घ्रौ गता ये भ-न-ज-लास्ते गयुक्ताः कार्या इति। मध्यमपूरणपदलोपिसमासाश्रयणेन उद्देशविधानाद्वासर्व-विधानाच्च तीयप्रत्ययोत्पत्तिरसामर्थ्यं च न भवतीति ज्ञेयम्। एकत इत्येकशब्दो भावप्रधानस्तृतीयार्थे च तसिः। तथा चैक्येनेत्यर्थः। ल्यब्लोपे पञ्चमी वा। प्रथमं द्वितीयेनैकं विधाय विधाय पठेदित्यर्थः॥ ६॥

तारा—जिस विषम वृत्त के प्रथम पाद में दस वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण तथा एक लघुवर्ण हो, द्वितीय पाद में दश वर्ण क्रमशः नगण, सगण, जगण तथा एक वर्ण गुरु हो, तृतीय पाद में ग्यारह वर्ण भगण, नगण, जगण तथा एक लघु, एक गुरु वर्ण हो, इसी प्रकार चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण तथा एक वर्ण गुरु हो और प्रथम व तृतीय पाद पर यति न हो, अर्थात् दो-दो चरण एक साथ पढ़े जांय उसे 'उद्गता' विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—उक्त लक्षणकारिका को ही छन्दलक्षण समन्वित होने के कारण उदाहरण भी समझें। इस कारिका के प्रथम पाद में दस वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण तथा एक वर्ण लघु है। द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। तृतीय पाद में ग्यारह वर्ण भगण, नगण, जगण व एक-एक वर्ण लघु-गुरु है। चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। प्रथम व तृतीय पाद पर यति भी नहीं है। दो-दो पाद एक

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

साथ पढ़े जा रहे हैं। इस प्रकार छन्द-लक्षण कारिका में ही घटित हो जाने से यह कारिका प्रस्तुत 'उद्गता' विषमवृत्त का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण-निर्दिष्ट पद्य देखें-

।।ऽ।ऽ।।।ऽ।
मृगलोचना शशिमुखी च (१०)
।।।।।ऽ।ऽ।ऽ
रुचिरदशना नितिम्बिनी। (१०)
ऽ।।।।।।ऽ।।ऽ
हंसललितगमना ललना (११)
।।ऽ।ऽ।। ।ऽ।ऽ।ऽ
परिनीयते यदि भवत्कुलोद्गता॥ (१३)

इस उदाहृत पद्य के प्रथम पाद में दश वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण व एक वर्ण लघु है। द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। तृतीय पाद में ग्यारह वर्ण भगण, नगण, जगण व एक-एक लघु-गुरु वर्ण है। चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। प्रथम तथा तृतीय पाद पर यति भी नहीं है। अतः उक्त लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'उद्गता' विषमवृत्त का उदाहरण है॥ ६॥

स० ज० स० ल०
।।ऽ।ऽ ।।। ऽ।
चरणत्रयं भजति लक्ष्म (१०)

न० स० ज० गु०
।। ।।।ऽ।ऽ।ऽ
यदि सकलमुद्गतागतम्। (१०)

र० न० भ० गु०
ऽ।ऽ ।।। ऽ।।ऽ
नौ भगौ भवति सौरभकं (१०)

स० ज० स० ज० गु०
।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ
चरणे यदीह भवतस्तृतीयके (१३)॥ ७॥

नारायणी-स्वार्थे कः। तृतीये चरणे नौ रगणनगणौ भ-गुरु च भवतः। चरणत्रयपरिशेषात्प्रथमद्वितीयचतुर्थं रूपम् उद्गतास्थितं समग्रं लक्षणं भजति, तदेह शास्त्रे सौरभकं भवतीति व्यवहितान्वयाऽध्याहाराभ्यामर्थः॥ ७॥

तारा-जिस विषमवृत्त के तृतीय पाद में दश वर्ण क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा एक वर्ण गुरु हो और शेष सभी तीनों प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ चरण 'उद्गता' छन्द के समान हों, अर्थात् प्रथम पाद में दस वर्ण सगण, जगण, सगण व एक वर्ण लघु हो, द्वितीय पाद में दस वर्ण नगण, सगण, जगण व एक वर्ण

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गुरु हो, इसी प्रकार चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु हो तो उसे 'सौरभक' विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—लक्षण कारिका छन्दोलक्षण घटित होने से उक्त 'सौरभक' छन्द का उदाहरण भी है। इस कारिका के तृतीय पाद में दश वर्ण क्रमशः रगण, नगण, भगण तथा एक वर्ण लघु है। शेष प्रथम, द्वितीय व चतुर्थ तीनों पाद 'उद्गता' छन्द के समान प्रथम पाद में दस वर्ण सगण, जगण, सगण व एक वर्ण लघु है, द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है, चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। इस प्रकार लक्षण घटित हो जाने से उक्त कारिका ही प्रस्तुत छन्द सौरभक विषमवृत्त का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न पद्य है—

।। ऽ । ऽ । ।।ऽ ।
विनिवारितोऽपि नयनेन (१०)
।।। ।। ऽ । ऽ ।ऽ
तदपि किमिहागतो भवान्। (१०)
ऽ । ऽ । ।। ऽ ।।ऽ
एतदेव तव सौरभकं (१०)
।।ऽ । ऽ । ।। ऽ । ऽ । ऽ
यदुदीरितार्थमपि नावबुध्यते॥ (१३)

इस उदाहृत पद्य के तृतीय पाद में दश वर्ण क्रमशः रगण, नगण, भगण व एक वर्ण गुरु है। शेष प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ पाद 'उद्गता' छन्द के समान प्रथम में दश वर्ण सगण, जगण, सगण व एक वर्ण लघु है, द्वितीय में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है, चतुर्थ में तेरह वर्ण सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। इस प्रकार छन्द-लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य प्रस्तुत 'सौरभक' विषमवृत्त का उदाहरण है॥ ७॥

स० ज० स० ल०
।।ऽ । ऽ । ।।ऽ ।
नयुगं सकारयुगलं च (१०)
न० स० ज० गु०
।।। ।।ऽ । ऽ । ऽ
भजति चरणं तृतीयकम्। (१०)
न० न० स० स०
।।। ।।। ।।ऽ ।।ऽ
तदुदितमुरुमतिभिर्ललितं (१२)
स० ज० स० ज० गु०
।। ऽ । ऽ । ।। ऽ । ऽ । ऽ
यदि शेषमस्य खलु पूर्वतुल्यकम्॥ ८॥ (१३)

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी—तृतीयपादे न-न-स-साः, शेषं तृतीयान्यच्चरणत्रयं पूर्वोक्तोद्गतावत्तदा बहुदर्शिभिर्ललितं नामोक्तम्। मतेर्विषयबाहुल्येनोरुता न तु स्वतः। अन्यथा स्थूलबुद्धित्वोक्त्या निन्दैव स्यात्। स्वार्थे कौ। तथोद्गतायाः प्रथमतृतीयपादव्यत्यये मन्थरा नाम। उदाहरणमूह्यमेव॥ ८॥

इति वृत्तरत्नाकरटीकायामुद्गताप्रकरणम्

तारा—जिस विषमवृत्त के तृतीय पाद में बारह वर्ण क्रमशः दो नगण, दो सगण हों तथा शेष तीनों पाद 'उद्गता' के समान हों अर्थात् प्रथम पाद में क्रमशः दश वर्ण सगण, जगण, सगण व एक लघु हो, द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक गुरु हो तथा चतुर्थ पाद में तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक गुरु हो तो उसे 'ललित' विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—प्रस्तुत लक्षणकारिका को ही छन्दोलक्षण समन्वित होने के कारण उक्त छन्द 'ललित' का उदाहरण भी समझें। इस कारिका के तृतीय पाद में बारह वर्ण क्रमशः दो नगण, दो सगण हैं, तथा शेष सभी पाद 'उद्गता' के समान प्रथम पाद में दश वर्ण सगण, जगण, सगण व एक लघु है, द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक गुरु है, चतुर्थ पाद में भी तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। अतः लक्षण घटित हो जाने से यह कारिका उक्त छन्द 'ललित' का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न-निर्दिष्ट पद्य समझें—

।।ऽ।ऽ।।ऽ।
सततं प्रियंवदमनून- (१०)
।।।।।ऽ।ऽ।ऽ
ममलहृदयं गुणोत्तरम्। (१०)
।।।।।।।ऽ।।ऽ
सुललितमतिकमनीयतमं (१२)
।।ऽ।ऽ। ।। ऽ। ऽ।ऽ
पुरुषं त्यजन्ति न तु जातु योषितः॥ (१३)

इस उदाहृत पद्य के तृतीय पाद में बारह वर्ण क्रमशः दो नगण, दो सगण हैं। शेष सभी पाद 'उद्गता' के समान हैं। अर्थात् प्रथम पाद में दश वर्ण सगण, जगण, सगण व एक लघु है, द्वितीय पाद में दश वर्ण नगण, सगण, जगण व एक गुरु है। चतुर्थ पाद में भी तेरह वर्ण क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण व एक वर्ण गुरु है। इस प्रकार 'ललित' विषमवृत्त का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य उक्त छन्द का उदाहरण है॥ ८॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

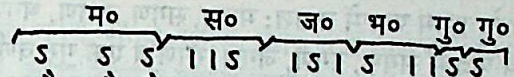

म्सौ ज्भौ गौ प्रथमाङ्घ्रिरेकतः पृथगन्यत् (१४)

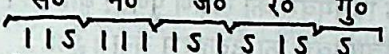

त्रितयं सनजरगास्तथा ननौ सः। (१३)

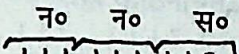

त्रिनपरिकलितजयौ (६)

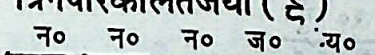

प्रचुपितमिदमुदितमुपस्थितपूर्वम्॥ ६॥ (१५)

नारायणी—म-स-ज-भ-गगुरवः प्रथमपादः। स चैकः पृथक्पठनीयः, न तूद्गतादिवद् द्वितीयेनैकीकृत्येत्यर्थः। प्रथमार्थे तसिः। अन्यच्चरणत्रयं कथ्यत इति शेषः। स-न-ज-र-गुरुभिर्द्वितीयः पादस्तदनन्तरं तृतीयपादे न-नौ स-गणश्च। त्रिभिर्नगणैः परिकलितौ सहितौ ज-यौ गणौ चतुर्थे पादे। इदं छन्द उपस्थितपदपूर्वं प्रचुपितम्। उपस्थितप्रचुपितमित्यर्थः। अन्यस्तु प्रथमोऽङ्घ्रिरेकः केवलः पठनीयः। अन्यत्तु चरणत्रयं पृथक्कथनाद्भिन्नत्वेनैकीकृत्य पठनीयम्। न तु तत्प्रतिचरणान्तं विरामः कार्यः, ततः 'श्लोकार्धे तु विशेषतः' इत्यस्यापवादोऽयमिति व्याचख्यौ॥ ६॥

तारा—जिस विषमवृत्त के प्रथम पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, भगण तथा दो गुरु वर्ण हों, द्वितीय पाद में सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण हो, तृतीय पाद में दो नगण व एक सगण हो तथा चतुर्थ पाद में क्रमशः तीन नगण, एक जगण व एक यगण हो, उसे **'उपस्थितप्रचुपित'** विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—उक्त छन्दोलक्षण कारिका ही लक्षणघटित है, इससे यह प्रस्तुत छन्द के उदाहरणस्वरूप भी है। इस कारिका के प्रथम पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण है। द्वितीय पाद में सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण है। तृतीय पाद में दो नगण व एक सगण है। चतुर्थ पाद में तीन नगण, एक जगण व एक यगण है। इस प्रकार छन्दोलक्षण कारिका में ही पूर्णतः घटित हो जाने से उक्त छन्द का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न पद्य है—

रामाकामकरेणुकामृगायतनेत्रा
हृदयं हरति पयोधरावनम्रा।
इयमतिशयसुभगा
बहुविधनिधुवनकुशला ललिताङ्गी॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इस उदाहृत पद्य के प्रथम पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण हैं। द्वितीय पाद में सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण हैं। तृतीय पाद में दो नगण व एक सगण हैं। चतुर्थ पाद में क्रमशः तीन नगण, एक जगण व एक यगण है। अतः उक्त विषमवृत्त का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह पद्य 'उपस्थितप्रचुपित' विषमवृत्त का उदाहरण बना॥ ९॥

म० स० ज० भ० गु० गु०

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

नौ पादेऽथ तृतीयके सनौ नसयुक्तौ (१४)

स० न० ज० र० गु०

। । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

प्रथमाङ्घ्रिकृतयतिस्तु वर्धमानम्। (१३)

न० न० स० न० न० स०

। । । । । । । । ऽ । । । । । । । ऽ

त्रितयमपरमपि पूर्वसदृशमिह भवति (१८)

न० न० न० ज० य०

। । । । । । । । । ऽ । । ऽ ऽ

प्रततमतिभिरिति गदितं लघुवृत्तम्॥ १०॥ (१५)

नारायणी—तृतीयपादे नौ नगणौ, अथ ततः स-नौ सगणनगणौ नसगणाभ्यां युक्तौ एवं षड् गणा भवन्ति। अपरं पादत्रयं प्रथमद्वितीयचतुर्थरूपमुपस्थित-प्रचुपिततुल्यमेव भवति। इत्यमुना प्रकारेण प्रसिद्धधीभिर्लघु सुन्दरं वर्धमानं नाम वृत्तमुदितमुक्तम्। प्रथमाङ्घ्रौ कृतया यत्या प्रस्तूयते प्रशस्यते प्रशस्ततया पठ्यते तत्तादृगिति वर्धमानबिशेषणम्। तुगभावस्तु 'आगमजमनित्यम्' इति स्मरणात्। तु इतिं भिन्नपदे तु यतिरित्यन्तं पुँल्लिङ्गं स्त्रीलिङ्गं वाऽनन्वितं स्यात्। यतीहेति तु पाठो निर्दोषः। अयं च पूर्वोक्तानुवाद एवेति व्याख्याद्वयं तद्वदेव ज्ञेयम्॥ १०॥

तारा—जिस विषमवृत्त के तृतीय पाद में क्रमशः दो नगण, एक सगण, दो नगण तथा एक सगण हो, और अन्य सभी पादों में प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ में पूर्ववृत्त 'उपस्थितप्रचुपित' के समान स्थिति हो, अर्थात् प्रथम में मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण हों, द्वितीय पाद में सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण हो चतुर्थ में तीन नगण, एक जगण व एक यगण हो तो उसे 'वर्धमान' विषमवृत्त कहते हैं।

विशेष—लक्षणकारिका छन्दोलक्षण से युक्त है, अतः उक्त छन्द 'वर्धमान' का उदाहरण भी इसे ही मानें। इसके तृतीय पाद में अट्ठारह वर्ण क्रमशः दो नगण, एक सगण, दो नगण तथा एक सगण है। तथा शेष समस्त पाद पूर्ववृत्त 'उपस्थितप्रचुपित' के समान हैं। अर्थात् प्रथम में चौदह वर्ण

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

क्रमशः मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण हैं। द्वितीय पाद में सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण हैं। चतुर्थ में तीन नगण, एक जगण व एक यगण है। इस प्रकार छन्दोलक्षण घटित हो जाने से यह कारिका ही उस विषमवृत्त 'वर्धमान' का उदाहरण भी है। अन्य उदाहरण निम्न-निर्दिष्ट देखें-

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ ऽ
बिम्बोष्ठी कठिनोन्नतस्तनावनताङ्गी (१४)
। । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
हरिणी शिशुनयना नितम्बगुर्वी। (१३)
। । । । । । । । ऽ । । । । । । । । ऽ
मदकलकरिगमना परिणतशशिवदना (१८)
। । । । । । । । । । । ऽ । । ऽ ऽ
जनयति मम मनसि मुदं मदिराक्षी॥ (१५)

इस उदाहृत छन्द के तृतीय पाद में अट्ठारह वर्ण क्रमशः दो नगण, एक सगण, दो नगण तथा एक सगण है। शेष तीनों पाद प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ 'उपस्थितप्रचुपित' के समान हैं। अर्थात् प्रथम पाद में क्रमशः चौदह वर्ण मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण हैं। द्वितीय पाद में तेरह वर्ण सगण, नगण, जगण, रगण व एक गुरु वर्ण है, चतुर्थ पाद में तीन नगण, एक जगण व एक यगण सहित पन्द्रह वर्ण हैं। इस प्रकार उक्त विषमवृत्त 'वर्धमान' का लक्षण पूर्णतः घटित हो जाने से यह प्रस्तुत वृत्त का उदाहरण बना॥ १०॥

म० स० ज० भ० गु० गु०
ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ ऽ
अस्मिन्नेव तृतीयपादके तजराः स्युः

स० न० ज० र० गु०
। । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
प्रथमे च विरतिरार्षभं वदन्ति।

त० ज० र०
ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ
तत् शुद्धविराट् पुरः स्थितं

न० न० न० ज० य०
। । । । । । । । । ऽ । ऽ ऽ
त्रितयमपरमपि यदि पूर्वसमं स्यात्॥ ११॥

नारायणी-अस्मिन्वर्धमाने एव उपस्थितप्रचुपिते वा तृतीयपादे यदि त-ज-र-गणात्रयः स्युरपरं च चरणत्रयमुपस्थितप्रचुपितवत्स्यात्, तच्छुद्धविराडिदं पुरः स्थितं पूर्वं वर्तमानं यस्य तादृशमार्षभं शुद्धविराडार्षभं नाम ब्रुवन्ति वृद्धाः। संज्ञाया वृत्तेऽप्रवेशादुक्ते रीतिरियं प्रथमे पादे यतिरिति पूर्ववदेवार्थः। पैङ्गले तु

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

शुद्धविराड्वृषभमिति संज्ञा। केचित्तु प्रथमे पादे यतावार्षभम्। यदा तु प्रतिपादं यतिस्तदा शुद्धविराडादिकं तदेव यतिभेदाच्छन्दोद्वयमेव पृथग्वदन्ति॥ ११॥

इत्युपस्थितप्रचुपितप्रकरणम्॥

तारा–जिस विषमवृत्त के तृतीय पाद में क्रमशः तगण, जगण तथा रगण हो और अन्य शेष समस्त पादों–प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ पादों में पूर्ववृत्त **'उपस्थित-प्रचुपित'** के समान गणयोजना हो, अर्थात् प्रथम पाद में क्रमशः चौदह वर्ण मगण, सगण, जगण, भगण व दो गुरु वर्ण हों; द्वितीय पाद में तेरह वर्ण सगण, नगण, जगण, रगण व एक वर्ण गुरु हो; चतुर्थ पाद में क्रमशः पन्द्रह वर्ण तीन नगण, एक जगण व एक यगण हो, तो इसे **'शुद्धविराडार्षभ'** विषमवृत्त कहते हैं। इसके प्रथम पाद के अन्त में यति भी होती है। 'पिंगलसूत्र' में इसे **'शुद्धविराड्वृषभ'** छन्द के नाम से कहा गया है। मतान्तर से प्रथम पाद में यति होने पर **'आर्षभवृत्त'** तथा प्रत्येक पाद में यति रहने पर **'शुद्धविराड्वृत्त'** के प्रकार से पृथक्-पृथक् दो छन्द माने जाते हैं॥ ११॥

विषमाक्षरपादं वा पादैरसमं दशधर्मवत्।
यच्छन्दो नोक्तमत्र गाथेति तत्सूरिभिः प्रोक्तम्॥ १२॥

नारायणी–अत्र ग्रन्थेऽनुक्तानि च्छन्दांसि सामान्यसंज्ञया गृह्णाति–विषमाण्यक्षराणि येषु तादृशाः पादा यस्य तत्। तथा अक्षराणां वैषम्यं च पादेषु गुरुलघुक्रमनियमसाम्याभावात्सङ्ख्यासाम्याभावाच्च। वा अथवा। पादैरसमं स्वीयैः पादैः कृत्वा चतुःसङ्ख्याकपादैरन्यवृत्तैरतुल्यं त्रिपञ्चषडादिपादमिति यावत्। न तु समसङ्ख्याकपादरहितमित्यर्थः। षट्पदाद्यसंग्रहापत्तेः। अत एव–

शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः। (वृ० र० १-१८)

इति प्रागुक्तम्। विषमाक्षरपादत्वं पदचतुरूर्ध्वादीनामप्यस्तीति तेषां गाथात्वं निवारयितुमाह–**यदिति**। अत्र यच्छन्दो विशेषतो नोक्तं तदित्यर्थः। इदं चावृत्त्या स्वातन्त्र्येणाऽपि योज्यम्। तेन समाक्षरपादानां समपादानां च कुड्मलदन्त्यादीनामपि गाथात्वं सिध्यति। अत एव 'अत्रानुक्तं गाथा' (पिं. सू. ८-१) इति सम्मुग्धाकारेण सूत्रितं पिङ्गलेन। विषमाक्षरपादस्य गाथात्वेऽष्टदशसप्तनवाक्षरमूलकारिकैर्वोदाहरणम्। पादैरसमत्वे उदाहरणमाह–**दशधर्मवदिति**। दशधर्मशब्दयोगाल्लक्षणया भारतस्या षट्पदा गाथा दशधर्मशब्देनोच्यते। सा यथा–

दश धर्मं न जानन्ति धृतराष्ट्र! निबोध तान्।
मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः श्रान्तः क्रुद्धो बुभुक्षितः॥
त्वरमाणश्च भीरुश्च लुब्धः कामी च ते दश। इति।

असमपादानां दशाष्टादशादिपदानां नाटकादिस्थनान्द्यादीनामप्यनेन गाथात्वमुक्तं भवति। यथोक्तम्–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

शब्दतो वार्थतो वापि मनाक्काव्यार्थसूचना।
यत्राष्टभिर्वा दशभिरष्टादशभिरेव वा॥
षड्विंशत्या पदैर्वापि सा नान्दी परिकीर्तिता। इति।

'यच्छन्दो नोक्तम्' इत्यस्य स्वातन्त्र्येण व्याख्याने समानामपि गाथात्वं भवति। तत्र कियतीनां वृत्त्यादिपर्यालोचनयोदाहरणानि सलक्षणानि कथ्यन्ते। तत्र त्रिष्टुभि–'भतनगगुरुभिः कुड्मलदन्ती नाम'। यथा–

कुड्मलदन्ती विकटनितम्बा किन्नरकण्ठी लघुतरमध्या।
बिम्बफलोष्ठी मृगशिशुनेत्रा मित्र! भवन्तं सुखयतु कान्ता॥

अत्र पञ्चभिः षड्भिश्च यतिः। जगत्याम्–'नजजरैर्वरतनुः'। यथा–

अयि! विजहीहि दृढोपगूहनं त्यज नवसङ्गमभीरु! वल्लभम्।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते वरतनु! सम्प्रवदन्ति कुक्कुटाः॥

षड्भिः षड्भिश्च यतिः। 'मभसमैर्जलधरमाला'। यथा–

धत्ते शोभां कुवलयदामश्यामे शैलोत्सङ्गे जलधरमाला नीला।
विद्युल्लेखाकनकधृतालङ्कारा क्रीडासुप्ता युवतिरिवाङ्के पत्युः॥

चतुर्भिरष्टाभिश्च यतिः। 'नौ रौ गौरी'। यथा–

प्रणमत चरणारविन्दद्वयं त्रिभुवननमितस्य गौरीपतेः।
सकृदपि मनसैव यः सेवितः प्रवितरति यथेष्टमष्टौ गुणान्॥

एतस्या एव गौर्या दण्डकात्प्रागेकैकरेफवृद्धौ नामान्तराणि भवन्ति॥ 'भतनसा ललना।' तथा–

या कुचगुर्वी मृगशिशुनयना पीननितम्बा मदकरिगमना।
किन्नरकण्ठी सुललितदशना सा तव सौख्यं वितरतु ललना॥

पञ्चभिः सप्तभिश्च यतिः। अतिजगत्याम् 'सजसजगैः कनकप्रभा'। यथा–

कनकप्रभा पृथुनितम्बशालिनी विपुलस्तनी हरिणशावकेक्षणा।
इयमङ्गना नयनयोः पथि स्थिता कुरुते न कस्य मदनातुरं मनः॥

'ननतनगुरुभिः कुटिलगतिः'। यथा–

अधरकिसलये कान्तदन्तक्षते हरिणशिशुदृशां नृत्यति भ्रुयुगम्।
ध्रुवमिदमुचितं यद्विपत्तौ सतामतिकुटिलगतेः स्यान्महानुसत्वः॥

सप्तभिः षड्भिश्च यतिः। शक्वर्याम्–'भजसनैर्गुरुभ्यां च वरसुन्दरी'। यथा–

स्वादुशिशिरोज्ज्वलजलैः सुपरिपूर्णं
वीचिचयचञ्चल - विचित्रशतपत्रम्॥
हंसकलकू - जितमनोहरतटान्तं
पश्य वरसुन्दरि! सरोवरमुदारम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

'मभनयगगैः कुटिलम्'। यथा–

अध्वन्यानां जनयति सुखमुच्चैः कूजन्।
दात्यूहोऽयं पथि निचुलिनि तोयोपान्ते॥
कर्णाटस्त्रीरति - कुहरिततुल्यच्छेदै-
र्नादैः कण्ठस्खलनकुटिलमन्दावर्तैः॥

वेदै रसैः समुद्रैश्च यतिः। अष्टौ–'भरनभभगैः शैलशिखा'। यथा–

शैलशिखानिकुञ्जशयितस्य हरेः श्रवणे
जीर्णतृणं करेण निदधाति कपिश्चपलः–
क्षुद्रवधापवाद - परिहारविनीतरुष–
स्तस्य न तावतीव लघुता द्विपयूथभिदः॥

'भरयननगैर्वरयुवती'।

कुञ्जरकुम्भपीठ - पीनोन्नतकुचयुगला
पार्वणशर्वरीश - गर्वापहमुखकमला॥
पीननितम्बबिम्ब - संवाहनशिथिलगति-
र्मुञ्जनराधिराज! भूयात्तव वरयुवतीः॥

अत्यष्टौ–'ससजभजगगैरतिशायिनी'। यथा माघे–

इति धौतपुरन्ध्रिमत्सरान्सरसि मज्जनेन
श्रियमाप्तवतोऽतिशायिनीमपमलाङ्गभासः॥
अवलोक्य तदैव यादवानपरवारिराशेः
शिशिरेतररोचिषाप्यपां ततिषु मङ्क्तुमीशे॥ (शि. ८-७१)

दशभिः सप्तभिश्च यतिः। 'नजभजजलगैरवितथम्'। यथा–

श्रुतिपरिपूर्णवक्त्र - मतिसुन्दरवाग्विभवं
तमखिलजैमिनी - यमतसागरपारगतम्॥
अवितथवृत्तवि - प्रजनपूजितपादयुगं
पितरमहं नमामि बहुरूपमुदारमतिम्॥

एतदेवाष्टपञ्चचतुर्भिर्यतौ कोकिलकं नाम यथा–

नवसहकारपुष्प - मधुनिष्कलकण्ठतया
मधुरतरस्वरेण परिकूजति कोकिलकः॥
प्रथमककारविद्ध - वचनैर्धनलुब्धमते!
तव गमनस्य भङ्गमिव सम्प्रति कर्तुमनाः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

धृतौ–'रसजजभरैर्विबुधप्रिया'। यथा–

कुन्दकोमलकुड्मलद्युतिदन्तपङ्क्तिविराजिता
हंसगद्गदवादिनी वनिता भवेद्विबुधप्रिया॥
पीनतुङ्गपयोधरद्वय - भारमन्थरगामिनी
नेत्रकान्तिविनिर्जित - श्रवणावतंसितकैरवा॥

अष्टभिर्दशभिश्च यतिः। अतिधृतौ–'यमनसररगुरुभिर्विस्मिता'। यथा माघे–

श्रिया जुष्टं दिव्यैः सपटहरवैरन्वितं पुष्पवर्षै-
र्वपुष्टश्चैद्यस्य क्षणमृषिगणैः स्तूयमानं निरीय॥
प्रकाशेनाकाशे दिनकरकरान्विक्षिपद्विस्मिताक्षै-
र्नरेन्द्रैरौपेन्द्रं वपुरथ विशद्धाम वीक्षाम्बभूवे॥ (शि. २०-७)

षड्भिः षड्भिः सप्तभिश्च यतिः। प्रकृतौ–'नजभजजरैधृतश्रीः'। यथा माघे–

तुरगशताकुलस्य परितः परमेकतुरङ्गजन्मनः।
प्रमथितभूमृतः प्रतिपथं मथितस्य भृशं महीभृता॥
परिचलतो बलानुजबलस्य पुरः सततं धृतश्रिय-
श्चिरविगतश्रियो जलनिधेश्च तदाऽभवदन्तरं महत्॥ (शि. ३-८२)

त्रिःसप्तसु यतिः। एवमादीनि वृत्तानि प्रस्तारमहाकविप्रयोगेषु दृश्यमानानि गाथाख्यानि! यदा तु 'यच्छन्दो नोक्तमत्र' इति विषमाक्षरपादमित्यस्य विशेषणं तदा समच्छन्दसां गाथात्वाभावादेतानि त्रिष्टुबादिष्वेव द्रष्टव्यानि। एवमन्यान्यपि च्छन्दांसि कविप्रयोगानुरोधाज्ज्ञेयानि, समार्धसमविषमप्रस्तारेषु तेषामुपलम्भात्। विशेषसंज्ञाऽज्ञानात्तु नोदाहृतानि।

एतज्जातिवृत्तात्मना द्विविधमपि च्छन्दो न केवलं संस्कृताविषयम्। किन्तु प्राकृतदेशभाषास्वपि कवीच्छया भवति। तत्रार्यैव प्राकृतदिषु गाथेति संज्ञिता सा। यथा ममैव–

सअलसिणेहमिअङ्को तुइ गुणरअणाअरे उदिदो।
नीलुप्पलप्पवोहे सिढिलो मा भोदु पच्छणा एसा॥
(सकलस्नेहमृगाङ्कस्त्वयि गुणरत्नाकरे उदितः।
नीलोत्पलप्रबोधे शिथिलो मा भवतु प्रार्थनैषा॥)

वैतालीये च शकुन्तलायां यथा–

सहजे किल जे विणिन्दिए ण हु दे तम्म विवज्जणीअए।
पशुमालणकम्मदालुणे अणुकम्पामि दुए ब्व शोत्तिए॥
(सहजं किल यद्विनिन्दितं न खलु तत्कर्म विवर्जनीयम्।
पशुमारणकर्मदारुणोऽनुकम्पामृदुरेव श्रोत्रियः॥)

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

एवं समादिष्वपि कर्पूरमञ्जर्यादौ ज्ञेयान्युदाहरणानि, भाषायामपि। तत्र महाराष्ट्रभाषायामुपजातौ यथा–

अगा! मुरारी भवदुःख भारी कामादिवैरी मन हें थरारी॥
मी मूढ देवा न करोंच सेवा माझा कुठावा परि तां करावा॥

गुर्जरभाषायामपि स्रग्विणी यथा–

वित्तर्ते संचवूं युक्तते भोगवूं अग्निते होमवूं विप्रतें आपवूं।
पापतें खण्डवूं कामतें दण्डवूं पुण्यतें संचवूं रामते सेववूं॥

कान्यकुब्जभाषायामपि वसन्ततिलका यथा–

कन्दर्परूप जबतें तुम लीन्ह कृष्ण!
से कोप काम हमही बहु पीर छोड़ी॥
तो भटिकै विरहपीर नसाउ मोरी
यैं भाँति दूति पठई कहि बात गोपी॥

म्लेच्छसङ्करे मालिन्यां यथा कस्यचित्–

हरनयनसमुत्थज्वालया वह जलाया
रतिनयनजलौघैः खाक बाकी बहाया॥
तदपि दहति चेतो मामकं क्या करोंगी
मदनशिरसि भूयः क्या बला आन लागी॥

एवं गौडादिभाषासुतत्तत्सङ्करे चोदाहरणानि ज्ञेयानि॥

अथ 'शेषं गाथा' इति सामान्यत उपक्षिप्तानि विस्तरभीतेर्विशेषतो नोक्तानि प्राकृतादिषु प्रायः परिदृष्टानि च्छन्दांसि प्राकृतपिङ्गलशम्भुच्छन्दश्चूडामण्यादि-ग्रन्थपर्यालोचनया व्युत्पित्सुव्युत्पत्त्यर्थमस्माभिरुच्यन्ते। तत्र मात्राच्छन्दःसूपयुक्ता गणभेदाः। तत्र द्विकलौ द्वौ। यथा–ऽ, ।, त्रिकलास्त्रयः। ऽ, ऽ।, ।।। चतुष्कलाः 'पञ्चार्यादिषु संस्थिताः' (वृ. र. १-८) इत्यत्र पञ्च मूल एव पूर्वमुक्ताः। पंञ्चकला अष्टौ ।ऽऽ, ऽ।ऽ, ।।।ऽ, ऽऽ।, ।।ऽ।, ।ऽ।।, ऽ।।।, ।।।।।, षट्कला-स्त्रयोदश यथा ऽऽऽ, ।। ऽऽ, ।ऽ। ऽ, ऽ।। ऽ, ।।।। ऽ, । ऽऽऽ।, ऽ। ऽ।, ।।। ऽ।, ऽऽ।।, ।।ऽ।।, ।ऽ।।।, ऽ।।।।, ।।।।।, एतेषां व्यवहारार्थं संज्ञास्तास्तास्तैस्तैः कृतास्ता अत्यन्तोपयोगाभावाद् द्विककलादिशब्दैरेव व्यवहारसिद्धेर्ग्रन्थविस्तर-भयान्नोच्यन्ते। गौरवात्षट्कलस्य हरि-शशि-सूर्य-शक्र-शेष-अहि-कमल-ब्रह्म-कलि-चन्द्र-ध्रुव-धर्म-शालि-करसंज्ञाः।

अथ गाथाप्रकरणम्। तत्र चतुःपञ्चाशद्भिर्मात्राभिर्गाहूः, सप्तपञ्चाशद्भि-र्गाथा। विपरीतार्धघटिताभिस्तावतीभिरेव विगाथः। षष्टिमात्र उद्गाथः। द्विषष्टिमात्राभिः गाहिनी। सैव विपरीतार्धा द्विषष्टिमात्राभिः सिंहिनी। चतुःषष्टि-मात्राभिः स्कन्धक इति सप्त भेदाः। तत्र यदार्धद्वयेऽपि सप्त सार्धाश्चतुर्मात्रिका

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

गणाः षष्ठगणस्त्वेकलघुरूपस्तदा गाहूः। अत्र उदाहरणम्-

चन्द्रो चन्दणहारो तावअ रूअं पआसन्ति।
चण्डेसरस्स कीती जावअ अप्पं न दंसेई॥
(चन्द्रश्चन्दनहारस्तावद्रूपं प्रकाशयतः।
चण्डेश्वरस्य कीर्तिर्यावदात्मानं न दर्शयति॥)

संस्कृते त्वियमुपगीतिः। आर्यैव प्राकृते गाथा। उदाहरणं ममैव प्रागुक्तम्। तदुक्तम्-

पढमं बारह मत्ता वीए अट्ठारहेहि संजुत्ता।
जह पढमं तह तीअं दहपञ्चविहूसिआ गाहा॥
(प्रथमं द्वादश मात्रा द्वितीयेऽष्टादशभिः संयुक्ता।
यथा प्रथमं तथा तृतीयं दशपञ्चविभूषिता गाथा॥ इति)

तत्र यदि सप्तविंशतिर्गुरवस्त्रयश्च लघव इत्येवं त्रिंशदक्षरा तदा लक्ष्मी नाम्नी। षड्विंशतिर्गुरवः पञ्च लघवस्तदा ऋद्धिः। एवमेकगुरुपञ्चपञ्चाशल्लघुपर्यन्तमेकैकगुरुह्रासे लघुद्वयद्वयवृद्धौ च त्रिंशदक्षरकं भेदमारभ्य षट्पञ्चाशदक्षरभेदपर्यन्तं सप्तविंशतिर्भेदाः। क्रमेण तन्नामानि-लक्ष्मी-ऋद्धि-बुद्धि-लज्जा-विद्या-क्षमा-गौरी-देही-रात्रि-पूर्णा-च्छाया-कान्ति-महामाया-कीर्ति-सिद्धा-मानिनी-रामा-गाहिनी-विश्वावासिता-शोभा-हरिणी-चक्री-सारसी-कुररी-सिंही-हंसी (२७) इति। त्रयोदशलघुपर्यन्तं विप्रा, तत एकविंशतिलघ्ववधि क्षत्रिया, ततः सप्तविंशत्यवधि लघुभिर्वैश्या, ततः सर्वा शूद्रेति गाथाजातिः। गाथान्तर्गतेनैकेन जगणेन कुलीना गाथा भवति। द्वाभ्यां कुलटा। बहुभिर्वेश्या जगणरहिता रण्डा। तत्रापि या प्रथमादिविषमादिस्थाने जगणयुक्ता सा गुर्विणीति संज्ञिता कर्तुर्नायकस्य च दुष्टा भवति। सर्वासां गाथानां प्रथमपादो हंसीवन्मन्थरः पठनीय, द्वितीयः सिंहविक्रमवदुद्धतः, तृतीयो गजगतिवल्ललितः, चतुर्थः सर्पगतिवच्चञ्चल इति। गाथाद्वितीयार्धं यदि प्रथमं, प्रथमं च द्वितीयं तदा विगाथा। इयं संस्कृते उद्गीतिः। यथा-

परिहर माणिणि! माणं पेक्खहि कुसुमाइं णीवस्स।
तुम्ह कए भरहिअओ गोण्हइ गुलिआइ धनुइ किर कामो॥
(परिहर मानिनि! मानं प्रेक्षस्व कुसुमानि नीपस्य।
तव कृते खरहृदयो गृह्णाति गुलिका धनुषि किल कामः॥)

तथा द्वयोरप्यर्धयोस्त्रिंशन्मात्रा गाथा प्रथमार्धवद्यदि भवति तदोद्गाथा। यथा-

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

सोउण जस्स णामं अंसू णअणाइं सुमुहि! रुद्धन्ती।
भण बीरचेइवइणो पेक्खामि मुहं कहं जहिच्छं से॥
(श्रुत्वा यस्य नामाश्रूणि नयने सुमुखि! रुन्धन्ति।
भण वीरचेदिपतेः पश्यामि मुखं कथं यथेच्छं तस्य॥)

इयमेव संस्कृते गीतिः। तथा पूर्वार्धे त्रिंशन्मात्रा गाथावत् उत्तरार्धे एकगुर्वाधिक्येन द्वात्रिंशत् तदा गाहिनी। अर्धवैपरीत्ये च सिंहिनी। क्रमेणोदाहरणे–

मुञ्चहि सुन्दरि! आअं अप्पहि हसिऊण सुमुहि! खग्गं मे।
कप्पिअ मेच्छसरीरं पेच्छिइ वअणाइ तृम्म धु अहं वीरो॥
(मुञ्च सुन्दरि! पादमर्पय हसित्वा सुमुखि! खड्गं मे।
कल्पयित्वा म्लेच्छशरीरं प्रेक्षिष्ये वदनं तव ध्रुवमहं वीरः॥)
वरिसइ कणअह विट्ठी तप्पइ भुअणे दिआणिसं जागन्ती।
णीसङ्क साहसङ्को णिन्दइ इन्दं अ सूरबिम्ब अ॥
(वर्षति कनकस्य वृष्टिं तपति भुवने दिवानिशं जाग्रत्।
निःशङ्कं साहसाङ्को निन्दति इन्दु च सूरबिम्बं च॥)

एते संस्कृते ललितावल्गुगीतिसंज्ञे। तथार्धद्वयेऽपि चतुर्मात्रिकाष्टगणघटितं स्कन्धकं सेतुकाव्ये यथा–

जं जं आणेइ गिरिं रइरहचक्कपडिघट्टणसहं हणुमा।
तं तं लीलाइ णलो वामकरत्तोल्लिअं रएइ समुद्दे॥
(यं यमानयति गिरिं रविरथचक्रपरिघट्टनसहं हनुमान्।
तं तं लीलया नलो वामकरोत्तोलितं रचयति समुद्रे॥)

इयमेव संस्कृते आर्यागीतिः। अत्र यद्यष्टाविंशतिर्गुरवः, अष्टौ लघवस्तदा नन्दसंज्ञा। तत एकगुरुर्द्विषष्टिलघुपर्यन्तमेकैकगुरुह्रासे, लघुद्वयद्वयवृद्धौ चाष्टाविंशतिर्भेदाः। तेषां क्रमेण संज्ञाः–नन्द–भद्र–शेष–सारङ्ग–शिव–ब्रह्म–चारण–वरुण–नील–मदन–तालङ्क–शेखर–शर–गगन–शरभ–विमति–क्षीर–नगर–नर–स्निग्ध–स्नेहन–मदकल–लोभ–शुद्ध–सरित्–कुम्भ–कलश–शशधराख्याः। तत्र नन्दोदाहरणम्–

चन्दा कुन्दा कासा हारा हंसा तिलोअणा केलासा।
जेत्ता जेत्ता सेत्ता तेत्ता कासीस जिणिअ ते कित्ती॥
(चन्द्रः कुन्दः काशो हारा हंसस्त्रिलोचनः कैलासः।
यावद्यावच्छ्वेतं तावत्काशीश! जितं ते कीर्त्या॥)

एवमन्येष्वपि भेदेषु ज्ञेयम्।

इति गाथाप्रकरणम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ दोहा।

यस्याः प्रथमतृतीययोः पादयोः प्रथमं षट्कलो गणः, ततश्चतुष्कलः, ततस्त्रिकल इत्येवं त्रयोदश मात्राः, द्वितीयचतुर्थयोः षट्कलचतुष्कलौ समानौ त्रिकलस्थाने एको लघुरेवेत्येकादशमात्रास्तदिदमष्टाचत्वारिंशन्मात्राभिर्दोहाच्छन्दः। यथा–

सुरअरु सुरही परसमणि णहि वीरेससमाण।
ओ वक्कल ओ कठिणतणु ओ पसु ओ पाखाण॥
(सुरतरुः सुरभिः स्पर्शमणिर्नहि वीरेशसमानः।
स वल्कलः स कठिनतनुः सं पशुः पाषाणः॥)

अत्र द्वाविंशतिर्गुरवश्चत्वारो लघवो यत्र तद् भ्रमरम्। तत एकगुरुपर्यन्तमेकैकगुरुह्रासे लघुद्वयद्वयवृद्धौ च त्रयोविंशतिर्नामानि। यथा–भ्रमर-भ्रामर-शरभ-श्येन-मण्डूक-कर्कट-करभ-नर-मराल-मदकल-पयोधर-बल-वानर-त्रिकल-कच्छप-मत्स्य-शार्दूल-अहिवर-व्याघ्र-विडाल-श्व-उन्दुर-सर्पेति। सर्पे अष्टाचत्वारिंशल्लघव एव। तत्र भ्रमरोदाहरणम्–

जा अद्धङ्गे पब्बई सीसे गङ्गा जासु।
जो देआणं वल्लहो वन्दे पाअं तासु॥
(यस्यार्धाङ्गे पार्वती शीर्षे गङ्गा यस्य।
यो देवानां वल्लभो वन्दे पादौ तस्य॥)

तत्रापि द्वादशावधिलघुका विप्रा। ततो द्वाविंशत्यवधिलघुका क्षत्रिया। द्वात्रिंशदवधिलघुका वैश्या। इतरा शूद्रेति। तथा यस्याः प्रतिपादं प्रथमे तृतीये च चरणे जगण; सा दुष्टा दोहेति।

इति दोहाप्रकरणम्॥

अथोत्कष्टा।

प्रथमं चतुष्कलौ द्वौ गणौ, ततस्त्रिकल एकः, एवमेकादशमात्रारचितपादषट्कयुक्तोत्कष्टा। तत्रापि सर्वैर्लघुभिर्लौहाङ्गिनी नाम। ततश्चतुर्गुरुवृद्धौ अष्टाष्टलघुह्रासे दशपर्यन्तं हंस्यादीनि। लौहाङ्गिनी लघवः ६६, हंसी गुरु ४, लघवः ५८, रेखा गुरु ८, लघवः ५०, तालङ्किनी गुरु १२ लघवः ४२, कम्पी गुरु १६ लघवः ३४, गम्भीरा गुरु २० लघवः २६, काली गुरु २४ लघवः १८, कालरुद्राणी गुरु २८ लघवः १०, एवमष्टौ भेदाः। तत्र लौहाङ्गिनी यथा–

विमुहचलिअ रण अचलु परिहरिअ हअगअबलु।
हलहलिअ मलअणिबइ जसु जस तिहुअण पिबइ॥
वणरसिणरबइ लुलिम सअल उबरि जस फुरिअ।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

(विमुखचलितो रणेऽचलः परिहृत्य हयगजबलम्॥
हलहलियो मलयनृपतिर्यस्य यशस्त्रिभुवनं पिबति।
वाराणसीनरपतिर्लुलितः सकलोपरि यशः स्फुरितम्॥)
एवं सर्वेषूह्यम्।

इत्युत्कटा॥

अथ रोला।

यथेच्छं गुरुलघुभिश्चतुर्विंशतिमात्राः प्रतिचरणं भवन्ति, एवं पादचतुष्टययुता रोला। यथा–

पअभरदरदरु धरणी तरणिह धुलिहिं झम्पिअ।
कमठपीठ धरपडिअ मेरुमन्दरसिर कम्पिअ॥
कोहे चलिअ हम्मीरवीर गअजूहजुत्तो।
कट्टे किअउ आक्कन्द मुच्छि मेच्छके पुत्तो॥
(पदभरदरदरिता धरणी तरणिरथो धूलिभिराच्छादितः।
कमठपीठं धरापतितं मेरुमन्दरशिरः कम्पितम्॥
क्रोधेन चलितो हम्मीरवीरो गजयूथयुक्तः।
कष्टेन कृत आक्रन्दो मूर्छितो म्लेच्छपुत्रः॥)

अत्र एकादश गुरवो द्वौ लघू यदि पादे तदा रोला शुद्धा। प्रतिपादमेकैकगुरुह्रासे लघुद्वयवृद्धौ च करतालादिसंज्ञा भेदा द्वादश। यथा–कुन्द-करताल-मेघ-तालङ्क-काल-रुद्र-कोकिल-कमल-इन्द्र-शंभु-चामर-गनेश्वरेति।

इति रोला॥

अथ गन्धा।

प्रथमपादे सप्तदशवर्णाः द्वितीयेऽष्टादश। मात्रासु त्वनियमः। द्वितीयार्धमपि तादृगेव सा गन्धा।

कण्ण चलन्ते कुम्म चलइ पुणबि असरणा।
कुम्म चलन्ते महि चलइ भुअणभअकरणा॥
महिअ चलन्ते महिहरु तह अ सुरअणा।
चक्कवइ चलन्ते चलइ चक्क जह, तिहुअणा॥
(कर्णे चलति कूर्मश्चलति पुनरप्यशरणे।
कूर्मे चलति मही चलति भुवनभयकरणी॥
मह्यां चलन्त्यां महीधरस्तथा च सुरगणाः।
चक्रवर्तिनि चलति चलति चक्रं यथा त्रिभुवम्॥)

इति गन्धा॥

अथ चतुष्पदा।

चतुर्मात्राः सप्तगणा गुरुश्चेति त्रिंशन्मात्र एकः पादः, तादृशा एवान्ये त्रयः

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

एवं विंशत्यधिकशतं मात्रा भवन्ति। एवं चतुर्भिः पादैरेकः पादस्तादृशैश्चतुर्भिः पादैश्चतुःशतान्यशीत्यधिकानि मात्राः। एतावता चतुष्पदा भवति। तत्र लाघवाय एकपादोदाहरणम्–

जसु सीसइ गङ्गा गोरि अधङ्गा गिम पिन्धिअ फणिहारा।
कण्ठे ट्ठिअ वीसा पिन्धण दीसा संतारिअ संसारा॥
किरणावलिकन्दा बन्दिअ चन्दा णअणहिअणल फुरन्ता।
सो मङ्गल दिज्जउ बहुसुह किज्जउ तुज्झ भवाणीकन्ता॥
(यस्य शीर्षे गङ्गा गौरी अर्धाङ्गे ग्रीवायां पिनद्धः फणिहारः।
कण्ठे स्थितं विषं परिधानं दिशः सन्तारितसंसारः॥
किरणावलिकन्दो वन्दितश्चन्द्रः नयनेऽनलः स्फुरति।
स मङ्गलं ददातु बहु सुखं करोतु तव भवानीकान्तः॥)

एतस्यानन्ता एव भेदाः॥

इति चतुष्पदा॥

चतुर्मात्रैः सप्तभिर्गणैस्त्रिभिर्लघुभिश्चैकः पादः। तत्र प्रथमं दशमात्रासु विरतिः, ततोऽष्टसु, ततस्त्रयोदशसु, एवं प्रकारकपादचतुष्टयेन घत्ता नाम। यथा–

रण दक्ख दक्ख हणु जिणु कुसुमधणु अन्धअगन्धबिणासकरु।
स रक्खउ सङ्करु असुरभअङ्करु गोरिनारि अद्धङ्गधरु॥
(रणे दक्षो दक्षो हतो जितः कुसुमधनुरन्धकगन्धविनाशकरः।
स रक्षतु शङ्करः असुरभयङ्करो गौरीनार्यर्धाङ्गधरः॥)

इति घत्ता॥

अथ घत्तानन्दः

षट्कल आदौ, ततस्त्रिकलास्त्रयः, ततः पञ्चकलः, ततः षट्कलः, ततो लघुद्वयम्। एवं प्रकारकपादचतुष्टयेन द्विषष्टिमात्रको घत्तानन्दः। एकादशसु सप्तसु त्रयोदशसु च यतिः। यथा–

जे बन्दिअ सिर गङ्ग हणिअ अणङ्ग अद्धङ्गे परिकर धरणु।
सो जोइजणमित्त हरेउ दुरित्त सङ्काहरु सङ्करचरणु॥
(ये वन्दिता शिरसि गङ्गा हतोऽनङ्गोऽर्धाङ्गे परिकरं धरति।
स योगिजनमित्रं हरतु दुरितं शङ्काहरः शङ्करचरणः॥)

इति घत्तानन्दः॥

अथ षट्पदप्रकरणम्।

काव्यनाम्नश्छन्दसः पादचतुष्टयेनोल्लालनाम्नः पादद्वयेन च षट्पदं भवति। प्रथमं द्वे मात्रे, ततः पञ्च चतुर्मात्रा गणाः, ततो द्वे मात्रे, इति चतुर्विंशतिमात्राभिः काव्यपदचतुष्टयम्। तत्रैकादशसु त्रयोदशसु च यतिः, उल्लालस्य पादे

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अष्टाविंशतिर्मात्राः पञ्चदशसु त्रयोदशसु च यतिः। एवं पदद्वयम्। एतादृक् षट्पदम्। यथा–

पिन्धउ दिढसण्णाह बाहउप्पर पक्खर दइ।
बन्धुसमदि रण धसउ सामिहम्मीर बअण लइ।
उड्डउ णहपह भमउ खग्ग रिउसीस डालउ।
पक्खर पक्खर ठेल्लि पेल्लि पव्वअ उप्फालउ।
हम्मीरकज्ज जज्जल भणइ कोहाणल मुहमह जलउ।
सुरताणसीस करबाल दइ तेज्जि कलेवर दिउ चलउ॥

(परिधाय दृढ़सन्नाहं बाह्वोरुपरि पक्षरं दत्त्वा।
बन्धूनां सम्मत्या रणं घर्षयामि स्वामिहम्मीरवचनं गृहीत्वा।
उड्डयामि नभःपथं भ्रमामि खड्गं रिपुशिरसि पातयामि।
पक्षरे पक्षरे ठेलयित्वा पेलयित्वा पर्वतमुत्फालयामि।
हम्मीरकार्ये जज्जल्लो भणति क्रोधानलो मुखमध्ये ज्वलति।
सुलतानशिरसि करवालं दत्त्वा त्यक्त्वा कलेवरं दिवं चलति॥)

प्रकारान्तरमपि षट्पदे भवति। आदौ षट्कलो गणः, ततश्चत्वारश्चःतुकलाः, ततोऽन्ते द्विकलः। एवंविधैश्चतुर्भिश्चरणैः षण्णवतिमात्रा भवन्ति। तत उल्लालपदद्वयं पूर्ववदेव। उभयथापि द्विपञ्चाशदधिकं शतं मात्राणां षट्पदे भवति। अत्रोदाहरणम्–

जहा सरअससिबिम्ब जहा हरहारहंसा ठिअ।
जहा फुल्लसिअकमल जहा सिरिखण्ड खण्डकिअ॥
जहा गङ्गकल्लोल जहा रोसाणिअ रुप्पइ।
जहा दुद्धवरसुद्धफेण फम्फाइतलुप्पइ॥
पिअपाअपसाअदिट्ठिपलु णिहुअ हसइ जहा तरुणिजण।
वरमन्ति चण्डेसर तह तुअ कित्ति देक्खु हरिबम्भ भणा॥

(यथा शरच्छशिबिम्बं यथा हरहारहंसाः स्थिताः।
यथा फुल्लसितकमलं यथा श्रीखण्डः खण्डीकृतः॥
यथा गङ्गाकल्लोलो यथा रोषाणितं रूप्यम्।
यथा दुग्धवरशुद्धफेनं उद्गम्य तपति॥
(प्रियपादप्रसाददृष्टिपतितो निभृतं हसति यथा तरुणीजनः।
वरमन्त्रिन्! चण्डेश्वर! तथा तव कीर्तिं दृष्ट्वा हरिर्ब्रह्मा भणति॥)

काव्यस्वरूपं त्वादावन्ते च षट्कलो मध्ये त्रयश्चतुष्कलास्तृतीयो जो न्लौ वेति। इदं स्वतन्त्रस्य काव्यच्छन्दसः करणे। षट्पदे तूक्तैव विधा ज्ञेयाः। काव्यस्य भेदाः पञ्चचत्वारिंशत्। तत्र यत्र षण्णवतिर्लघूनां न तु गुरुः स शक्रः। तत एकैकगुरुप्रक्षेपेण लघुद्वयद्वयह्रासे च शम्भ्वाद्या भृङ्गान्ता भेदा भवन्ति। तथा च

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

भृङ्गे अष्टौ लघवः प्रतिपादमेकादश लघुप्रकारेण समुदितचतुश्चत्वारिंशद् गुरवस्ततो न ह्रासः। यथा–शक्र-शम्भु-शूर-गण्ड-स्कन्ध-विजय-दर्प-ताराङ्क-समर-सिंह-शीर्ष-उत्तेज-फणि-रक्ष-प्रतिधर्म-मराल-मृगेन्द्र-दण्ड-मर्कट-अनुबन्ध-बासण्ठ-कण्ठ-मयूर-बन्ध-भ्रमर-भिन्न-महाराष्ट्र-बलभद्र-राज-वलित-मयूख-मन्थान-बलि-मोह-सहस्राक्ष-वाल-दर्पित-सरभ-दम्भ-उद्दम्भ-वलिताङ्क-तुरग-हार-हरिण-अन्ध-भृङ्गेति। तत्र शक्रस्योदाहरणम्–

जसु कर फणिबइ वलअ तरुणिवर तणुमह बिलसइ।
णअण अणल गल गरल विमंल ससहर सिर णिवसइ॥
सुरसरि सिरमह वहइ ' सअलमणदुरितदलणकर।
हसि ससहरहर हरउ दुरित तुअ दिसउ अभअवर॥
(यस्ये करे फणिपतिर्वलयस्तरुणीवरा तनुमध्ये विलसति।
नयने अनलो गले गरलं विमलः शशधरः शिरसि निवसति॥
सुरसरिच्छिरोमध्ये वहति सकलमनोदुरितदलनकरः।
हसित्वा शशधरधरो हरतु दुरितं तव दिशत्वभयं वरम्॥)

षट्पदे गणाशुद्ध्यादौ पङ्क्त्युत्वादयो दोषा ग्रन्थान्तरादवसेयाः, विस्तरभयात्तु न प्रपञ्च्यन्ते। द्वात्रिंशल्लघ्ववधिकस्य काव्यस्य विप्रजातिः, ततश्चत्वारिंशल्लघ्व-वधि क्षत्रियजातिः, ततोऽष्टाचत्वारिंशल्लघ्ववधि वैश्यजातिः अवशिष्टः शूद्र इति जातिभेदः। उल्लाललक्षणं तु–

त्रयश्चतुष्कला आदौ त्रिकलः षट्कलस्ततः।
चतुष्कलोऽयं त्रिकल उल्लाले लक्षणं सदा॥ इति।

तत्र सर्वगुरुः षट्पदो यथा–

जाआ जा अद्धङ्ग सीस गङ्गा लोलन्ती
सव्वासा पूरन्ति सव्व दुक्खा तोलन्ती॥
णाआराआहार दीस बासा बासन्ता।
वेआला जा सङ्ग णट्ठ दुट्ठा णासन्ता॥
णाचन्ता कन्ता उच्छब्बे ताले भूमिकम्पले।
जा दिट्ठे मोक्खा पाबिज्ज सो तुह्माणं सुक्ख दे॥
(जाया यस्यार्धाङ्गे शीर्षे गङ्गा लोलते।
सर्वाशाः पूरयन्ती सर्वदुःखानि त्रोटयन्ती॥
नागराज हारो दिशा वासांसि वसानः।
वेताला यत्सङ्गे नष्टदुष्टान् नाशयन्तः॥
नृत्यन्तः कान्तं तालकम्पितभूमयः।
यद्दृष्टे मोक्षः प्राप्यते स युष्माकं सुखं ददातु॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ षट्पदभेदाः। तत्र काव्ये चतुश्चत्वारिंशद् गुरवः, उल्लाले च षड्विंशतिः। एवं मिलित्वा सप्ततिर्गुरवो द्वादश च लघवो यत्र स द्व्यशीत्यक्षरः अजयनामा प्रथमो भेदः, ततः सर्वलघुपर्यन्तमेकैकगुरुह्रासे लघुद्वयप्रक्षेपेणैकैकवर्णवृद्धौ एकसप्ततिरजयाद्या भेदा भवन्ति। यथा–अजय–विजय–वलि–वर्ण–वीर–वेताल–बृहन्नल–मर्कट–हरि–हर–ब्रह्म–इन्दु–चन्दन–शुभंकर–शाल–सिंह–शार्दूल–कूर्म–कोकिल–खर–कुञ्जर–मदन–मत्स्य–सारङ्ग–शेष–सारस–पयोधर–कुन्द–कमल–कुन्द–वारण–शरभ–जङ्गम–शर–सुशर–मत्सर–सारस–सरस–मेरु–सकल–मृग–सिद्ध–बुद्धि–कलकल–कमलाकर–धवल–मृतक–ध्रुव–बलय–किंनर–शक–जन–मेधाकर–ग्रीष्म–गरुड–शशि–सूर्य–शल्य–नर–तुरग–मनोहर–गगन–रत्न–नव–हीर–भ्रामर–शेखर–कुसुमाकरदीप–शङ्ख–वसु–शब्दाः। तथा च अजये वर्णाः ८२, गुरवः ७०, लघवः १२, अन्त्ये शब्दे लघवः१५२।

इति षट्पदप्रकरणम्॥

अथ पञ्झटिका।

प्रतिपादं चत्वारश्चतुष्कला गणास्तत्रान्तिमो जगण एव। एवं चतुर्भिः पादैश्चतुःषष्टिमात्राकं पञ्झटिकाच्छन्दः। यथा–

जे गञ्जिअ गोलाहिवइ राउ उद्दण्ड ओड्ड जसु भअ पलाउ।
उरु बिक्कम बिक्कम जिणिअ जुज्झ ताकण्ण परक्कम कोण बुज्झ॥
(येन गंजितो गौडाधिपती राजा उदण्ड ओड्रो यस्य भयेन पलायितः।
गुरुविक्रमो विक्रमो जितो युद्धे तत्कर्णपराक्रमं को न बुद्धचते॥)

इति पञ्झटिका॥

अथालिल्लिहः।

प्रतिपादं षोडशमात्राः, अन्ते च मात्राद्वयं लघुद्वयात्मकं पादे च जगणो न भवति तच्छन्दोऽलिल्लिहसंज्ञम्। यथा–

जहि आसामविदेहाकिल्लउ, सुत्थिर डाहररज्जा जिणि लिउ।
कालिञ्जर जिण्हि कित्ती थप्पिअ, धण आरञ्जिअ धम्मे अप्पिअ॥
(येनासामविदेहदुर्गाणि, सुस्थिरडाहरराज्यं जित्वा गृहीतम्।
कालिञ्जरं जित्वा कीर्तिं स्थापयित्वा, धनमर्जयित्वा धर्मे अर्पितम्॥)

इत्यलिल्लिहः॥

अथ नवपदप्रकरणम्।

अनियतगुरुलघुक्रमाः षोडशमात्राः प्रतिपादं भवन्ति, तच्चतुष्षष्टिमात्रं पादाकुलकम्। पञ्चदशमात्राभिः प्रथमतृतीयपञ्चमपादाः पञ्चदशमात्राः, द्वितीये द्वादशमात्राः, चतुर्थ एकादशमात्राः, एवमष्टषष्टिमात्रा भवन्ति। एतदनन्तरं दोहाच्छन्दः समस्तमित्येवं नवपदं छन्दो रड्डा नाम। तत्र विषमपादेष्वादौ त्रिकलस्ततस्त्रयश्चतु–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

ष्कलाः, तत्रापि प्रथमेऽन्ते जगणश्चतुर्लघुर्वा, तृतीयपञ्चमयोर्भगणोऽन्ते द्वितीयपादे सर्वलघ्वन्तास्त्रयश्चतुष्कलाः, चतुर्थे द्वौ चतुष्कलौ, ततस्त्रयो लघव इति। तत उक्तलक्षण दोहाच्छन्दः। यथा–

ममइ महुअर फुल्ल अरविन्द, णवकेसु काणण फुलिअ
सब्बदेश पिकराब चुल्लिअ, सिअल पबण लहु बहइ,
मलअकुहर णबवेल्लि पेल्लिअ।
चित्त मणोभव सर हणइ, दूर दिगन्तर कन्त।
के परि अप्प उबारिहउ, एपरि मिडिअ दुरन्त॥
(भ्रमति मधुकरः फुल्लारविन्दे, नवकिंशुकैः काननं फुल्लम्।
सर्वदेशः पिकरावश्चुलुकितः।
शीतलपवनो लघु वहति, मलयकुहरे नववल्लीं क्षिप्त्वा।
चित्तं मनोभूः शरैर्हन्ति, दूरदिगन्तरे कान्तः
केन प्रकारेणात्मानमुद्धारयामि, एवं परिमिलितो दुरन्तः॥)

एतद्भेदाः सप्त। तत्र प्रथमतृतीयपञ्चमपादेषु चतुर्दशमात्रा कलभी (१), द्वितीयचतुर्थयोरेकादश सा नन्दा (२), प्रथमतृतीययपञ्चमपादेषूनविंशति-द्वितीयचतुर्थयोरेकादश सा मोहिनी (३), विषमपादेषु पञ्चदश समयोरेकादश सा चारुसेनी (४), विषमेषु पञ्चदश समयोर्द्वादश सा भद्रा (५), विषमेषु पञ्चदश द्वितीये द्वादश चतुर्थे एकादश स राजसेनः (६), विषमेषु षोडश समयोरेकादश द्वादश वा सा तालङ्किनी (७), इति।

इति नवपदप्रकरणम्॥

अथ पद्मावती।

द्विगुरुरन्तगुरुरादिगुरुः सर्घलघुरित्येतैश्चतुर्मात्रैः गणैः यथासम्भवं गणाष्टक-घटितपादचतुष्टया पद्मावती। अत्र जगणो नायकपीडादिदोषदाता अतश्चाण्डाल इत्युच्यतेऽतो न शुभः। यथा–

भअभङ्गिअ बङ्गा भग्गु कलिङ्गा तेलङ्गा रण मुक्कि चले।
मरहट्ठा घिट्ठा अग्गिअ कट्ठा सोरट्ठा भअपाअ पले॥
चम्पा रण कम्पा पब्बअ कम्पा ऊत्थाउत्थी जीउ हरे।
कासीसर राणा किअउ पआणा बिज्जाहर भण मन्तिवरे॥
(भयभग्ना बङ्गाः भग्नाः कलिङ्गास्तैलङ्गा रणं मुक्त्वा चलिताः।
महाराष्टा धृष्टा लग्नाः काष्ठासु सौराष्ट्रा भयेन पादे पतिताः॥
चम्पा रणे कम्पिता पर्वताः कम्पिता उत्थायोत्थाय जीवं हरन्ति।
कार्शाश्वरे राजनि कृतप्रयाणे विद्याधरो भणति मन्त्रिवरः॥)

इति पद्मावती॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ कुण्डलिका।

पूर्वोक्ताया दोहाया यद्येकमर्धमपरं चार्धं पूर्वोक्तलक्षणकाव्येन युक्तं तदिदं चतुश्चत्वारिंशदधिकशतमात्राभिः शृङ्खलायमकानुप्रासवद् गुणालङ्कारवत्कुण्डलिकाख्यं छन्दः। अत्र चाविरम्य कुण्डलिकाकारेण पठनात्कुण्डलिकेति संज्ञा। यन्मते दोहा द्विपदा तन्मतेनेयं षट्पदा, यन्मते दोहा चतुष्पदा तन्मते कुण्डलिकाष्टपदेति। यथा–

ढोल्ला मारिअ ढिल्लिमह मुच्छिअ मेच्छसरीर।
पुर जज्जल्ला मन्तिवर चलिअ बीर हम्मीर॥
चलिअ बीर हम्मीर पाअभर मेइणि कम्पइ।
दिग मग णह अन्धार धूलि सूरजरह झप्पइ॥
दिग मग णह अन्धार आणु खुरसाणक ओल्ला।
दमलिदअसु विपक्ख मारु ढिल्लोमह ढोल्ला॥
(ढोलं ताडयित्वा दिल्लीमध्ये मूर्छयित्वा म्लेच्छशरीराणि।
पुरो जज्जलो मन्त्रिवरश्चलति वीरो हम्मीरः।
चलिते वीरे हम्मीरे पादभरेण मेदिनी कम्पते॥
दिङ्मार्गनभःस्वन्धकारे धूली सूर्यरथं झम्पयति।
दिङ्मार्गनभःस्वन्धकारे आनीताः खुरसानकाः पुरुषाः।
दलितासु विपक्षस्ताडचते दिल्लीमध्ये ढोलः॥)

इति कुण्डलिका॥

अथ मदनान्तकः।

अत्र प्रतिपादे विंशत्यक्षराणि पञ्चविंशतिश्च मात्राः, तत्रापि प्रथमश्चतुर्मात्रिको गणः, अन्ते एको गुरुः, मध्ये यथासुखमिश्रिता गुरुलघवो स मदनान्तकः। यथा–

भज्जिअ मलअ चोलबइ णिबलिअ गज्जिअ गुज्जरा।
मालबराअ मलअगिरिअ लुक्कि परिहरि कुज्जरा॥
खुरसाणा खलिअ रणमह अहिअ लङ्घिअसाअरा।
हम्मीर चलिअ हारब पलिअ रिउगणह काअराः॥
(भग्नो मलयश्चोलपतिर्निर्बलीकृतो गज्जिता गुर्जराः।
मालवराजो मलयगिरौ निलीनः परिहृत्य कुञ्जरान्॥
खुरसानाः स्खलिताः रणमध्येऽहिता लङ्घितसागराः।
हम्मीरे चलिते हारवाः पलायिता रिपुगणाः कातराः॥)

इति मदनान्तकः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ द्विपदी।

आद्यन्तयः षट्कलो गणो मध्ये चतुष्कलाश्चत्वारः। एवंविधपदद्वयरचिता द्विपदी। आदौ षट्कलस्ततः पञ्च चतुष्कलास्ततो गुरुरिति वा। यथा–

दाणब दब बेबि ढुक्कन्तउ गिरिबरसिहर कम्पिओ।
हअगअपाअधाअ उट्ठन्तउ धूलिहिं गअण झम्पिओ॥
(दानवदेवाभ्यां द्वाभ्यामपि ढौक्यमानं गिरिवरशिखरं कम्पितम्।
हयगजपादघातोत्थितधूलिभिर्गगनमाच्छादितम्॥)

इति द्विपदी॥

अथ खञ्जा।

नव चतुर्लघवस्ततो रगण एवं दशभिर्गणैरेकोनचत्वारिंशदक्षरैरेकचत्वारिंशन्मात्राभिरर्धं यस्या सा खञ्जा। द्वितीयमप्यर्धं तादृक्। यथा–

अहि ललइ महि चलइ गिरि खसइ हर खलइ।
ससि घुमइ अमिअ वमइ मुअल जिबि उट्टए॥
पुणु धसइ पुणु खसइ पुणु ललइ पुणु घुमइ।
पुणु वमइ जिबिअ बिविह समर परिदिट्ठए॥
(अहिर्ललति मही चलति गिरिः पतति हरः स्खलति।
शशी घूर्णते अमृतं वमति मृता जीवित्वोत्तिष्ठन्ति॥
पुनर्घर्षति पुनः स्खलति पुनर्ललति पुनर्घूर्णते।
पुनर्वमति जीविता विविधं समरे परिदृश्यते॥)

इति खञ्जा॥

अथ शिखा।

अत्र प्रथमार्धे षट् चतुर्लघवो द्वितीयार्धे सप्त उभयोरप्यन्ते जगणो भवति सा शिखा। यथा–

फुलिअ महु भमर बहु रअणि–
पहु किरणबहु अबअरुं बसन्त॥
मलअगिरिकुसुमधरि पबण बह
सहब कह सहि भण णिलअ णहु कन्त॥
(पुष्पितमधुके भ्रमरवध्वो रजनीप्रभुः
किरणबहुरवतरति वसन्तः॥
मलयगिरिकुसुमधरः पवनो वहति
सहे कथं सखि! भण निलये न हि कान्तः॥)

इति शिखा॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ माला।

आद्यार्धे नव चतुर्लघवस्ततो रगणस्ततो द्वौ गुरू इत्येवं पञ्चचत्वारिंशन्मात्रा गाथोत्तरार्धेन द्वितीयार्धं सैषा माला। यथा–

बरिस जल भमइ घण मलअ सिअल पबण मणहरण
कणअ पिअरि णचइ बिजुरि फुल्लिआ णीबा।
पच्छरविच्छर हिअओ पिअओ णिलअं ण आवेइ॥
(वर्षति जलं भ्रमति घनो मलयशीतलः पवनो मनोहरणः।
क्षणशः पीता नृत्यति विद्युत्फुल्ला नीपाः।
प्रस्तरविस्तरहृदयः प्रियो निलये नायाति॥)

इति माला॥

अथ चूलिका।

यदि दोहाच्छन्दसि प्रत्यर्धं लघुगुरुद्वयरूपाः पञ्चकला अधिका दीयन्ते, तथा दोहाच्छन्दसो मात्राः ४८ अधिकाश्च १०, एवं अष्टपञ्चाशन्मात्रा भवन्ति तदा चूलिका नामच्छन्दः। यथा–

राआ लुद्ध समाज खल बहु कलहारिणि सेवक धुत्तउ।
जीबण चाहसि सुक्ख जइ परिहर घरजण बहुगुणजुत्तउ॥
(राजा लुब्धः समाजः खलः वधूः कलहकारिणी सेवको धूर्तः।
जीवने वाञ्छसि सुखं यदि परिहर गृहजनं बहुगुणयुक्तमपि॥)

इति चूलिका॥

अथ सौराष्ट्रा।

व्यत्यस्तार्धा दोहैव सौराष्ट्रा। यथा–

सो माणिअ पुणमन्त जासु मत्त पण्डिअ तनअ।
जासु धरिणि गुणमन्ति सो वि पुहवि सगाहणिलअ॥
(स मान्यः पुण्यवान्यस्य भक्तः पण्डितस्तनयः।
यस्य गृहिणी गुणवती सोऽपि पृथिव्यां स्वर्गनिलयः॥)

इति सौराष्ट्रा॥

अथ काहलिः।

सगणभगणचतुर्लघवो गणा गुरुश्चैको यत्र प्रतिपदम् एकादशाक्षरश्चतुर्दशमात्रकश्च स काहलिः। यथा–

उचउत्थाणअ बिमलधरा तरुणी घरिणी विणअपरा।
बित्तकपूरलमुद्दघरा वरिसा समआ सुक्खकरा॥
(उच्चोत्थानकं विमलं गृहं तरुणी गृहिणी विनयपरा।
वित्तपूरितं मुद्रागृहं वर्षासमयः सुखकरः॥)

इति काहलिः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ मधुभारतम्।

अत्र जगणान्तौ चतुर्मात्रौ (गणौ) प्रतिपादं तन्मधुभारतम्। यथा–

जासु चन्द सीस पिन्धणअ दीस।
सो संभु पेउ महासुख देउ॥
(यस्य चन्द्रः शीर्षे परिधानं च दिशः।
स शंभुः पातु महासुखं ददातु॥)

इति मधुभारतम्॥

अथाभीरः।

यत्र पादे जगणान्ता एकादशमात्राः स आभीरः। यथा–

सुन्दरि गुज्जरणारि लोअण दीहबिसारि।
पीणपओहरभार लुल्लइ मोत्तिअहार॥
(सुन्दरी गुर्जरनारी लोचनं दीर्घविसारि।
पीनस्तनभारे लोलते मौक्तिकहारः॥)

इत्याभीरः॥

अथ दण्डकाहलः।

चत्वारश्चतुर्मात्रास्ततः षण्मात्रस्ततश्चतुष्कलो गुरुश्चेति द्वात्रिंशन्मात्रा यदा तदा दण्डकाहलः। सर्वा अस्मिन्मात्राः १२८। यथा–

राअह भग्गन्ता दिगन्तलगन्त परिहरि हअगअधररमणी,
लोरहि भरु सरबरु पअपरु परिकरु लोटइ पडिअतनु धरणी।
पुणु उट्ठइ संभरि करदत्तग्गुलिबालतणअकरजमलकरे,
कासीसर राआ णेहलुकाआ करु माआ पुण थप्पि धरे॥
(राजानो भग्ना दिगन्तलग्नाः परिहृत्य हयगजगृहरमणीः,
रोदनैर्भृत्वा सरोवरं पादपतितपरिकरा लोटन्ते पतिततनवो धरण्याम्।
पुनरुत्तिष्ठन्ति सम्भृत्य करदत्ताङ्गुलिबालतनयकरयमलधराः,
काशीश्वरो राजा स्नेहलकायः कृत्वा मायां पुनः स्थापयित्वा धृतवान्॥)

इति दण्डकाहलः॥

अथ दीपकम्।

आदौ गुर्वन्तश्चतुष्कलस्ततो गुर्वन्तः पञ्चकलस्तत एको लघुरित्येवं पादघटितं दीपकम्। यथा–

जसु हत्थ करबाल बीपक्खकुलकाल।
सिर सोह बरछत्त संपुण्ण ससिमत्त॥
(यस्य हस्ते करवालो विपक्षकुलकालः।
शिरसि शोभते वरच्छत्रं सम्पूर्णशशिवत्॥)

इति दीपकम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ सिंहावलोकः।

यद्यादौ चतुष्कलसगणौ ततः षट्कला गुरुश्चेति षोडशमात्रापादः सिंहावलोकः। यथा–

हणु उज्जरगुराअ दलं दलदलिअ चलिअ मरहट्ठबलम्॥
बलमोलिअमालअराअकुला कुलउज्जलकलचुलिकण्णफुला॥
(हतमुज्ज्वलगुर्जरराजदलं, दरदलितचलितमहाराष्ट्रबलम्।
बलमोटितमालवराजकुलः, कुलोज्ज्वलः कलचूरिः कर्णः स्फुरति॥)

इत्यलम्।

इति सिंहावलोकः॥

इति श्रीमद्भट्टरामेश्वरसूरिसूनुनारायणभट्टविरचितायां
वृत्तरत्नाकरव्याख्यायां पञ्चमोऽध्यायः॥

तारा–इस अन्तिम कारिका में अनुक्त छन्दों का सामान्य विधान प्रदर्शित है। अर्थात् विषमाक्षरवृत्त के प्रत्येक पाद में अक्षरों का क्रम भी विषम हो तथा पादों की संख्या भी नियत न हो–५–७ पाद तक निर्दिष्ट हो, साथ ही पूर्वोक्त अध्यायों में जिनका कोई विवेचन भी न किया गया हो। वे समस्त छन्द 'गाथा' छन्द के अन्तर्गत मान्य होंगे, ऐसा विद्वानों का कथन है। उदाहरणस्वरूप यथा महाभारत में 'दशधर्मं न जानन्ति' आदि पद्य समाहित हैं।

विशेष–मूलकारिका 'विषमाक्षरपाद' के उदाहरणस्वरूप भी है। क्योंकि इस कारिका के प्रत्येक पाद में अक्षरों की संख्या विषम निर्दिष्ट है। यथा–प्रथम पाद में 'विषमाक्षरपादं वा' आठ अक्षरों का पाद है। द्वितीय पाद 'पादैरसमं दश-धर्मवत्' में दश अक्षरों की योजना है। तृतीय पाद 'यच्छन्दो नोक्तमत्र' में सात ही अक्षर हैं। और अन्तिम चतुर्थ पाद में 'गाथेति तत्सूरिभिः प्रोक्तम्' में नौ अक्षर समाहित हैं। इस प्रकार विषमाक्षरपाद होने के कारण इसे ही उक्त का उदाहरण भी समझें॥ १२॥

●

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

प्रस्तारो नष्टमुद्दिष्टमेकद्व्यादिलगक्रिया।
सङ्ख्या चैवाध्वयोगश्च षडेते प्रत्ययाः स्मृताः॥ १॥

नारायणी—एवं समादिवृत्तत्रयमभिधायेदानीं तेषामुत्पत्तिप्रदर्शनायाऽनुक्तानां च वृत्तानां कविप्रयोगेषु दृश्यमानानां सद्भावोपपत्तये प्रस्तारादयः षट्प्रत्ययाः व्याख्यातव्याः। प्रतीयते सङ्ख्यादिकमेभिस्ते प्रत्ययाः। सम्भावितेषु वृत्तेषु विश्वासापरपर्यायप्रत्ययख्यापकत्वाद्वा। ते च प्रस्ताराद्याः षट्। तदुक्तम्—**प्रस्तारं** इति॥ १॥

तारा—इस प्रकार विभिन्न वृत्तों के निरूपण के अनन्तर इस षष्ठ अध्याय में निरूपित समस्त वृत्तों के बोधनार्थ तथा अनुक्त वृत्तों के स्वरूप-ज्ञानार्थ (उक्त) प्रस्तारादि छः प्रत्ययों का निरूपण किया जा रहा है। (१) प्रस्तार, (२) नष्ट, (३) उद्दिष्ट, (४) एकद्व्यादिलगक्रिया, (५) संख्या और (६) अध्वयोग भेद से 'प्रत्यय' छः प्रकार के होते हैं।

'प्रत्यय' शब्द का अर्थ है—जिससे वृत्तों की प्रतीति हो, उसे प्रत्यय कहते हैं। अर्थात् जिस विधि से वृत्तों के विविध भेदों का स्वरूप ज्ञान हो उसे प्रत्यय कहते हैं। वे प्रत्यय छन्दःशास्त्र में निर्दिष्ट छः प्रकार के उक्त भेदों के रूप में विहित हैं।

यथा—'गायत्री' छन्द सामान्य रूप से तीन प्रकार का बताया गया है। किन्तु प्रस्तार से इसके ६४ भेद हो जाते हैं। यदि इन समस्त भेदों का स्वरूप ज्ञान करना हो तो प्रस्तार विधि से इनके समस्त स्वरूपों का ज्ञान हो जायगा। इन प्रत्ययों का सविस्तार निरूपण अग्रिम पंक्तियों में किया जा रहा है॥ १॥

पादे सर्वगुरावाद्याल्लघुं न्यस्य गुरोरधः।
यथोपरि तथा शेषं भूयः कुर्यादमुं विधिम्॥ २॥
ऊने दद्याद् गुरूनेव यावत् सर्वलघुर्भवेत्।
प्रस्तारोऽयं समाख्यातश्छन्दोविचितिवेदिभिः॥ ३॥

नारायणी—तत्र नष्टोद्दिष्टादीनां प्रस्तारज्ञानाधीनत्वात्प्रस्तारं तावदाह—पाद इति। प्रस्तार्यवृत्तजातिपादस्थवर्णसङ्ख्याकसर्वगुरौ पादे लिखिते सति तत्राद्यात्प्रथमाद् गुरोरधो लघुं स्थापयेत्। प्रथमत्वं च गुर्वपेक्षया न तु वर्णाऽपेक्षया। तथात्वे हि द्वितीयभेदे आद्यगुरोरभावात् तृतीयभेदानुपपत्तेः। तं लघुं न्यस्य यथोपरि पङ्क्तौ तथैवाधस्तनाधस्तनपङ्क्तौ, शेषं पादवर्णसङ्ख्यापूर्त्यवधि द्वितीयादिकं गुरुं लघुं वा लिखेत्, यत्रोपरि गुरुस्तत्राधस्तादपि गुरुर्यत्रोपरि लघुस्तत्राधस्तादपि

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

लघुरित्यर्थः। भूयः पुनरमुं पूर्वोक्तविधिं लेखनरूपं कुर्यात्तृतीयादिपङ्क्तौ गुरुमध्ये आद्यगुरोरधो लघुः शेषं चोपरिवदेवेत्यर्थः॥ २॥

एवं सति तृतीये भेदे आद्यस्थानस्य शून्यत्वात् तत्र किं लेख्यमित्यत आह– ऊनइति। ऊने न्यूने स्थाने गुरूमेव दद्याल्लिखेत्। बहुवचनमुत्तरोत्तर– पङ्क्तावपि न्यूने गुरूणां प्राप्त्यर्थम्। ततश्च भूयःशब्दोऽपि वीप्सार्थो ज्ञेयः। तेन पुनः पुनर्गुर्वपेक्षया आद्याद् गुरोरधो लघुं लिखित्वा शेषमुपरिवदेव सम्पाद्य ऊने स्थाने गुरवो देया इत्यर्थः। प्रस्तारकरणेऽवधिमाह–यावदिति। सर्वलघुः पादः प्रस्तारो वा यावद्भवति तावदेव कुर्यात्। प्रस्तारोक्तिमुपसंहरति–प्रस्तारोयमिति। प्रस्तार्यते इति प्रस्तारः। प्रस्तार्यतेऽनेन च्छन्द इति वा छन्दोविचितिश्छन्दःशास्त्रम् तदुक्तम्–

स्थापयेल्लघुरधो गुरोः पुरः
स्याद्यथोपरि तथैव पूरयेत्।
पश्चिमं च गुरुभिः पुनः पुनः
सर्वलघ्ववधिरित्ययं विधिः॥ इति।

तदिदमुक्तादौ योज्यते। तत्रोक्तायां यथा–ऽ, ।, (२) तस्या द्विविकल्पत्वात्। अत्युक्तायां यथा–ऽऽ, ।ऽ, ऽ ।, ॥ (४)। मध्यायां यथा–ऽऽऽ, ।ऽऽ, ऽ ।ऽ, ॥ऽ, ऽऽ ।, ।ऽ ।, ऽ ॥, ॥ ।, (८) एते मगणादय एव सिद्ध्यन्ति। चतुरक्षरायां प्रतिष्ठायां यथा–ऽऽऽऽ, ।ऽऽऽ, ऽ ।ऽऽ, ॥ऽऽ, ऽऽ ।ऽ, ।ऽ ।ऽ, ऽ ॥ऽ, ॥ऽ, ऽऽऽ ।, ।ऽऽ ।, ऽ ।ऽ ।, ॥ऽ ॥, ऽ ॥ ।, ॥ऽऽ ॥, ॥ ॥, (१६) एवं सर्वेषां समवृत्तानां प्रस्तारे कृते पूर्वपूर्वापेक्षया उत्तरोत्तरस्य द्विगुणा भेदा भवन्ति। अत्र मामकः सङ्ग्रहश्लोकः–

पादं सर्वगुरुं लिखेन्मुखगुरोश्चाधो लघुं पूर्ववच्छेषं मूलगुरोः पुनर्लघुमथो शेषं पुनः पूर्ववत्॥
ऊने न्यस्य गुरूनशेषलघुकं पादं च यावत्पुनः
कार्योऽयं विधिरित्यचीक्लृपदमूं नारायणः प्रस्तृतिम्॥

इति समप्रस्तारः॥

अथार्धसमप्रस्तारः

अर्धसमेषु त्वर्धस्यैव पादतां प्रकल्प्य प्रस्तारः कार्यः, पाद इत्यस्योपलक्षणत्वात्। तदुक्तम्–'अर्धसमस्य प्रस्तारेऽर्धप्रस्तारः कार्य' इति। तद्यथा–द्व्यक्षरपादे च्छन्दसि पादद्वयरूपस्यार्धस्य पादताकल्पनया चतुरक्षरपूर्वोक्तप्रस्तारवत्प्रस्तारे द्व्यक्षरच्छन्दसः षोडश भेदाः। अत्र प्रथम ऽऽऽऽ, षष्ठ ।ऽ ।ऽ, एकादश ऽ ।ऽ ।, षोडशानां ॥॥, भेदानां समवृत्तभेदत्वेनार्धसमभेदकत्वात्तान्परित्यज्य शुद्धार्धसमप्रस्तारः सिद्धो भवति। तदुक्तम्–'प्रस्तुतभेदकारी विकल्पः प्रस्तारक्रमायातोऽपि वर्जनीयः' इति। संङ्ख्यायां तु गणना कार्यैव। अन्यथा नष्टोद्दिष्टाद्यसिद्धेः। ततश्च द्वादश शुद्धार्धसमभेदाः। यथा– ।ऽऽऽ, ऽ ।ऽऽ, ॥ऽऽ, ऽऽ ।ऽ, ऽ ॥ऽ, ॥ ।ऽ, ऽऽऽ ।, ।ऽऽ ।, ऽऽ ॥, ।ऽ ॥, ऽ ॥ ।, एवमन्यत्रापि योज्यम्।

इत्यर्धसमप्रस्तारः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ विषमप्रस्तारः।

विषमाणां तु प्रस्तारे पादचतुष्टयात्मकस्य च्छन्दसः पादस्थानीयत्वं प्रकल्प्य प्रस्तारः कार्यः। उक्तं हि-'विषमप्रस्तारे पादचतुष्टयस्य प्रस्तारः कार्यः' इति। यथा-द्व्यक्षरस्य विषमवृत्तस्य पादकल्पनायां सर्वगुरोः ऽऽऽऽऽऽऽऽ पूर्ववदाद्य-गुरोरधो लघुं विन्यस्य यथोपरीति गुरुसप्तकं लिखित्वा भूयः कुर्यादिति द्वितीय-प्रस्ताराद्यगुरोरधो लघुं परतो यथोपरीति कृत्वा ऊने गुरून्दद्यात्। एवं सर्वलघु-प्रस्तारं यावत्कृते षट्पञ्चाशदधिकं शतद्वयं भेदाः। तेषां मध्ये पूर्ववत्समार्धसमरूप-त्वेन प्रस्तुतविषमप्रस्तारभेदकारित्वात्प्रथमः द्वितीयाच्च सप्तदशः सप्तदशोऽन्त्यं यावद्वर्जनीयाः। ते च यथा-प्रथमः ऽऽऽऽऽऽऽऽ, अष्टादशः ।ऽऽ ऽ।ऽ ऽऽ, पञ्चत्रिंशः ऽ।ऽऽऽ।ऽ, द्विपञ्चाशः ॥ऽऽ॥ऽऽ एकोनसप्ततिः ऽऽ।ऽऽऽ।ऽ, षडशीतिः ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ, त्र्यधिकशतं ऽ॥ऽऽ॥ऽ, त्रिंशत्यधिकशतं ॥ऽ॥।ऽ।, सप्तत्रिंशदधिकशतं ऽऽऽ।ऽऽऽ।, चतुःपञ्चाशदधिकशतं ।ऽऽ॥ऽऽ।, एकसप्तत्यु-त्तरशतं ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।, अष्टाशीत्यधिकशतं ॥ऽ।॥ऽ।, पञ्चोत्तरद्विशतं ऽऽ।ऽऽ॥, द्वाविंशत्युत्तरद्विशतं ।ऽऽ॥ऽ॥, एकोनचत्वारिंशदधिकद्विशतं ऽ।॥ऽ॥।, षट्पञ्चाश-दधिकद्विशतसङ्ख्या ।।।।।।।।, एवं षोडश। एषां मध्ये प्रथम ऽऽऽऽऽऽऽऽ, षष्ठ ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ, एकादश ऽ।ऽऽ।ऽ।, षोडश ।।।।।।।।समभेदाः। अन्ये द्वादशार्धसम-भेदाः। शेषाश्चत्वारिंशधिकशतद्वयं शुद्धविषमभेदाः। एवं सर्वत्र विषमेषु प्रस्तारभेदो ज्ञेयः।

इति विषमप्रस्तारः॥

अथ मात्राप्रस्तारः।

मात्राप्रस्तारे तूपरिपङ्क्तौ यथायोग्यं मात्राद्वयस्थान एकैकगुरुक्रमेण गुरू-ल्लिखित्वा प्रथमगुरोरधो लघुं लिखित्वा शेषमुपरिपङ्क्तिवत्कुर्यात्। एवं सत्येका मात्रा न्यूना भवति, सा लघोः पूर्वं लघुरूपेण देया। तृतीयपङ्क्तौ प्रथमगुरोर्लघुं दत्त्वा शेषमुपरिवल्लिखित्वा न्यूनास्तिस्रो मात्राः, ता लघुगुरुरूपेण लघोः पूर्वं देयाः। एवं क्रमेणाद्यगुरोरधो लघौ दत्ते उपरिवच्छेषे लिखिते शेषा मात्रैका चेदाद्यलघोः पूर्वं लघुरूपेण देया। द्वे चेच्छेषे तदा तत एव पूर्वं गुरुरूपेणैव। एवं युग्मा गुरुरूपेणैवेति। तिस्रश्चेत्तदा एको लघुरेको गुरुश्चेति। पञ्च चेत्तदा एको लघुर्द्वौ गुरू चेत्येवं क्रमेण सर्वलघुप्रस्तारपर्यन्तं लिखेत् अत्रैवं कृते पूर्वोक्तषट्-कलत्रयोदशगणप्रस्तारः यथा-ऽऽऽ, ॥ऽऽ, ।ऽ।ऽ, ऽ॥ऽ, ॥।ऽ, ।ऽऽ।, ऽ।ऽ।, ॥।ऽ।, ऽऽ॥, ॥ऽ॥, ।ऽ॥।, ऽ॥।, ॥॥॥, (१३) पञ्चकलस्य सर्वगुरुभेदाभावा-दादिलघ्वाद्या एव भेदाः। यथा- ।ऽऽ, ऽ।ऽ, ॥।ऽ, ऽऽ।, ॥ऽ।, ।ऽ॥, ऽ॥।, ॥॥। (८) एवमन्यत्रापि। विषमकलप्रस्तारेष्वादौ लघुं दत्त्वा प्रस्तारः कार्य इति॥ ३॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—अब प्रस्तार-निर्माण की विधि बता रहे हैं। प्रस्तार-निर्माण का प्रकार यह है कि समवृत्त के सर्वगुरु वाले पाद में प्रथम गुरु (ऽ) वर्ण के नीचे एक लघु (।) लिखें। शेष दाहिनी ओर के गुरु-लघु को पूर्वपङ्क्ति के समान यथावत् गुरु-लघु लिख दें। इसी प्रकार अन्य पङ्क्तियों की भी पूर्त्ति करें, जब तक कि सभी लघु न हो जायँ तब तक यही क्रिया प्रारम्भ रहेगी। दाहिनी ओर सभी पंक्तियों में गुरु ही लिखें। छन्दःशास्त्र के ज्ञाता इस विधि को 'प्रस्तार' कहते हैं।

यथा सर्वगुरु त्र्यक्षर वृत्त मध्यमा के प्रस्तार भेद से आठ भेद निम्न-निर्दिष्ट हैं—

मध्यमा

१.	ऽ ऽ ऽ	मगण सर्वगुरु प्रथम
२.	। ऽ ऽ	यगण द्वितीय
३.	ऽ । ऽ	रगण तृतीय
४.	। । ऽ	सगण चतुर्थ
५.	ऽ ऽ ।	तगण पञ्चम
६.	। ऽ ।	जगण षष्ठ
७.	ऽ । ।	भगण सप्तम
८.	। । ।	नगण अष्टम॥ ३॥

नष्टस्य यो भवेदङ्कस्तस्याऽर्द्धेऽर्द्धे समे च लः।
विषमे चैकमाधाय तस्याऽर्द्धेऽर्द्धे गुरुर्भवेत्॥ ४॥

नारायणी—अथ प्रस्तारपरिशोधनोपयोगि नष्टमाह—**नष्टस्येति**। अङ्क इत्यतः परं तत्रेत्यध्याहार्यम्। ततश्च नष्टस्य वृत्तस्य योऽङ्कस्तत्र समे सति लो लघुर्लेख्यः, तस्य चार्धेऽर्धे कृतेऽर्धाङ्के समे सति लघुर्विषमे त्वर्धीकरणाशक्तेरेकमधिकं क्षिप्त्वार्धयेत्। नष्टस्याङ्के विषमे सति गुरुर्भवेल्लेख्य इत्यर्थः, तदनन्तरं तस्मिन्विषमे एकमधिकमाधाय संयोज्य योऽङ्को जातस्तस्यार्धे विषमे सति गुरुः, समे तु लघुः। विषमे त्वर्धीकरणाशक्तेरेकमधिकं प्रक्षिप्यार्धयेत्। तस्मिन्नप्यर्धे विषमे गुरुः समे लघुरित्येवं विवक्षितनष्टवृत्ताक्षरसङ्ख्यापूरणं यावत्कुर्यात्। अर्धेऽर्धे इत्युभयत्र वीप्सया पुनः पुनः करणं सूचितम्। यथा त्र्यक्षरे पञ्चमं वृत्तं कीदृगिति प्रश्ने कृते पञ्चमाङ्कस्य विषमत्वाद् गुरुं विन्यस्य सैकस्यार्धे त्र्यङ्कस्य विषमत्वाद् गुरुरेव। पुनः सैकस्यार्धे द्व्यङ्कस्य समत्वाल्लघुरिति। यथा—ऽऽ।, सोऽयं पञ्चमस्तगणः। समोदाहरणं यथा—चतुरक्षरप्रस्तारे चतुर्थं वृत्तं कीदृगिति प्रश्ने समत्वाल्लघुस्तदर्धेऽङ्के द्व्यङ्के पुनर्लघुः शिष्टे द्व्यङ्केऽर्धित एकस्याऽसमत्वाद् गुरुः शिष्टैकाङ्के सैकेऽर्धिते पुनर्गुरुर्यथा—।।ऽऽ, एवं सर्वत्र प्रथमे भेदे प्रथमाङ्कस्य विषमत्वात्समार्धतायामपि विषमत्वात्सर्वगुरुता।

इति समनष्टम्॥

Kashi Maharani Collection,.Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथार्धसमनष्टम्।

अर्धसमानां तु नष्टे पूर्वोदाहृतद्व्यक्षरपादार्धसमप्रस्तारे पञ्चमो भेदः कीदृगिति प्रश्ने पञ्चानां विषमत्वाद् गुरुः, सैकेऽर्धे त्रयाणां विषमत्वात्पुनर्गुरुः सैकेऽर्धे द्वयोः समत्वाल्लघुर्द्वयोरर्धे विषमत्वाद् गुरुरिति सिद्धमर्धम् ऽऽ।ऽ द्वितीयार्धेऽप्येवमेव। अत्र यदि समार्धसमयोः संसृष्टत्वं तदा पञ्चत्वम्, यदा तु शुद्धार्धसमगणना तदा प्रथमस्य सर्वगुरो; समत्वात्त्यागे चतुर्थता। नष्टसिद्धिस्तु संवलितसङ्ख्ययैवेत्युक्तं प्राक् एवं सर्वत्रापि।

इत्यर्धसमनष्टम्॥

अथ विषमनष्टम्।

विषमाणां नष्टे तु द्व्यक्षरविषमवृत्तस्य चतुर्थो भेदः कीदृगिति प्रश्ने उक्तविधाविधाने ॥ऽऽऽऽऽऽ अयं चतुर्थः। अत्रापि समार्धसमसंवलनेन चतुर्थता, शुद्धविषमभेदेषु तु प्रथमस्य समार्धसमतया त्यक्तत्वात्तृतीयता। एवं सर्वेष्वर्धसम-विषमेषु योज्यम्।

इति विषमनष्टम्।

अत्र मदीयः सङ्ग्रहश्लोकः-

पृष्टाङ्के विषमे समे गुरुलघू युग्मे तथैकाधिका।
युग्मेऽर्धे विषमे समे गुरुलघु भूयोऽवसिष्टेऽर्धिते॥
तद्वन्न्यस्य विवक्षितान्गुरुलघून् यावद्विदध्यादिदं
श्रीरामेश्वरभट्टसूनूरकरोन्नष्टे विधामीदृशीम्॥

अथ मात्रावृत्ते नष्टम्।

तत्र लाघवार्थं षण्मात्रप्रस्तारे उदाहरणमुच्यते। षण्मात्रप्रस्तारेषु सप्तमस्थाने कीदृशो गणोऽस्तीति प्रश्ने षडपि कलास्तावत्पृथक्स्थापनीयाः। तत्र प्रथमकलोपर्येकाङ्को देयः, द्वितीयकलायां द्व्यङ्क एव, एकाङ्कात्पूर्वं कस्यचिदंकस्याभावेनैकीकरणासम्भवात्। एककलोपर्यङ्कं द्वितीयकलोपर्यङ्कं चैकीकृत्य त्र्यङ्कं तृतीयकलोपरि, द्व्यङ्कत्र्यङ्कावेकीकृत्य पञ्चाङ्कं चतुर्थोपरि, त्र्यङ्कपञ्चाङ्कावेकीकृत्याष्टाङ्कं पञ्चमोपरि, पञ्चाष्टौ चैकीकृत्य त्रयोदशाङ्कं षष्ठोपरि विन्यसेत्। यथा-

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।

एवं सर्वत्र पूर्वपूर्वकलाद्वयोपरिस्थाङ्कमेकीकृत्य परपरकलासु न्यसेत्। एवं कृते पृष्टाङ्कमन्तिमकलोपर्यङ्के लोपयेत्। अवशिष्टाङ्केऽव्यवहितपूर्वपूर्वतरमेवाङ्कं यथासम्भवं लुम्पेत्। तत्र यस्य यस्याङ्कस्य लोपो भवति तत्तदधस्तनकलास्वग्रिम-कलामादाय गुरुतामेति। एवं यावत्सम्भवं कुर्यात्। प्रस्तुते पृष्टं सप्ताङ्कं त्रयोदशाङ्के

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

विलौप्यावशिष्टषडङ्केऽष्टौ न लुप्यन्त इति पञ्च लोपयेत्, अवशिष्टे एकाङ्के त्रयो द्वौ वा न लुप्येते इति एकाङ्कस्य लोपे शून्यता। एवं कृते पञ्चमैकाङ्कलुप्तत्वात्तदधस्तने मात्रे चतुर्थप्रथमे पञ्चमद्वितीयमात्रे आदाय गुरुतां गच्छतः। एवं कृते सिद्धः षट्कलः सप्तमप्रस्तारः।

१	३	५	१३
ऽ	।	ऽ	।
२		८	

एवं मात्रावृत्तेषु सर्वेषु ज्ञेयम्। बह्वङ्कवृद्धिप्रसङ्गात्तु नोदाहृतमस्माभिः। यदाहुः–

नष्टे सर्वाः कलाः कार्या अङ्कन्यासस्तु पूर्ववत्।
पृष्टोऽङ्कः शेषके लोप्यः परोऽप्यङ्कोऽत्र लुप्यते॥
यस्य यस्य भवेल्लोपो व्युत्क्रमेण पुनः पुनः।
तदधो गुरुतामेति परया कलया सह॥ इति।

उद्दिष्टस्य रीतेः पूर्वमुक्तत्वात्पूर्ववदिति। उद्दिष्टवदित्यर्थः। आर्याया मात्रावृत्तत्वादनया रीत्या नष्टसिद्धावपि तन्मात्रविषयो लघुरुपाय आर्याप्रकरणे प्रसङ्गादस्माभिरुक्तः॥ ४॥

इति नष्टम्॥

तारा–प्रस्तार-निरूपण के अनन्तर प्रस्तार साधन के उपयोगी नष्ट प्रत्यय का निरूपण करते हैं। यदि किसी छन्द का कोई भेद ज्ञात न हो तो उसे ज्ञात करने की विधि को 'नष्ट प्रत्यय' कहते हैं। प्रक्रिया निम्ननिर्दिष्ट है–

जिस भेद का 'नष्ट प्रत्यय' ज्ञात करना हो, उसका अङ्क यदि सम हो अर्थात् २, ४, ६, ८, १० आदि हों तो लघु (।) लिखें। और यदि अङ्क संख्या विषम अर्थात् १, ३, ५, ७, ९ हों तो गुरु (ऽ) लिखें। तत्पश्चात् उस मूल संख्या का आधा-आधा करके सम-विषम जो भी संख्या आवे उसके लिए भी उक्त क्रम से लघु-गुरु (। ऽ) विकार लिखते चलें। अर्थात् आधा यदि सम अङ्क हुआ तो लघु (।) और विषम अङ्क है तो गुरु (ऽ) लिखना चाहिए। किन्तु जहाँ विषम अङ्क (१, ३, ५, ७, ९) का आधा करना हो वहाँ पर विषम संख्या में एक अङ्क जोड़कर जब सम संख्या हो जाय तब उसका आधा करके सम-विषम विकार बनाना चाहिए।

जैसे-६ अङ्क का आधा ३ हुआ, इस विषम ३ का आधा पूर्ण अङ्क में होना सम्भव नहीं है, अतः ऐसी स्थिति में एक जोड़ने पर ४ योग हो जायगा, अब ४ का आधा पूर्ण अङ्क में हो जायगा। इस प्रकार ४ का आधा २ हुआ, यह सम अङ्क होने से लघु (।) विकार लिखा जायगा, २ का आधा १ आने पर विषम होने से गुरु (ऽ) लिखेंगे। यह प्रक्रिया वृत्तसमाप्ति पर्यन्त करनी चाहिए। यथा–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

उदाहरण–यदि प्रश्न हो कि त्र्यक्षर वाले मध्यावृत्त के पञ्चम भेद का स्वरूप कैसा होगा। इस प्रश्न का उत्तर उक्त नष्टप्रत्यय प्रक्रिया से निर्दिष्ट रूप में निकालना चाहिए। पञ्चम अङ्क विषम है अतः सर्वप्रथम गुरु (ऽ) लिखें। अब पञ्चम अंक विषम होने से इसका आधा पूर्ण संख्या में आना सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में इसमें एक अंक जोड़ दें तो ६ का अंक होगा अब इसका आधा कर दें तो ३ आयेगा यह अंक भी विषम है अतः इसके लिए भी गुरु ही लिखें। पुनः ३ का अंक विषम होने के कारण दो भागों में बराबर पूर्ण अंक में नहीं आयेगा, अतः इस ३ में भी १ जोड़ देने पर ४ हो जाता है, अब ४ का आधा २ हुआ तो यह सम अंक होने से इसके लिए लघु लिखेंगे। त्र्यक्षर वृत्त होने के कारण तीन ही बार प्रक्रिया की गयी। तदनन्तर नहीं की जायेगी। इस प्रकार उत्तर मिला–त्र्यक्षर मध्या वृत्त का पञ्चम भेद ऽऽ। दो गुरु एक लघु वाला होगा। इसी प्रक्रिया को **नष्टप्रत्यय** प्रक्रिया कहते हैं। इसकी उपयोगिता विस्तृत वृत्तभेद ज्ञात करने में है।

इसी प्रकार यदि चतुरक्षर वृत्त के चतुर्थ भेद का स्वरूप कैसा होगा, यह ज्ञात करना हो तो सर्वप्रथम ४ का अंक सम है, अतः इसके लिए (।) लघु लिखें फिर ४ का आधा किया तो २ हुआ, यह भी सम है, इसके लिए भी (।) लघु ही लिखें। अब २ का आधा किया तो १ आया, १ विषम अंक है; अतः इसके लिए (ऽ) गुरु लिखें। अब १ का आधा नहीं हो सकता; अतः इस एक में एक और जोड़ दें तो दो हो गया, २ का आधा फिर १ आया। एक विषम होने के कारण इसके लिए भी गुरु (ऽ) ही लिखेंगे। इस प्रकार चतुरक्षर **प्रतिष्ठावृत्त** का चतुर्थ भेद ॥ ऽऽ दो लघु दो गुरु वाला होगा यह उत्तर '**नष्टप्रत्ययप्रक्रिया**' से ज्ञात हो गया॥ ४॥

उद्दिष्टं द्विगुणानाद्यादुपर्यङ्कान् समालिखेत्।
लघुस्था ये तु तत्राङ्कास्तैः सैकैर्मिश्रितैर्भवेत्॥ ५॥

नारायणी–अथोद्दिष्टम्। अथ प्रस्तारशोधनायोपयुक्तमुद्दिशति–उद्दिष्टमिति। आद्यादक्षरादारभ्योपर्याद्यादेकाङ्कादारभ्य द्विगुणान्द्विगुणानङ्कानुत्तरोत्तरं लिखेत्। तत्र लेखने कृते सति लघुलेखोपरिस्था येऽङ्कास्तैर्मिश्रितैर्यथास्थानं योजितैरेकेनाधिकेन सहितैरुद्दिष्टं भवेदिति आद्यद्विगुणशब्दयोरावृत्त्या व्यवहितान्वयेन च व्याख्येयम्। उपरीत्युपलक्षणम्। अधोलेखनेऽप्यक्षतेः। यथा–त्र्यक्षरे प्रस्तारेऽन्तगुरुभेदः कतिथ इति प्रश्ने न्यासः–

१	२	४
।	।	ऽ

अत्र लघुस्थैकाङ्कद्वयङ्कमेलने त्रय एकसहिताश्चत्वारो भवन्ति ततश्चतुर्थभेदं कथयेत्। एवं चतुरक्षरे आद्यन्तगुरुः कतिथ इति प्रश्ने न्यासः–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

१	२	४	८
ऽ	।	।	ऽ

अत्र लघुस्थाभ्यां द्वयङ्कचतुरङ्काभ्यां सैकाभ्यां सप्त भवन्ति, ततः सप्तमोऽयं भेदः। एवं सर्वत्र।

इति समोद्दिष्टम्॥

अथार्धसमोद्दिष्टम्।

अर्धसमेऽपि चतुरक्षरार्धे ऽ ऽ । ऽ अयं प्रस्तारः किंसङ्ख्याक इति प्रश्ने न्यासः-

१	२	४	५
ऽ	ऽ	।	ऽ

लघुस्थे चतुरङ्के सैकं पञ्चमो भेदः समार्धसमसंसृष्टतायाम्, शुद्धार्धसमेषु पूर्वन्यायेन चतुर्थः। एवं सर्वत्रः।

इत्यर्धसमोद्दिष्टम्।

अथ विषमोद्दिष्टम्।

विषमेष्वपि द्वयक्षरपादकविषमवृत्ते।।ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, अयं भेदः कतम इति प्रश्ने न्यासः। यथा । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽऽ, (१२८) अत्र लघुस्थावेकद्वयङ्कौ सैकौ चत्वारस्तावत्सङ्ख्याकं समार्धसममेलनेन जानीयात्, शुद्धविषमेषु तु तृतीयम्। एवं सर्वेषु विषमेषु ज्ञेयम्। अत्र सङ्ग्रहश्लोक-

प्रथमाद् द्विगुणानङ्कान्प्रस्ताराद्यादुपर्यधो वास्येत्।
लघुगुरुरङ्कैः सैकैर्मिलितैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम्॥

इति विषमोद्दिष्टम्॥

अथ सूत्रोक्तोद्दिष्टप्रकारः

सूत्रे तूद्दिष्टे प्रकारान्तरमुक्तम्। यद्वृत्तं जिज्ञासेत्तत्तद्वृत्तं भूमौ प्रस्तार्य तन्मध्यस्थलघुषु योऽन्त्यो लघुस्तदुपर्यधो वैकाङ्कं लिखित्वा तत्रैव तं द्विगुणयेत्। ततस्तत्पूर्वस्मिन्गुरौ लघौ वा तमङ्कं द्विगुणितं कृत्वा पूर्ववन्न्यसेत्। यदा त्वेवंप्रकारे क्रियमाणे गुरुमापद्यते सङ्ख्या तदा तन्मध्ये एकं त्यक्त्वा पुनरुत्तरोत्तरं द्विगुणितं कृत्वा गुरुस्थाने एकं त्यक्त्वा पुनर्द्विगुणनादिक्रमेण यावत्प्रस्तारपूर्तिं कुर्यात्, एवं कृते या सङ्ख्या सम्पद्यते तावतिथं तद् वृत्तं जानीयात्। यथा चतुरक्षरे गुरुलघू द्वौ गुरू चेति वृत्तं कतिथमिति प्रश्ने न्यासः-

२	२		
ऽ	।	ऽ	ऽ
४	२		

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अत्र लध्वधःसङ्ख्याङ्कं द्विगुणयेत्, तं च पूर्वस्माद् गुरोरधो।

द्विगुणितं चतुरङ्कं विलिख्य गुरुस्थसङ्ख्याया एकं जह्यात्। अवशिष्टस्य-ङ्कस्तावतिथं वृत्तमिति।

इति सूत्रोक्तोद्दिष्टप्रकारः॥

अथ मात्रावृत्ते उद्दिष्टम्।

उद्दिष्टवृत्तप्रस्तारं कृत्वा प्रथमकलायां प्रथमाङ्कं दद्यात्, द्वितीयकलायां नष्टन्यायेन द्व्यङ्कम्, ततस्तृतीयकलायामेकद्व्यङ्कौ मेलयित्वा त्र्यङ्कम्, चतुर्थ्यां द्वित्र्यङ्कौ मेलयित्वा पञ्चाङ्कमित्येवं पूर्वपूर्वाङ्कद्वयमेलनं कृत्वोत्तरोत्तरकलायां न्यसेन्नष्टवत्। गुरौ तु मात्राद्वयस्य वर्तमानत्वादङ्कासङ्कयार्थमेकोङ्क उपरि देयो द्वितीयस्त्वध इति विशेषः। एवमङ्केषु स्थापितेष्वन्त्यकलायां योऽङ्कस्तन्मध्ये गुरुशिरसि स्थिता येऽङ्कास्तानेकीकृत्य पातयेत्, अवशिष्टां सङ्ख्यां पृष्टवृत्तस्थां जानीयात्। यथा–आद्यन्तगुरुः षट्कलप्रस्तारः कतिथ इति पृष्टे न्यासः–

१	३	५	८
ऽ	।	।	ऽ
२			१३

अत्र गुरुशिरस्येकाङ्काष्टांकौ मिलितौ नव तेऽन्त्यकलास्थत्रयोदशस्वपनेयाः अवशिष्टाश्चत्वारः सा सङ्ख्योद्दिष्टप्रस्तारस्य। एवं सर्वेषु मात्रावृत्तेष्वपि ज्ञेयम्।

इति मात्रोद्दिष्टम्।

तदुक्तम्–

पूर्वस्यां प्रथमः समोऽङ्क उपरि स्थाप्यो युगायां द्वयं
संयुज्यैकयुगौ त्रयं त्रिषु कलामूर्ध्नि द्वयेन त्रयम्॥
एकीकृत्य च पञ्चकं जलनिधावेवं कृते लुप्यते
शिष्टे तद्गुरुमूर्ध्वकाङ्क इह चेदुद्दिष्टबोधस्तदा॥ इति।

आर्यासु तु प्रकारान्तरमपि तत्प्रकरण एवाभ्यधायि॥ ५॥

तारा–नष्टप्रत्यय-निरूपण के अनन्तर क्रमप्राप्त उद्दिष्ट प्रत्यय का विवेचन कर रहे हैं। जिस प्रक्रिया से किसी वृत्त के भेद की क्रमसंख्या ज्ञात की जाती है उसे 'उद्दिष्टप्रत्यय' कहते हैं। अर्थात् प्रश्नवृत्त का स्वरूप देखकर यह वृत्त के किस भेद का स्वरूप है? उद्दिष्ट प्रत्यय से इसका उत्तर निकल आता है।

इसके निकालने की प्रक्रिया यह है कि जो स्वरूप प्रश्न में निर्दिष्ट है उसके प्रथम अक्षर पर १ अङ्क लिखें, उसे द्विगुणित कर दूसरे अक्षर पर लिख दें, पुनः इसी क्रम से द्विगुणित अंक क्रमशः सभी अक्षरों पर अंकित कर दें। तत्पश्चात् (।) लघु अक्षरों में अंकित सभी अंकों को जोड़ दें और उसमें १ पुनः जोड़ें। इस प्रकार जो संख्या प्राप्त होगी वही भेद उस वृत्त का जानना चाहिए। यथा–

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

उदाहरण–जैसे प्रश्न है कि त्र्यक्षर मध्यावृत्त का दो लघु एक गुरु ॥ ऽ वाला अर्थात् अन्त्यगुरु वाला भेद क्रमशः कौन-सा भेद है। अब इसका उत्तर इस प्रक्रिया से सहज ही ज्ञात हो जायगा। इसे इस प्रकार निकालें–

१	२	४
।	।	ऽ

इसमें प्रथम अक्षर के ऊपर १ लिखा, एक का दुगुना २ द्वितीय अक्षर के ऊपर लिख दिया। पुनः दो को दुगुना कर ४ तृतीय अक्षर पर लिखे। अब लघु अक्षरों के अंकों को जोड़ दें तो दो लघु वर्णों के ऊपर १-२ लिखा है। दोनों को जोड़कर ३ तीन हो गया। इसमें १ और जोड़ दें तो ४ चार हो गया। अतः उत्तर मिला कि त्र्यक्षरवृत्त मध्या का अन्त्यगुरु वाला भेद इस वृत्त का चौथा भेद है। यह उद्दिष्टप्रत्यय प्रक्रिया से सहज ही ज्ञात हो गया॥ ५॥

वर्णान् वृत्तभवान् सैकानौत्तराधर्य्यतः स्थितान्।
एकादिक्रमतश्चैनामुपर्युपरि निक्षिपेत्॥ ६॥
उपान्त्यतो निवर्तेत त्यजेदेकैकमूर्ध्वतः।
उपर्य्याद्याद् गुरोरेवमेकद्व्यादिलगक्रिया॥ ७॥

नारायणी–अथैकद्व्यादिलगक्रिया। अथोक्तादिषु सर्वगुर्वेकलघुद्विलघुत्रिलघ्वादिपादकवृत्तकथनद्वारा प्रस्तारशोधनायैकद्व्यादिलगक्रियामाह–वर्णानिति। उक्तादिवृत्तनिष्ठान्वर्णान्वर्णसङ्ख्याकानङ्कान्सैकानेकेनाधिकेन सहितानौत्तराधर्यत उत्तराधरभावेन स्थितान्कुर्यादित्यध्याहारः। औत्तराधर्यत इति 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' (पा. सू. ५-१-१२४) इति ब्राह्मणादित्वाद्भावे ष्यञ्। ततस्तसिः। एतान्पूर्वस्थापितानङ्कानेकद्व्यादिक्रमेणोपर्युपर्यङ्के निक्षिपेन्मेलयेत्। मेल्यमानाङ्कसमसङ्ख्याया उपरि क्षेपो मेलनं, न तु स्वस्यैव। स्वरूपतस्तत्स्थाने शून्यताप्रसक्त्या द्वितीयादिमेलनावृत्त्यभावापत्तेः। अधस्तनमेकाङ्कं तदुपर्येकाङ्कं मेलयित्वा द्व्यङ्कं कुर्यात्, तं तृतीयैकाङ्के संयोज्य त्र्यङ्कं कुर्यादित्येवमुत्तरोत्तरं कुर्यादित्यर्थः। उपान्त्यस्याप्यन्तमेलने प्रयुक्तेऽपवादमाह–उपान्त्यत इति। उपान्त्यपर्यन्तं मेलनं कृत्वा तमन्त्येऽमेलयित्वैवं प्रत्यावृत्त्येकैकं त्यजन्निवर्तेत विरमेत्। अन्त्यश्च प्रथममेलने सर्वोपरितनः, द्वितीयमेलनावृत्तौ तदधोभावी द्वितीयः, तृतीयावृत्तौ तदधोभावी तृतीय इत्येवमुत्तरोत्तरो ज्ञेयः। उपान्त्यश्चान्त्याधोभावी। प्रतिमेलनावृत्तकमेकमङ्कं त्यक्त्वाऽधस्तनान्मेलयेदिति फलितार्थः। एकैकमिति वीप्सया सर्वाधस्तनाङ्कपर्यन्तं पुनः पुनर्मेलनावृत्तिः कार्येत्यसूसुचत्। सिद्धमाह–उपरीति। एवं कृत आद्यात्प्रथमाद् गुरोः सर्वगुरोर्भेदादुपर्यनन्तरमेकद्व्यादीनां लघूनां क्रिया ज्ञेयेति शेषः। प्रथममेकः सर्वगुरुस्तदधस्तनाङ्कसङ्ख्या एकलघवः तदधोऽङ्कसङ्ख्या द्विलघवः, चतुर्थाङ्कसङ्ख्यास्त्रिलघवः,

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

एवमधोभाव्यङ्कसङ्ख्यायाश्चतुर्लघ्वादिभेदा ज्ञेया इत्यर्थः। एवं प्रथमः सर्वगुरुः, द्वितीयाङ्के एकगुरवः, तृतीयाङ्के द्विगुरवः, चतुर्थाङ्के त्रिगुरवः, इत्यादिप्रकारेण गुरुक्रिया। अत्र त्र्यक्षरे उदाहरणं १.१.१.१ एवं सैकान्वृत्तवर्णसङ्ख्यानेकाङ्का-न्न्यसेत्। चतुरक्षरे च यथा–१.१.१.१.१. ततोऽधस्तनमेकाङ्के तदुपरिस्थैकाङ्के संयोज्य द्व्यङ्कं कुर्यात्। यथा–त्र्यक्षरे १.१.२.१. चतुरक्षरे च यथा–१.१.१.२.१. द्वितीयं तृतीये मेलयेत्। आद्ये यथा–१.३.२.१. द्वितीये यथा १.१.३.२.१. तृतीयं चतुर्थे मेलयेत्। चतुरक्षरोदाहरणे १.४.६.३.२.१.। त्र्यक्षरे तु न मेलयेत्। उपान्त्यतो निवर्तेतेत्युक्तेः। पुनस्त्र्यक्षरेऽधस्तनं द्वितीये मेलयेत्। यथा–१.३.३.१. त्र्यक्षरे एतावतैव सिद्धिः। चतुरक्षरे त्वधस्तनं द्वितीये मेलयेत्। यथा–१.३.३.४.१. द्वितीयं तृतीये यथा–१.४.६.४.१. ततो मेलनं नास्ति। एवं त्र्यक्षरे एकः सर्वगुरुर्भेदः, त्रय एकलघवः, त्रयो द्विलघवः, एक सर्वलघुरिति। गुरुक्रियायां त्वेकः सर्वगुरुः, त्रय एकगुरवः त्रयो द्विगुरवः, एकः सर्वलघुरिति सिद्धम्। चतुरक्षरे एकः सर्वगुरुः–ऽऽऽऽ चत्वारः एकलघवः– ।ऽऽऽ (१), ऽ।ऽऽ (२), ऽऽ।ऽ (३), ऽऽऽ।(४), षट् द्विलघवः– ।।ऽऽ (१), ।ऽ।ऽ (२), ऽ।।ऽ (३), ।ऽऽ। (४), ऽ।ऽ। (५), ऽऽ।। (६), चत्वारस्त्रिलघवः– ।।।ऽ (१), ऽ।।। (२), ।ऽ।। (३), ।।ऽ। (४), एकः सर्वलघुभेदः– ।।।।, एवं गुरुभेदा अपि। एवं सर्वत्र।

इति समलगक्रिया॥

अथार्धसमलगक्रिया।

अर्धसमे तु विशेषः। द्व्यक्षरार्धसमानां षोडशभेदाः पूर्वोक्तरीत्या। तन्मध्ये प्रथमषष्ठैकादशषोडशांश्चतुरो भेदान्हापयेत्। यथा–चतुरक्षरप्रस्तारे एकद्व्या-दिलगक्रियायां कृतायां प्रथमान्त्यौ त्याज्यौ समत्वात् षष्ठैकादशौ द्विलघुत्ववृत्त-सङ्ख्याबोधके षडङ्के त्याज्यौ। एवं कृते न्यासः ४ ४ ४, ततश्चत्वार्येकलघूनि, चत्वारि द्विलघूनि, चत्वारि त्रिलघूनि वृत्तानीति द्व्यक्षरार्धसमभेदा द्वादश। एवमन्यत्राप्येकद्व्यादिलघुकान्समभेदानेकद्व्यादिलघुकवृत्तसङ्ख्याबोधकाङ्के पातयित्वाद्यान्त्यौ च भेदौ त्यक्त्वाऽवशिष्टाङ्कैरेकद्व्यादिलगक्रियाऽर्धसमेषूह्या।

इत्यर्धसमलगक्रिया॥

अथ विषमलगक्रिया।

विषमेषु तु द्व्यक्षरपादस्य कथ्यते। अष्टाक्षरजातेस्तावदेकद्व्यादिलगक्रियायां पूर्वोक्तरीत्या कृतायां न्यासः। १। ८। २८। ५६। ७०। ५६। २८। ८। १। अत्र समार्धसमरूपत्वात्प्रस्तारकरणोक्तप्रकारेण षोडश भेदा यथास्थानं पात्याः। यथा एकलघवो हेयेषु न सन्ति, द्विलघवश्चत्वारस्तदीयेष्टाविंशत्यङ्के हेयाः, त्रिलघवो हेयेषु न सन्त्येव, चतुर्लघवः षट् सप्तत्यङ्के हेयाः पञ्चलघवस्तु हेयेषु न सन्त्येव,

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

षड्लघवश्चत्वारोऽष्टाविंशत्यङ्के हेयाः, सप्त लघवो न सन्तीति आद्यान्त्यौ चैकाङ्कौ त्याज्यौ। एवं कृते द्वयक्षरविषमस्य एकद्व्यादिलगक्रियाङ्कन्यासः– ८। २४। ५६। ६४। ५६। २४। ८। अत्राष्टावेकलघवश्चतुर्विंशतिः द्विलघव इत्यादि पूर्ववत्कथनीयम्। एवमन्येष्वपि विषमेष्वपि ज्ञेयम्।

॥ इति विषमलगक्रिया॥

सङ्ग्रहश्लोकः–

छन्दोवर्णमितानुपर्यधर - गान्सैकान्मुखाङ्कांल्लिखे-
देकैकं शिरसि त्यजन्नधरगानूर्ध्वेषु संयोजयेत्।
भेदः सर्वगुरुर्मुखे तदनु चैकद्व्यादिलघ्वन्विता
प्रान्ते सर्वलघुः क्रिया लघुगतैवं स्याद् गूरूणामपि॥

अथ भास्कराचार्योक्तलगक्रियाप्रकारः।

भास्कराचार्यैस्तु लीलावत्यां लघुगुरुक्रियायां प्रकारान्तरमभ्यधायि। तदुच्यते–वृत्तपादाक्षरसङ्ख्याङ्कानेकाद्यङ्कानुपरि व्युत्क्रमेण विन्यस्य तदधस्तनानेव क्रमेण न्यसेत्। ततोऽधस्तनेन स्वोपरिस्थो भाज्यः, भागेन लब्धेन तदग्रिमो गुण्यः, तदधस्तनेन च भाज्यः। लब्धेनाग्रिमं गुणयेत्, तदधस्तनेन भागं हरेत्, इत्येवं यावदङ्कसमाप्तिकार्यम्। लब्धाङ्काश्च क्रमेण स्थाप्याः। एवं कृते लब्धाङ्केषु प्रथमेनैकगुरवो ज्ञेयाः, द्वितीयेन द्विगुरव इत्यादि ज्ञेयम्। इदं षडक्षरपादे गायत्रीवृत्ते योज्यते न्यासः–

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

अत्रैकेन षण्णां भागे लब्धाः षट्, षडभिः पञ्चसु गुणितेषु ३० द्वाभ्यां भक्ते लब्धाः १५, एतैश्चतुर्षु गुणितेषु ६० त्रिभिर्भागे लब्धं २०, एभिस्त्रिषु गुणितेषु ६० चतुर्भिर्भागे लब्धं १५, एतैर्द्वयोर्गुणनेन ३० पञ्चभिर्भागे लब्धं ६, एतैरेकस्मिन्गुणितं षडेव षड्भिर्भागे लब्धं १, एतेषां क्रमेण विभक्तानां न्यासः– ६।१५।२०।१५।६।१ एकगुरवः ६, द्विगुरवः १५, त्रिगुरवः २०, चतुर्गुरवः १५, पञ्चगुरवः ६, सर्वगुरुः सर्वलघुरेकः स्वतःसिद्ध एव। एवमन्यत्रापि योज्यम्। तदाहुर्लीलावतीकाराः–

एकाद्येकोत्तरा अङ्का व्यस्ता भाज्याः क्रमस्थितैः।
परः पूर्वेण सङ्गुण्यस्तत्परस्तत्परेण च॥
एकद्वित्र्यादिभेदाः स्युरिदं साधारणं स्मृतम्।
छन्दश्चित्युत्तरे छन्दस्युपयोगोऽस्ति तद्विदाम्॥ इति।

अथ सूत्रकारोक्तौ लगक्रियाप्रकारः।

अथैकद्व्यादिलघुगुरुक्रियासिद्ध्यर्थमेव सूत्रकारोक्तो मेरुप्रस्तारः। तत्र प्रथममेकं चतुरस्रं कोष्ठं लिखेत्। तदध उभयतोऽर्धनिष्क्रान्तं कोष्ठद्वयम्।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तदधस्तथैव त्रयम्। तदधस्तथैव चतुष्टयम्। इत्येवं षड्विंशतिकोष्ठलेखनं यावत्कार्यम्। उपरि कोष्ठे एकाङ्को देयः तथा प्रतिपङ्क्ति आद्यन्तकोष्ठेषु एकाङ्क एव। तृतीयपंक्तौ मध्यकोष्ठे शून्ये तदुपरिगतकोष्ठद्वयगतैकाङ्कावेकीकृत्य द्वयङ्कं न्यसेत्। एवं चतुर्थपंक्तौ मध्यकोष्ठयोरुपरिगतकोष्ठद्वयाङ्कमेकीकृत्य त्र्यङ्कौ। एवं सर्वत्रोपरितनकोष्ठद्वयाङ्कमेकीकृत्याधस्तनकोष्ठे दद्यात्। एवं षड्विंशतिकोष्ठकपंक्ति यावत्कार्यम्। तदुक्तम्–

आदावेकं लिखेत्कोष्ठं तदधो द्वे संल्लिखेत्।
तदधस्त्रीणि कोष्ठानि एवं रूपेण वर्धयेत्॥
आदावन्ते लिखेदेकं मध्यं कोष्ठं च पूरयेत्।
लेख्यकोष्ठोपरिप्राप्तरग्रिमाङ्केन संयुतैः॥ इति।

					१								
				१	१	१	२						
			२	१	२	१	४						
		३	१	३	३	१	८						
	४	१	४	६	४	१	१६						
५	१	५	१०	१०	५	१	३२						
६	१	६	१५	२०	१५	६	१	६४					
७	१	७	२१	३५	३५	२१	७	१	१२८				
८	१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१	२५६			
९	१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१	५१२		
१०	१	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१	१०२४	
११	१	११	५५	१६५	३३०	४६२	४६२	३३०	१६५	५५	११	१	२०४८
१२	१	१२	६६	२२०	४९५	७९२	९२४	७९२	४९५	२२०	६६	१२	१	४०९६

(एवं षड्विंशतिकोष्ठकपंक्ति यावत्पूरणीयम्।)

अत्रोद्धारप्रकारोऽयं मेरोः–अत्र द्विकोष्ठायां द्वितीयपंक्तौ एकाक्षरपादाया उक्ताया लगक्रिया। तृतीयायां द्वितीयपंक्तौ अत्युक्ताया इत्येवं क्रमेण षड्विंशतिजातीनां निवेशः। स चैकाङ्कोपरिगतप्रतिपङ्क्तिगतद्वितीयकोष्ठस्थाङ्केन ज्ञेयः। तत्र द्वितीयपंक्तावेकं सर्धलघु, एकं सर्वगुरूक्तायाम्। तृतीयपङ्क्तावेकं सर्वगुरु द्वे एकलघूनीं एकं सर्वलघ्वित्यत्युक्तायाम्। चतुर्थपंक्तावेकं सर्वगुरु, त्रीण्येकलघूनि, त्रीणि द्विलघूनि, एकं सर्वलघ्वितिप्रकारेणैकद्व्यादिलघुगुरुक्रिया सर्वेषु ज्ञेयेति सूचितमेरुप्रस्तारः। गुरुलघुसङ्ख्यासूचकत्वात्सूचिः मेरुसस्थानत्वाच्च मेरुरिति।

इति मेरुप्रस्तारः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ पताकाप्रस्तारः।

अत्रः प्रस्तारे कृते सर्वगुरुः कुत्र स्थानेऽस्ति, तदपेक्षयैकन्यूनगुरुः कुत्रास्ति। ततोऽप्येकन्यूनगुरुः कुत्रास्ति, इत्येवं प्रकारे प्रश्ने तत्स्थानज्ञानार्थं पताकाप्रस्ताराः कथ्यन्ते। यत्सङ्ख्याक्षरप्रस्तारे प्रश्नस्तदक्षरसङ्ख्याकान्कोष्ठानेकाधिकांल्लिखित्वा तेषूद्दिष्टवदेकाङ्कादारभ्योत्तरोत्तरद्विगुणा अङ्का देयाः। ततः प्रथमाङ्केन द्व्यादीनां संयोजनं कृत्वा द्व्यङ्कादधः कोष्ठकान्कृत्वा तेषु संयुक्ताङ्कान्लिखेत्। अन्तिमेन प्रथमाङ्को न योज्यः। तावत्सङ्ख्यस्य तत्र वृत्तस्याभावात्। ततो द्वितीयाङ्कं तृतीयकोष्ठाद्यङ्कैरुपान्त्यपर्यन्तैः संयोज्य तृतीयकोष्ठाधःकोष्ठकान् कृत्वा तेषु लिखेत्, द्वितीयाङ्ककोष्ठाधःस्थैरप्यङ्कैस्तृतीयकोष्ठस्थितचतुरङ्कं संयोज्य तस्यामेव पङ्क्तावधो लिखेत्, एवं चतुरङ्कमष्टादिभिः संयोज्याष्टमाङ्काऽधो लिखेत्, तदधोऽपि चतुरङ्काधः पङ्क्तिस्थैरष्टमाङ्कं संयोज्य लिखेत्, एवं सर्वत्र यावदङ्कसमाप्ति-लेख्यम्। एवं क्रियमाणे यत्र प्रस्तारसङ्ख्याधिकसङ्ख्या पठ्यते सा न लेख्या। एकत्र लिखिता चापरत्र न लेखितव्या किन्तु तदग्रिमसङ्ख्यायोगस्तदधः सङ्ख्यायोगो वा कार्यः। एवं सर्वत्र। तथा च प्रथमस्थाने सर्वगुरुः द्वितीय-पङ्क्तिस्थेषु द्वितीयादिस्थानेषु विवक्षितसर्वगुरुमध्ये एकं न्यूनं कृत्वा तावद्गुरुक-भेदस्थानानि। एवं तृतीयादिपङ्क्तिष्वेकैकगुरुन्यूनप्रस्तारस्थानानि। यद्वा प्रथमः सर्वगुरुर्द्वितीयपङ्क्तावेकलघुस्थानानि, तृतीयपङ्क्तौ द्विलघुस्थानानीत्यादि ज्ञेयम्। तदुक्तम्–

एको द्वावथ चत्वारस्ततोऽष्टाविति वर्धनम्।
पूर्वं परेण संयोज्य तदधो लेखयेद् बुधः॥
अन्तिमाङ्कावधिं नैव लङ्घयेदत्र कुत्रचित्।
एकत्र लिखितं प्राज्ञः पुनरन्यत्र नो लिखेत्॥

अत्रोदाहरणमेकाक्षरे १। २ अस्य द्विविकल्पत्वादेकस्थानस्थ एकगुरुः, द्वितीयस्थ एकलघुरिति। एतावतैव सिद्धिः। द्व्यक्षरे यथा–

१	२	४
	३	

अत्रैकाङ्कद्व्यङ्कयोः संयोजने त्र्यङ्को द्व्यङ्काधोः लेख्यः, तस्य चतुर्विकल्प-त्वात्तावतैव सिद्धिः। प्रथमस्थानस्थैकः सर्वगुरुः, द्वितीयतृतीयस्थानस्थौ एकगुरुरेकलघुर्वा, चतुर्थस्थानस्थः सर्वलघुरिति। त्र्यक्षरे यथा–

१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अत्र पञ्चाङ्कस्य चतुरङ्कयोजनं न कार्यम्, नवममेदाभावात्। तेन त्र्यङ्कस्य चतुरङ्कस्य संसृष्टौ सप्तषडधो निवेश्या इति। चतुरक्षरे पताका यथा–

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	१०	१४	
	९	७	१५	
		११		
		१३		

अत्रैकं द्वाभ्यां सह त्रयं द्वयङ्काधः, एकं चतुर्भिः सह पञ्च त्र्यङ्काधः, एकाष्टयोगे नव पञ्चाधः, द्वित्रितुर्योगे षट् चतुरधः, द्वयष्टयोगे दश षडधः, द्विषोडशयोगो न कार्यः। त्रित्रितुर्योगे सप्त दशाधः, पञ्चचतुर्योगे नव एकत्र लिखितत्वान्न लेख्याः, त्र्यष्टयोग एकादश सप्ताधः, त्रिषोडशयोगो न कार्यः। पञ्चाष्टयोगे त्रयोदश एकादशाधः, चतुरष्टयोगे द्वादशाष्टाधः, चतुःषोडशयोगो न कार्यः, षडष्टयोगे चतुर्दश द्वादशाधः, दशाष्टयोगो न, सप्ताष्टयोगे पञ्चदश चतुर्दशाधः। अत्र प्रथमस्थाने सर्वगुरुः, द्वित्रिपञ्चनवस्थाने त्रिगुरवः एकलघवो वा, चतुःषट्दशसप्तैकादशत्रयोदशसु स्थानेषु द्विगुरवो द्विलघवो वा, अष्टद्वादश–चतुर्दशपञ्चदशस्थानेष्वेकगुरवस्त्रिलघवो वा, षोडशस्थाने सर्वलघुरिति योजना।

पञ्चाक्षरपताका यथा–

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	१०	२०	२८	
	९	१८	१४	३०	
	१७	७	२२	३१	
		११	२६		
		१९	२५		
		१३	२३		
		२१	२७		
		२५	२९		

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

षडक्षरपताका यथा–

१	२	४	८	१६	३२	६४
	३	६	१२	२४	४८	
	५	१०	२०	४०	५६	
	९	१८	३६	२८	६०	
	१७	३४	१४	४४	६२	
	३३	७	२२	५२	६३	
		११	३८	३०		
		१९	२६	४६		
		३५	४२	५४		
		१३	५०	५८		
		२१	१५	३१		
		३७	२३	४७		
		२५	३९	५५		
		४१	२७	५९		
		४९	४३	६१		
			५१			
			२९			
			५३			
			४५			
			५७			

अनयोरेकद्व्यादिगुरुस्थानं पूर्ववदेव वक्तव्यम्।

इति पताकोद्भावनिका॥

अथ मात्रामेरुप्रस्तारः।

तत्रैककलद्विकलत्रिकलादिषु कति सर्वगुरवः कति चैकगुर्वादय इति बुभुत्सायां तद्बोधार्थं तत्प्रस्तारः। यथा–उपर्येककोष्ठं लिखित्वा तदधः कोष्ठद्वय-युतं पङ्क्तिद्वयं तदधः कोष्ठत्रययुतं पङ्क्तिद्वयं ततः कोष्ठचतुष्टययुतं पङ्क्तिद्वयं इत्येवंरूपेण यावदिच्छमेकैकं कोष्ठं वर्धयित्वा पङ्क्तिद्वयं द्वयं लेख्यम्। एवं कृते उपरि कोष्ठके एकाङ्को देयः सर्वपङ्क्त्यन्तकोष्ठे च स एव देयः, पङ्क्त्यादिकोष्ठेषु एकान्तरेण द्व्यादयोऽङ्का वृद्ध्या देयाः। यथा–प्रथमपङ्क्तिप्रथमकोष्ठे।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

| | | |

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ मात्राखण्डमेरुः।

यद्वा मात्रावृत्तेषु कत्येकगुरवः कति द्विगुरव इत्यादिज्ञानार्थं खण्डमात्रामेरुः कार्यः। यथा–उपर्येकः कोष्ठो लेख्यः, तदधो दक्षिणर्थं वामतो वातिक्रान्तैककोष्ठकं कोष्ठद्वयवत्पङ्क्तिद्वयम्। तदधस्तथैव कोष्ठत्रयवत्पङ्क्तिद्वितयम्। तदधस्तथैव कोष्ठचतुष्टयवत्पङ्क्तिद्वयम्, तदधः कोष्ठपञ्चकोपेतपङ्क्तिद्वयमित्येवंप्रकारेण यावदिच्छं कुर्यात्। एवं कोष्ठेषु लिखतेषु कोष्ठबहिर्निर्गमप्रदेशेऽन्त्यकोष्ठेषु एकद्वि–एकत्र्येकचतुरादिक्रमेणैकान्तरेणैकोत्तरवृद्ध्याङ्का देयः, द्वितीयप्रदेशे–ऽन्त्यकोष्ठेषु सर्वत्रैकाङ्का देयाः। मध्यकोष्ठे तु स्वोपरि कोष्ठाङ्केन तदुपरि कोष्ठपुरःस्थितकोष्ठाङ्कमेकीकृत्य पूर्ववल्लिखेत्। तथा–

						१	१
					१	१	२
					२	१	३
				१	३	१	५
				३	४	१	८
			१	६	५	१	१३
			४	१०	६	१	२१
		१	१०	१५	७	१	३४
		५	२०	२१	८	१	५५
	१	१५	३५	२८	६	१	८६
	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४
१	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३
७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७
१ २८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०
८ ८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	६८७

अत्र प्रथमपङ्क्तावेकमात्रस्य न्यासः। द्वितीयपङ्क्तौ द्विकलस्य, तृतीयायां त्रिकलस्येत्येवं पूर्ववन्न्यासः। सर्वगुर्वेकगुर्वादिकथनं च पूर्ववदेव कार्यम्। प्रतिपङ्क्तिप्रस्तारसङ्ख्याज्ञानार्थं तत्तत्पङ्क्तिस्थान्सर्वानङ्कानेकीकृत्य सिद्धमङ्कमेकाङ्कात्परतो बहिर्लिखेत्। मात्रामेरौ मात्राखण्डमेरौ च सम्मतिः।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

आदावेकं न्यसेत्कोष्ठं तदधः पङ्क्तियुग्मके।
द्वौ द्वौ च तदधस्त्रींस्त्रीनेवं रूपेण वर्धनम्॥
अन्तकोष्ठेषु सर्वेषु प्रथमाङ्कं न्यसेत्सुधीः।
आदौ चैकं ततो द्वौ च पुनश्चैकं ततस्त्रयम्॥
एकान्तरं च वृद्धाङ्कमेवं रूपेण पूरणम्।
मध्यकोष्ठं ततः प्राज्ञैः पूरणीयं शिरःस्थितैः॥
शिरःस्थितोर्ध्वकाग्राङ्कमेकीकृत्य प्रपूरयेत्।
एवं क्रमेण सिद्धः स्यान्मात्रामेरुर्न संशयः॥ ७॥
इति खण्डमात्रामेरुः॥

तारा—उद्दिष्ट प्रत्यय के विवेचन के अनन्तर क्रमिक 'एकद्व्यादिलग' क्रिया प्रत्यय का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है। 'एकद्व्यादिलग' क्रिया उसे कहते हैं जिस प्रक्रिया के द्वारा विविध वृत्तों के प्रत्येक भेद में प्रयुक्त गुरु-लघु वर्णों की संख्या ज्ञात होती है। अर्थात् अमुक वृत्त के प्रत्येक भेद में कितने गुरु एवं कितने लघु वर्णों का प्रयोग हुआ है।

इस 'एकद्व्यादिलगक्रिया' प्रक्रिया की विधि यह है कि जिस वृत्त के भेदों के समस्त स्वरूपों में एक लघु के कितने भेद हैं और दो लघु के कितने, तीन लघु के कितने; इसी प्रकार एक गुरु के कितने, दो गुरु के कितने और तीन गुरु के कितने भेद हैं? यह ज्ञात करना हो कि सर्वप्रथम उस वृत्त की वर्णसंख्या क्या है। उस संख्या में एक अंक का योग कर दें। फिर उन अंकों को एकाङ्क में ऊपर से नीचे तक क्रमशः लिख दें। इन ऊपर से नीचे तक लिखे अंकों में वृत्त की जो अंक-संख्या हो उसे १-२-३-४ के क्रम से नीचे से ऊपर तक जोड़ते जायं, सबसे अन्त का एक अंक छोड़ते जायं अर्थात् उसमें न जोड़े। इन सबका जोड़ उन्हीं के सामने लिखते जायं। इस प्रकार जो जोड़ी हुई संख्या आवे, उसे ऊपर से नीचे की ओर अङ्क के माध्यम से यह समझना चाहिए कि सर्वप्रथम १ संख्या वाला भेद सर्व गुरु वाला है उसके नीचे-नीचे क्रम से जो संख्या आवे उतने भेद लघु के हैं। इसी प्रकार नीचे ऊपर की ओर क्रम-संख्या के अनुसार सब से नीचे वाला १ सर्व लघु भेद जाने। पुनः ऊपर-ऊपर के क्रम से जो संख्या आवे उतने भेद गुरु वर्ण के समझें। उदाहरण से माध्यम प्रक्रिया स्पष्ट समझ लें।

उदाहरण—जैसे ज्ञात करना हो कि चतुरक्षर वृत्त के कितने भेद एक गुरु के दो गुरु के तथा तीन गुरु के हैं। और इसी प्रकार कितने भेद एक लघु, दो लघु तथा तीन लघु के हैं तो सर्वप्रथम वर्णसंख्या ४ ज्ञात हो गई। इसमें एक और मिला दें तो ५ पाँच हो गया। अब इन पाँचों अंकों को एकाङ्क में नीचे ऊपर क्रम से लिख दें, पुनः इन अंकों के सामने जितने वर्ण वृत्त में हैं। क्रमशः नीचे से ऊपर की ओर १-२-३-४ लिख दें। तत्पश्चात् ऊपर-ऊपर की संख्या में इनका

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

योग कर कुछ दूर ऊपर लिखते चलें। अन्तिम वाली संख्या छोड़ दें। इस प्रकार योग की जो संख्या आयेगी उसी अनुसार सर्वोपरि वाला एक सर्वगुरु और सबसे नीचे-वाला १ सर्वलघु का हुआ तथा ऊपर से नीचे की संख्या के उतने भेद लघु तथा नीचे से ऊपर वाले संख्या के उतने भेद गुरु के जानें।

सारिणी इस प्रकार है–

चतुरक्षर वृत्त

१	एक भेद सर्वगुरु वाला
१ ४	चार भेद एक लघु वाले
१ ३ ६	छः भेद दो लघु वाले
१ २ ३ ४	चार भेद तीन लघु वाले
१ १ १ १ १	एक सर्व लघु वाला।

१ एक सर्वगुरु वाला ऽ ऽ ऽ ऽ	सर्वगुरु
४ चार एक लघु वाले। ।ऽऽऽ, ऽ।ऽऽ, ऽऽ।ऽ, ऽऽऽ।	तीन गुरु
६ छः दो लघु वाले ।।ऽऽ, ।ऽ।ऽ, ऽ।।ऽ, ।ऽऽ।, ऽ।ऽ।, ऽऽ॥	दो गुरु
४ चार तीन लघु वाले ।।।ऽ, ऽ।।।, ।ऽ।।।।ऽ।	एक गुरु
१ एक सर्वलघु वाला ।।।।।	सर्व लघु
१६ सोलह।	

इस प्रकार चतुरक्षर प्रतिष्ठा वृत्त के समस्त भेद सोलह हुए। तथा उपर्युक्त गुरु लघु स्वरूप भेद बने। इसी प्रक्रिया का नाम छन्दःशास्त्र में **एकद्व्यादिलग-क्रिया** कहा गया है। जो वृत्त के गुरु-लघु स्वरूप ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त होता है॥ ७॥

लगक्रियाङ्कसन्दोहे भवेत्संख्याविमिश्रिते।
उद्दिष्टाङ्कसमाहारः सैको वा जनयेदिमाम्॥ ८॥

नारायणी–अथ क्रमप्राप्तां संख्यामाख्याति–लगक्रियाङ्केति। लगक्रियायां पूर्वोक्तायां येऽङ्काः सिद्धास्तेषां समूहे मिलिते योजिते सति योऽङ्कः सा सङ्ख्या भवेत्। त्र्यक्षरे यथा–१. ३. ३. १. एतेषामेकत्रित्र्येकाङ्कानां मेलनेऽष्टौ प्रस्तारः। चतुरक्षरे च–१. ४. ६. ४. १. एषामेकचतुःषट्चतुरेकाङ्कानां मेलने षोडश। प्रकारान्तरेण सङ्ख्यामाह–उद्दिष्टेति। पूर्वोक्तानामुद्दिष्टानामङ्कानां सैक एकसहितः समाहारो मेलनम्, अथवेमां सङ्ख्यां जनयेदुत्पादयेत्। तद्यथा–त्र्यक्षरे एकद्वित्रिरूपा उद्दिष्टाङ्काः सप्त एकमेलनेऽष्टौ सा तस्य सङ्ख्या, चतुरक्षरे च एकद्वि-चतुरष्टाङ्कमेलने १५ सैका षोडश सा तस्य सङ्ख्या। एवं प्रकारद्वयमन्यत्राऽप्युन्नेयम्। इदं चोपलक्षणम्। प्रस्तारगणनयापि संख्याज्ञानसिद्धेः, प्रथमवृत्तसंख्याद्विगुणोत्तरो-त्तरवृत्तसंख्येति सिद्धे एव। अर्धसमविषमयोरपि पूर्वोक्तरीत्या लगक्रियोद्दिष्टा-ङ्कमेलनेन संख्या ज्ञेयेति। सङ्ग्रहपद्यं तु सङ्ख्याध्वनोरेकमेव वक्ष्यते।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

अथ सूक्तोक्तः सङ्ख्यानप्रकारः

सूत्रे तु संख्याऽऽनयनेऽन्यः प्रकार उक्तः। यथा–यत्सङ्ख्यां जिज्ञासेत तज्जातिनिष्ठाक्षरसङ्ख्याङ्के भूमौ स्थापिते अर्धमपनयेत्। अर्धकरणे भागद्वयस्य कृतत्वाद्या सङ्ख्या लब्धा तां भूमौ पृथक् स्थापयेत्। अवशिष्टार्धसङ्ख्या यदि समा ततस्तस्यामर्धितायां द्वयङ्कस्य लब्धस्य पूर्ववल्लब्धाङ्काधस्तान्न्यासः कार्यः। एवमुत्तरत्र। यदा त्वर्धसंख्या वृत्ताक्षरसंख्यैव वा विषमा, तदार्धीकरणाशक्तेरेकं रूपमपनीय शून्यं पूर्ववद् द्वयङ्कादधः स्थापयेत्। एवमेकपर्यन्तकरणेऽधःस्थित-शून्यस्थाने एकांकं निधाय द्विगुणयेत्। तौ द्वौ तस्योपरिष्टादर्धस्थाने निधाय तया संख्यया सैव गुणनीया, ततो गुणिताङ्कमुपरिस्थाने निक्षिपेत्, तत्स्थानं यदि शून्यस्य तदा तन्न्यस्तमङ्कं द्विगुणयेत्, यदि त्वर्धस्थानं तदा तयैव संख्यया गुणयेत्, एवमुपरिस्थानपर्यन्ते कृते योऽङ्को जातः स इष्टवृत्तसंख्या ज्ञेयेति। अत्रोदाहरणम्–गायत्रे षट्संख्यायामर्धेऽपनीते द्वयङ्के स्थापिते अवशिष्टास्त्रयस्तेषु रूपमपनीय द्वयङ्काधः शून्यं स्थाप्यम्। यथा–२।० अवशिष्टद्विसङ्ख्यातोऽर्धेऽपनीते शून्याधो द्विसंख्या लेख्या। यथा–२।०।२। ततोऽवशिष्टं रूपं तदपनीय द्वयङ्काधः शून्यं स्थाप्यम्। यथा–२।०।२।०, अधः शून्ये एकांकं द्विगुणं न्यस्य तं द्वयङ्कमर्धस्थाने स्थितमपनीय तत्स्थाने निधाय तं तावद्गुणं कुर्यात्। ततो द्वौ द्वाभ्यां गुणितौ चत्वारो भवन्ति तेषामुपरिष्टाच्छून्यस्थाने तं निधाय शून्यस्थानाङ्कत्वाद् द्विगुणयेत्। ततोऽष्टौ भवन्ति। तानप्यर्धस्थाने निधाय तावद्गुणान्कुर्यात्, तेनाष्टावष्टभिर्गुणिता-श्चतुःषष्टिर्भवन्ति गायत्र्यां समवृत्तानि। एवं सर्वत्र समवृत्तसंख्या ज्ञेया। सा च तत्र तत्र दर्शितैव। यदा तु शुद्धार्धसमवृत्तसंख्या तयैव गुणनीया सिद्धेऽङ्के समसङ्ख्यां पातयेत्। अवशिष्टा शुद्धार्धसमसंख्या भवति। यथा त्र्यक्षरे समसङ्ख्या ८ तैरेव गुणिताश्चतुःषष्टिस्तन्मध्येऽष्टस्वपनीतेषु षट्पञ्चाशच्छुद्धार्धसमानि। एवं सर्वत्र। यदा तु तत्तज्जातिषु शुद्धविषमसङ्ख्या जिज्ञासिता तदा सङ्ख्यायां तयैव गुणितायां या सञ्जाता तां पुनस्तयैव गुणयेत्। सिद्धेऽङ्के समार्धसमे अपनीय शिष्टा संख्या शुद्धविषमस्य। यथा–त्र्यक्षरे समानि (८) तैरेव गुणने चतुःषष्टि ६४ पुनरेतयैव तद्गुणने चत्वारि सहस्राणि षण्णवतिः। अङ्कतोऽपि ४०९६। समार्धसममेलने ६४ एतेष्वपनीतेष्ववशिष्टं ४०३२ इयं शुद्धा विषमसङ्ख्या। यदा तु समार्धसम-विषमाणि समुदितानि, तदा समार्धसमे नापनेये। पूर्वैव तत्संख्या। एवमन्यत्राऽपि ज्ञेयम्। यदैतज्जात्यन्तानि कति समवृत्तानि इति संख्याजिज्ञासा तदा विवक्षित-प्रान्तछन्दःसमवृत्तसंख्यां द्विगुणयेत्। तन्मध्ये द्वावपनयेत्। शिष्टा विवक्षितजाति-पर्यन्तानां समवृत्तसंख्या। यथा चतुरक्षरे षोडश समवृत्तानि तेषां द्वैगुण्ये द्वात्रिंशत्।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

द्वयोरपनये तदन्तानां सङ्ख्या ३०। एवमुत्कृतेर्भेदाः षट्कोटच्य एकसप्ततिर्लक्षाणि अष्टौ सहस्राणि अष्टौ शतानि चतुःषष्टिश्चेति। अङ्कतोऽपि ६७१०८८६४। एतद्द्वैगुण्ये एतस्य द्वयोर्हानि च त्रयोदशकोट्यो द्वाचत्वारिंशल्लक्षाः सप्तदश-सहस्राणि सप्तशतानि षड्विंशत्यधिकानि। अङ्कतोऽपि १३४२१७७२६। एतावन्ति सर्वाणि समवृत्तानि। तदुक्तम्–

विवक्षितान्तजातेस्तु भेदा द्विर्गुणितास्ततः।
द्विहीनाः सर्वसंख्यायां ते स्युरुक्तादिजा इति॥ ८॥

इति सङ्ख्यानम्॥

तारा–एकद्व्यादिलगक्रिया प्रत्यय के विवेचन करने के पश्चात् संख्या प्रत्यय का क्रम आता है। अतः सम्प्रति क्रमप्राप्त संख्या प्रत्यय का विवेचन प्रस्तुत कर रहे हैं।

संख्या प्रत्यय उसे कहते हैं, जिस प्रक्रिया के द्वारा किसी वृत्त के समस्त भेदों का ज्ञान हो सके। उस संख्या प्रत्यय की प्रक्रिया यह है कि लगक्रिया से प्राप्त समस्त फलिताङ्कों का एक साथ योग कर दें। जो संख्या योग करने पर आवे, उतने ही भेद उस वृत्त के जानें।

अथवा इस संख्या प्रत्यय की दूसरी विधि यह है कि उद्दिष्ट प्रत्यय में अङ्कित समस्त अङ्कों का योग कर दें। और इस योग से प्राप्त संख्या में एक अंक और जोड़ दें। जोड़ कर जो संख्या आवे, वही संख्या इस वृत्त के समस्त भेदों की होगी। इसी प्रक्रिया का नाम **संख्या प्रत्यय** है। यथा–

उदाहरण–जैसे चतुरक्षर वृत्त प्रतिष्ठा के समस्त भेदों की संख्या यदि ज्ञात करनी हो तो पूर्वनिर्दिष्ट लगक्रिया से प्राप्त समस्त फलिताङ्कों का योग कर दें। जो इस प्रकार है–

१ भेद	सर्वगुरु वाला
४ भेद	एक लघु वाले
६ भेद	दो लघु वाले
४ भेद	तीन लघु वालें
१ भेद	सर्व लघु वाला
१६	योग सोलह आया।

उक्त प्रकार से उत्तर मिला–प्रतिष्ठा नामक चतुरक्षर वृत्त के समस्त भेदों की संख्या १६ सोलह होती है। इसी प्रक्रिया का नाम संख्या प्रत्यय है। वृत्तों के समस्त भेदों की संख्या ज्ञात करने के लिए इसका उपयोग होता है।

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

इसी संख्या प्रत्यय के ज्ञात करने की दूसरी विधि यह है कि उद्दिष्ट प्रत्यय में निर्दिष्ट समस्त अङ्कों के योग में एक और मिला दें। यथा–

चतुरक्षर प्रतिष्ठा वृत्त के उक्त भेदों में से किसी एक का उद्दिष्टाङ्क निकाल लें। उसमें अङ्कित अङ्कों का योग करके उस संख्या में एक और जोड़ दें। जैसे–

१ २ ४ ८ = १५ + १ = १६

। । ऽ ऽ इस विधि से भी उत्तर सोलह प्राप्त हो गया॥ ८॥

संख्यैव द्विगुणैकोना सद्धिरध्वा प्रकीर्तितः।
वृत्तस्याङ्गुलिकी व्याप्तिरधः कुर्यात्तथाङ्गुलिम्॥ ९॥

नारायणी–अथाऽध्वयोगमाह–संख्यैवेति। या समादिवृत्तानां तत्तज्जातिषु संख्या पूर्वमुक्ता सा द्विगुणा एको नेति सद्भिः प्रस्तारादिज्ञैरध्वा वृत्तप्रस्तारख्याप्यः प्रदेशस्तत्तज्जातिषूक्तः स्वस्वग्रन्थेषु। त्र्यक्षरे यथा संख्याऽष्टरूपा द्विगुणा षोडश एकोना पञ्चदश भवन्ति सोयं तस्य अध्वा पञ्चदशाङ्गुलायां भुवि तद्वृत्तं प्रस्तार्यते इति भावः। चतुरक्षरेऽपि तथाकरणे एकत्रिंशत् स तस्य। एवमर्धसमविषमयोः। उक्तेऽर्थे उपपत्तिमाह–वृत्तस्येति। वृत्तस्य=वृत्तप्रस्तारस्य व्यासतो व्याप्तिरङ्गुलिमिता। वृत्ताधश्चाङ्गुलिं कुर्यात्। त्यक्तामिति शेषः। अङ्गुलायामा गुरुलघवः कार्याः, प्रस्तारान्तरालं चाङ्गुलिमितमेव कार्यमित्यर्थः। अत्र चोद्दिष्टाङ्कलेखनाय मध्येऽङ्गुलावस्थापनम्। अङ्गुलन्यूनाधिकपरिमाणानां गुरुलघूनामुद्दिष्टाङ्कानां च लेखनं सम्भवेऽप्यनुगतस्याशास्त्रार्थत्वादगुणमिति सिद्धचर्थमङ्गुलिनियमनं कृतं न तु व्यसनिमात्रतया। न च प्रथमप्रस्तारेऽप्युद्दिष्टकरणायोपर्यङ्गुलमितभूमिग्रहे पूर्णैव द्विगुणा सङ्ख्याऽध्वा स्यात् न त्वेकोनेति वाच्यम्। प्रथमस्य सर्वत्र सर्वगुरुत्वेनैक नियमादुद्दिष्टकरणानपेक्षणात्। न चैवमन्तिमस्यापि सर्वलघुत्वेन ज्ञातत्वाद् द्वचूना द्विगुणा सङ्ख्याऽध्वा स्यादिति वाच्यम्। कोट्यवधिकप्रस्तारेषु सर्वलघोः सामान्यत अन्त्यत्वज्ञानेऽपि कथितोऽयमिति विशेषाज्ञाने गणनाव्यतिरेकेणापि तावत्सङ्ख्याक इति ज्ञानार्थमुद्दिष्टकरणापेक्षणात्। एतेनैतदपास्तं यत्केचिदाहुः– 'षष्ठः प्रत्ययोऽध्वयोगपरिच्छित्तिः इत्येके सोऽल्पफलत्वात्पुरुषेच्छानुविधायित्वेनानियतत्वाच्च नोक्तः' इति॥ ९॥ संख्याध्वनोः संङ्ग्रहपद्यम्–

सैकोद्दिष्टाङ्ककूटाल्लगकरणगताङ्कैर्विमिश्रैः परेषां।
पूर्वद्वैगुण्यतो वा भवति गणनया प्रस्तृतीनां च संख्या॥
वृत्ते वृत्तान्तरे चाङ्गुलिपरिमितता स्यात्तदैकेन हीना।
सङ्ख्यैव द्विःकृताध्वा विधिरयमुदितो भट्टनारायणेन॥
इत्यध्वयोगः॥ ९॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

तारा—संख्या प्रत्यय विवेचन के अनन्तर सर्वान्ते षष्ठ प्रत्यय अध्वा का क्रम है। इसका विवरण निर्दिष्ट प्रकार से प्रस्तुत है।

वृत्त के भेदों की संख्या द्विगुणित करके, इस संख्या में से एक कम कर दें। इसी प्रक्रिया का नाम विद्वानों ने अध्वा कहा है। इसका अभिप्राय यह है कि वृत्तों के भेदों का जब प्रस्तार-लेखन होता है तो उस लेखन-प्रक्रिया में विद्वानों ने कुछ स्थान-परिमाण निश्चित किया है। क्योंकि वृत्त के वर्णों के गुरु-लघु विकार उनके नीचे निर्दिष्ट करने पड़ते हैं, उनके लिए कुछ रिक्त स्थान अपेक्षित होता है। अतः एक अङ्गुलि परिमाण स्थान उसके लिए विद्वानों ने कल्पित किया है, तात्पर्य है—जितने स्थान में गुरु-लघु विकार निर्दिष्ट किये जा सकें उतना स्थान रिक्त होना चाहिए। सामान्य बोध के लिए उसे एक अङ्गुल मान लिया गया है। अध्वा का अर्थ मार्ग करने पर भी स्थान मार्ग अध्वा प्रत्यय कहा जाता है।

अध्वा प्रत्यय की प्रक्रिया उदाहरण से स्पष्ट समझें। यथा—चतुरक्षर प्रतिष्ठा वृत्त के समस्त भेद हुए १६ (सोलह)। इसे द्विगुण करने पर ३२ (बत्तीस) संख्या प्राप्त हुई। इसमें से १ घटा दें तो ३१ (इकतीस) संख्या हुई। अब इन इकतीस भेदों के प्रस्तार-लेखन के लिए रिक्त स्थान एक अङ्गुलि परिमाण छोड़ते चलें। सम्पूर्ण के लिए ३१ अङ्गुलि परिमाण है।

१ प्रस्तार स्थान ऽऽऽ
२ रिक्त स्थान ×××
३ प्रस्तार स्थान । ऽऽ
४ रिक्त स्थान ×××
५ प्रस्तार स्थान ऽ । ऽ
६ रिक्त स्थान ×××
७ प्रस्तार स्थान ।। ऽ

इस प्रकार प्रस्तार-लेखन प्रकार में अध्वा प्रत्यय का उपयोग सर्वत्र अपेक्षित है। इसी प्रक्रिया का नाम अध्वा प्रत्यय है॥ ९॥

वंशेऽभूत्कश्यपस्य प्रकटगुणगणः शैवसिद्धान्तवेत्ता
विप्रः पव्येकनामा विमलतरमतिर्वेदतत्त्वावबोधे।
केदारस्तस्य सूनुः शिवचरणयुगाराधनैकाग्रचित्तः
छन्दस्तेनाभिरामं प्रविरचितमिदं वृत्तरत्नाकराख्यम्॥ १०॥

इति श्रीकेदारभट्टविरचिते वृत्तरत्नाकरे षष्ठोऽध्यायः॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

नारायणी—इदानीं निर्व्यूढप्रतिज्ञाभारो ग्रन्थकारः स्वग्रन्थे श्रोतृभिः प्रवृत्ति-विशेषः कार्य इति सूचनार्थं स्ववंशपित्रादिगुणप्रतिपादनपूर्वकं ग्रन्थकृतिमुपसंहरति-वंश इति। कश्यपस्य महर्षेर्वंशे गोत्रे प्रकटः प्रसिद्धो गुणसमुदायो यस्य स तादृशः पव्येकाख्यो विप्रो ब्राह्मणोऽभूत्। कीदृक्। शिवो देवता येषां ते शिवपूजकाः शैवास्तत्सिद्धान्तस्य वेत्ता ज्ञाता। शैवागमवेत्तेत्यर्थः। तथा वेदानां तत्त्वार्थस्याऽबोधि-तस्यार्थस्य बोधे ज्ञाने निर्मलतरबुद्धिस्तस्य पव्येकस्य पुत्रः केदारनामा। कीदृक्। शिवचरणयुगलसेवामात्रैकाग्रचेतास्तेन केदारेणाभिरामं मनोज्ञं संक्षेपेणैव लक्ष्यलक्ष-णयोरभिधानात्, ग्रन्थान्तरेभ्योऽतिशयवत्। वृत्तरत्नाकरनामकं छन्दःलक्षणया छन्दःशास्त्रप्रकरणं प्रविरचितं कृतम्। यद्यपि 'कर्तरि च' (पा० सू० २-२-१६) इति कर्त्रर्थतृजन्तस्य षष्ठ्या सह समासो निषिद्धस्तथापि 'जनिकर्तुः प्रकृति' (पा० सू० १-४-३०) इति ज्ञापकेन निषेधस्याऽनित्यताज्ञापनात् शैवसिद्धान्तवेत्तेति षष्ठीसमासः। केचितु तृन्नन्तेन समासः इति तन्न; तृनो योगे 'न लोकाव्ययनिष्ठा-खलर्थतृनाम्' (पा० सू० १-३-६९) इति षष्ठीनिषेधात्। इति सर्वं मनोहरम्॥ १०॥

भट्टश्रीनागनाथात्समजनि विबुधश्चाङ्गदेवाख्यभट्टः
प्रासोष्टासौ तनूजं रघुपतिनिरतं भट्टगोविन्दसंज्ञम्॥
विश्वामित्राऽन्ववायाम्बुधिविधुरधिकं वर्धते तत्तनुजो
विद्याब्धौ लब्धपारः प्रथितपृथुयशा भट्टरामेश्वराख्यः॥
नारायणेन सुधिया काश्यां निवसता सता॥
वृत्तरत्नाकरे टीका तद्भुवा रचिताऽञ्चिता॥
ग्रन्थेऽस्मिन् गुणगणवत्त्वमुच्यते चेत्
स्वं कार्यं गुणगणवन्न मन्यते कः॥
तत्सन्तः शिरसि कृताञ्जलिस्तु याचेत्
शोध्यं तत्सदसदिहोदितं मया यत्॥
याति विक्रमशके द्विखषड्भू(१६०२)सम्मिते सितगकार्तिकरुद्रे॥
ग्रन्थपूर्तिसुकृतं किल कुर्मो रामचन्द्रपदपूजनपुष्पम्॥

इति श्रीविद्वन्मुकुटमाणिक्यश्रीभट्टरामेश्वरसूरिसूनुनारायणभट्ट-विरचितायां वृत्तरत्नाकरटीकायां प्रस्ताराध्यायः षष्ठः समाप्तः॥

तारा—सदाचारादि गुणों से सम्पन्न, शैव सिद्धान्तों का सूक्ष्म वेत्ता, वेद के तत्त्वार्थों को ज्ञात करने में अतीव विमलमति वाला पव्येक नामक एक विप्र कश्यप ऋषि के वंश में उत्पन्न हुआ। उनका पुत्र भगवान् शिव के चरणयुगलों की आराधना में दत्तचित्त वाले केदार नामक विद्वान् ने अनुपम इस वृत्तरत्नाकर नामक छन्दःग्रन्थ की रचना की।

॥ इति शम्॥

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust

1. शिवराजविजयः (प्रथमो विराम) व्याख्याकार : श्रीनिवास शर्मा 2000 40.00
2. वृत्तरत्नाकरः (सम्पूर्ण) नारायणी-तारा-संस्कृत हिन्दी व्याख्योपेतः, पं० सत्यानारायण शास्त्री खण्डूड़ी 2000 40.00
3. मध्यमव्यायोगः महाकवि भास प्रणीतः, संस्कृत-हिन्दी-भूमिकाऽन्वय-शब्दार्थ-संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेतः, सम्पादक : डॉ० त्रिलोकीनाथ द्विवेदी 2000 25.00
4. मुण्डकोपनिषद् : शाङ्करभाष्य-हिन्दीव्याख्या-मेक्समूलरकृताङ्ग्ला-नुवादैः विस्तृत भूमिकाया च संवलिता : हिन्दी व्याख्याकार : पं० श्री जगन्नाथ शास्त्री तैलङ्ग 2000 35.00
5. ईशावास्योपनिषद्-शाङ्करभाष्य : हिन्दी आङ्ग्लानुवादसहितः शशितिवारी 50.00
6. कठोपनिषद्-शाङ्करभाष्य : हिन्दी आङ्ग्लानुवादसहितः रामरंग शर्मा, तृतीय संस्करण 1999 35.00
7. तर्कसंग्रहः (अन्नम्भट्टकृत) मूल दीपिका संस्कृत व्याख्या आङ्ग्लानुवादसहितः, के० पी० पर्व 1999 40.00
8. तर्कसंग्रह (श्रीमदन्नम्भट्टविरचितः) न्यायबोधिनी संज्ञा हिन्दी व्याख्या सहित नर्वदेश्वर तिवारी 1997 35.00
9. वैदिक साहित्य का इतिहास : डॉ० जयदेव वेदालंकार 50.00
10. वैदिक साहित्य का इतिहास : डॉ० कुँवर लाल जैन 40.00
11. वेदान्तसार (श्रीसदानन्दविरचितः) श्री रामतीर्थप्रणीतं विद्वन्मनोरञ्जनी समाख्या व्याख्या हिन्दी रूपान्तर व रेखा चित्रों तथा विस्तृत भूमिकादिभिश्च समलंकृतः पं० रामगोविन्द शुक्ल 2000 50.00
12. सांख्यकारिकाः (ईश्वरकृष्णविरचिता) अन्वय गौड़पादभाष्य अन्वय हिन्दी, व्याख्या सहितः डॉ० बैजनाथ पाण्डेय 1998 20.00
13. चन्द्रालोकः (पीयूवर्षश्रीजयदेवविरचितः) सम्पूर्ण संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहितः डॉ० त्रिलोकीनाथ द्विवेदी अजिल्द 60.00, सजिल्द 80.00
14. चन्द्रालोकः (पीयूवर्षश्रीजयदेवविरचितः) (1-4 मयूख) संस्कृत हिन्दी व्याख्याः त्रिलोकीनाथ द्विवेदी 20.00
15. कादम्बरी : (बाणभट्टस्यकृतं) (शुकनासोपदेश) भानुचन्द्र सिद्धचन्द्र टीका भाषानुवाद व्याकणिक विशेषता सरल संस्कृत-सरल संस्कृत व्याख्यासमन्वितः श्रीमती सुदेश नारंग, द्वितीय संस्करण 1998 30.00
16. किरातार्जुनीयम् : (महाकविभारविकृतं) (प्रथम एवं द्वितीय सर्ग) संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहितः डॉ० अमलधारी सिंह व डॉ० कान्ता भाटिया 40.00

भारतीय विद्या प्रकाशन

1, यू०बी०, जवाहर नगर,
बंगलो रोड, दिल्ली-7.
दूरभाष : (011) 3971570

पोस्ट बाक्स नं० 1108, कचौड़ी गली,
वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : (0542) 392376

Kashi Maharani Collection, Ramnagar Fort, Varanasi